संसार में जितनी भी पूजा और ज्ञान प्रचलित है । ये ज्यादातर काल पूजा है । और काल माया के प्रभाव से इसी में सन्तमत यानी सत्यपुरुष का भेद । सतलोक या अमरलोक का भेद । असली हँस ज्ञान । आत्मा का वास्तविक

ज्ञान घुल मिल गया है । इसी स्थिति को साफ़ करने के लिये मैं " **अनुराग सागर** " से वाणी यानी कबीर धर्मदास संवाद को प्रकाशित कर रहा हूँ । मैं अपने सभी पाठकों से कहना चाहूंगा । आपने बहुत पुस्तकें पढी होंगी । एक बार इसको पढें । ये आपकी आंखे खोल देगी ।

फ़िर भी यदि आप एक ही बार में आसानी से इस मायाजाल और भेद को जानना चाहें । तो सरल हिन्दी में लिखी 150 रुपये मूल्य की ये पुस्तक अवश्य पढें । यदि आप इसकी गहरायी समझ गये । तो जीवन का लक्ष्य और दुनियाँ में फ़ैला धार्मिक मकङजाल आपको आसानी से समझ में आ जायेगा । मेरी भाषा में आपके दिमाग में भरा जन्म जन्म का धार्मिक कचरा साफ़ होकर सच्चे प्रभु से लौ लग जायेगी । जो सबका उद्‌धारकर्ता है ।

प्रस्तुतकर्ता: मुक्तानन्द स्वामी परमहंस

www.supremeblissresearchfoundation.org http://searchoftruth-rajeev.blogspot.in/

www.facebook.com/groups/supremebliss/ https://www.facebook.com/rajeev.kul.9

विषय सूची

कबीर साहब और धर्मदास

सदगुरु कबीर साहब के शिष्य धनी धर्मदास जी का जन्म बहुत ही धनी वैश्य परिवार में हुआ था । बाद में कबीर साहब की शरण में आकर उनसे परमात्म ज्ञान लेकर धर्मदास ने अपना जीवन सार्थक और परिपूर्ण किया । इस तरह उन्हें धर्मदास की जगह धनी धर्मदास कहा जाने लगा । धर्मदास वैष्णव थे । और ठाकुर पूजा किया करते थे । अपनी मूर्तिपूजा के इसी कृम में धर्मदास मथुरा आये । जहाँ उनकी भेंट कबीर साहब से हुयी । धर्मदास जी दयालु व्यवहारी और पवित्र जीवन जीने वाले इंसान थे । अत्यधिक धन संपत्ति के बाद भी अहंकार उन्हें छूआ तक नहीं था । वे अपने हाथों से स्वयँ भोजन बनाते थे । और पवित्रता के लिहाज से जलावन लकङी को इस्तेमाल करने से पहले धोया करते थे । एक बार इसी समय में जब वह मथुरा में भोजन तैयार कर रहे थे । उसी समय कबीर साहब से उनकी भेंट हुयी । उन्होंने देखा कि भोजन बनाने के लिये जो लकङियाँ चूल्हे में जल रही थीं । उसमें से ढेरों चीटिंयाँ निकलकर बाहर आ रही थी । धर्मदास ने जल्दी से शेष लकङियों को बाहर निकालकर

चीटिंयों को जलने से बचाया । उन्हें वहुत दुख हुआ । वे अत्यन्त व्याकुल हो उठे । लकड़ियों में जलकर मर गयी चीटियों के प्रति उनके मन में बेहद पश्चाताप हुआ । वे सोचने लगे । आज मुझसे महापाप हुआ है । अपने इसी दुख की वजह से उन्होंने भोजन भी नहीं खाया । उन्होंने सोचा कि जिस भोजन के बनने में इतनी चीटियाँ जलकर मर गयी हों । उसे कैसे खा सकता हूँ । उनके हिसाब से वह दूषित भोजन खाने योग्य नहीं था । अतः वह भोजन उन्होंने किसी दीन हीन साधु महात्मा आदि को कराने का विचार किया । अतः वो भोजन लेकर बाहर आये । तो उन्होंने देखा । कबीर साहब एक घने शीतल वृक्ष की छाया में बैठे हुये थे ।

धर्मदास ने उनसे भोजन के लिये निवेदन किया ।

इस पर कबीर साहब ने कहा । हे सेठ धर्मदास ! जिस भोजन को बनाते समय हजारों चींटियाँ जलकर मर गयीं । उस भोजन को मुझे कराकर ये पाप तुम मेरे ऊपर क्यों लादना चाहते हो । तुम तो रोज ही ठाकुर जी की पूजा करते हो । फ़िर उन्हीं भगवान से क्यों नहीं पूछ लिया था कि इन लकड़ियों के अन्दर क्या है ?

धर्मदास को बेहद आश्चर्य हुआ कि इस साधु को ये सब बात कैसे पता चली । उस समय तो धनी धर्मदास के आश्चर्य का ठिकाना न रहा । जब कबीर साहब ने वे चीटिंया भोजन से जिंदा निकलते हुये दिखायीं । इस रहस्य को वे समझ न सके ।

उन्होने दुखी होकर कहा । हे बाबा ! यदि मैं भगवान से इस बारे में पूछ सकता । तो मुझसे इतना बङा पाप क्यों होता ।

धर्मदास को पाप के महाशोक में डूबा देखकर कबीर साहब ने अध्यात्म ज्ञान के गूढ रहस्य बताये । जब धनी धर्मदास ने उनका परिचय पूछा । तो कबीर साहब ने अपना नाम सदगुरु कबीर साहब और निवासी अमरलोक (सत्यलोक) बताया । इसके कुछ देर बाद कबीर साहब अंतर्ध्यान हो गये ।

धर्मदास जी को जब कबीर साहब बहुत दिनों तक नहीं मिले । तो वो व्याकुल होकर जगह जगह उन्हें खोजते फ़िरे । और उनकी स्थिति पागल समान हो गयी । तब उनकी पत्नी ने सुझाव दिया ।

तुम ये क्या कर रहे हो ? उन्हें खोजना बहुत आसान है जैसे कि चींटी चींटा गुङ को खोजते हुये खुद ही आ जाते हैं ।

धर्मदास ने कहा - क्या मतलब ?

उनकी पत्नी ने कहा - खूब भन्डारे कराओ । दान दो । हजारों साधु अपने आप आयेंगे । जब वह साधु तुम्हें दिखे । तो उसे पहचान लेना ।

धर्मदास को बात उचित लगी । और वे ऐसा ही करने लगे । उन्होंने अपनी सारी संपत्ति खर्च कर दी । पर वह साधु (कबीर साहब) नहीं मिला ।

बहुत समय भटकने के बाद उन्हें कबीर साहब काशी में मिले । परन्तु उस समय वे वैष्णव वेश में थे । फ़िर भी धर्मदास ने उन्हें पहचान लिया । और उनके चरणों में गिर पङे ।

और बोले - हे सदगुरु महाराज मुझ पर कृपा करें । और मुझे अपनी शरण में लें । हे गुरुदेव मुझ पर प्रसन्न हों । मैं उसी समय से आपको खोज रहा हूँ । आज आपके दर्शन हुये हैं ।

कबीर साहब बोले -हे धर्मदास तुम मुझे कहाँ खोज रहे थे । तुम तो चींटी चींटो को खोज रहे थे । सो वे तुम्हारे भन्डारे में आये । (इस पर धर्मदास को अपनी मूर्खता पर बङा पश्चाताप हुआ..तब उसे प्रायश्चित भावना में देखकर कबीर साहब ने फ़िर कहा)

लेकिन तुम बहुत भागयशाली हो । जो तुमने मुझे पहचान लिया । अब तुम धैर्य धारण करो । मैं तुम्हें जीवन के आवागमन से मुक्त कराने वाला मोक्ष ज्ञान दूँगा ।

इसके बाद धर्मदास निवेदन करके कबीर साहब को अपने साथ बाँधोगढ ले आये ।

इसके बाद तो बाँधोगढ में कबीर साहब के श्रीमुख से आलौकिक आत्मज्ञान सतसंग की अविरल धारा ही बहने लगी । दूर दूर से लोग सतसंग सुनने आने लगे । धर्मदास और उनकी पत्नी आमिन ने महामंत्र की दीक्षा ली । बाँधोगढ के नरेश भी कबीर साहब के सतसंग में आने लगे । और बाद में दीक्षा लेकर वे भी कबीर साहब के शिष्य बने । यहाँ कबीर साहब ने बहुत से उपदेश दिये । जिन्हें उनके शिष्यों ने बाँधोगढ नरेश और धनी धर्मदास के आदेश पर संकलित कर गृंथ का रूप दिया ।

विशेष -- जब भी किसी सच्चे सन्त का प्राकटय होता है । तो कालपुरुष भयभीत हो जाता है कि अब ये जीवों को मोक्ष ज्ञान देकर उनका उद्धार कर देगा । इससे हरसंभव बचाव के लिये वो अपने कालदूत वहाँ भेज देता है । धर्मदास का पुत्र नारायण दास जो कालदूत था । कबीर साहब का बहुत विरोध करता था । लेकिन उसकी एक भी नहीं चली । खुद कबीर साहब के पुत्र के रूप में कमाल कालदूत था । वह भी कबीर का बहुत विरोध करता था । बाद में..कबीर साहब ने धर्मदास को सुयोग्य शिष्य जानते हुये मोक्ष का अनमोल ज्ञान दिया । और साथ ही ये ताकीद भी की ।

धर्मा तोहे लाख दुहाई । सार शब्द बाहिर नहीं जाई ।

इस पर धर्मदास ने कहा ।

सार शब्द बाहिर नहीं जाई । तो हँसा लोक को कैसे जाई ।

तब कबीर साहिब ने कहा - अपना होय तो दियो बतायी ।

काल निरंजन और कबीर का समझौता

धर्मदास ने विनीत होकर कबीर साहब से कहा -हे प्रभो ! अब आप मुझे आप वह वृतांत कहो । जब आप पहली बार इस संसार में आये ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! जो तुमने पूछा है । वह युग युग की कथा है । जो मैं तुमसे कहता हूँ । जब सत्यपुरुष ने मुझे आज्ञा की । तब मैंने जीवों की भलाई के लिये प्रथ्वी की और पाँव बङाया । सतपुरुष को प्रणाम कर मैंने पांव आगे बङाया । और विकराल काल निरंजन के क्षेत्र में आ गया । उस युग में मेरा नाम अंचित था । तब जाते हुये मुझे अन्यायी काल निरंजन मिला । वह मेरे पास आया । और झगङते हुये महाक्रोध से बोला - हे योगजीत ! आप यहाँ कैसे आये हो ? क्या आप मुझे मारने आये हो । हे पुरुष !अपने आने का कारण मुझे बताओ ?

तब मैंने उससे कहा - हे निरंजन सुनो । मैं जीवों का उद्धार करने के लिये सतपुरुष द्वारा भेजा गया हूँ । हे अन्यायी निरंजन ! सुन तुमने बहुत कपट चतुराई की । भोले भाले जीवों को तुमने बहुत भृम में डाला है । और बार बार सताया । सतपुरुष की महिमा को तो तुमने गुप्त रखा । और अपनी महिमा का बङा चङाकर बखान किया । तुम तप्त शिला पर जीव को जलाते हो । और उसे जला पकाकर खाते हुये अपना स्वाद पूरा करते हो । तुमने

ऐसा कष्ट जीवों को दिया । तब ही सतपुरुष ने मुझे आज्ञा दी कि मैं तेरे जाल में फ़ँसे जीव को सावधान करके सतलोक ले जाऊँ । और काल निरंजन के कष्ट से जीव को मुक्ति दिलाऊं । इसलिये मैं संसार में जा रहा हूं । जिससे जीव को सत्यज्ञान देकर जीव को सतलोक भेजूं ।

यह बात सुनते ही काल निरंजन भयंकर रूप हो गया । और मुझे भय दिखाने लगा । फ़िर वह क्रोध से बोला - मैंने 70 युगों तक सतपुरुष की सेवा तपस्या की । तब सतपुरुष ने मुझे तीन लोक का राज्य और उसकी मान बड़ाई दी । फ़िर दोबारा मैंने 64 युग तक सेवा तपस्या की । तब सतपुरुष ने सृष्टि रचने हेतु मुझे अष्टांगी कन्या (आद्याशक्ति) को दिया ।

तब तुमने मुझे मारकर मानसरोवर दीप से निकाल दिया था । हे योगजीत ! अब मैं तुम्हें नहीं छोड़ूँगा । तुम्हें मारकर अपना बदला लूँगा । अब मैं तुम्हें अच्छी तरह समझ गया ।

तब मैंने उससे कहा - हे धर्मराय निरंजन सुनो । मैं तुमसे नहीं डरता । मुझे सतपुरुष का बल और तेज प्राप्त है । अरे काल ! तेरा मुझे कोई डर नहीं । तुम मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकते ।

यह कहकर मैंने उसी समय सत्यपुरुष के प्रताप का सुमरन करके दिव्य शब्द अंग से काल को मारा । मैंने उस पर दृष्टि डाली । तो उसी समय उसका माथा काला पड़ गया । जैसे किसी पक्षी के पंख चोटिल होने पर वह जमीन पर पड़ा वेवश होकर देखता है । पर उड़ नहीं पाता । ठीक यही हाल काल निरंजन का था । वह क्रोध कर रहा था । पर कर कुछ नहीं पा रहा था । तब फ़िर आकर वह मेरे चरणों में गिर पड़ा ।

तब निरंजन बोला - हे ज्ञानी जी ! सुनो । मैं आपसे विनती करता हूँ कि मैंने आपको भाई समझकर विरोध किया । यह मुझसे बड़ी गलती हुयी । अब मैं आपको सत्यपुरुष के समान समझता हूँ । आप बड़े हो । शक्ति सम्पन्न हो । आप गलती करने वाले अपराधी को भी क्षमा देते हो ।

जैसे सत्यपुरुष ने मुझे तीन लोक का राज्य दिया । वैसे ही आप भी मुझे कुछ पुरस्कार दो । सोलह सुतों में आप ईश्वर हो । हे ज्ञानी जी आप और सत्यपुरुष दोनों एक समान हो ।

तब मैंने कहा - हे निरंजन राव सुन । तुम तो सत्यपुरुष के वंश में (सोलह सुतों में) कालिख के समान कलंकित हुये हो । मैं जीवों को सत्य शब्द का उपदेश करके सत्यनाम मजबूत करा के बचाने आया हूँ । भवसागर से जीवों को मुक्त कराने को आया हूँ । यदि तुम इसमें विघ्न डालते हो । तो मैं इसी समय तुमको यहाँ से निकाल दूँगा ।

तब निरंजन विनती करते हुये बोला - मैं आपका एवं सत्यपुरुष दोनों का सेवक हूँ । इसके अतिरिक्त मैं कुछ नहीं जानता । ज्ञानी जी आपसे मेरी विनती है कि ऐसा कुछ मत करो । जिससे मेरा बिगाड़ हो । जैसे सत्यपुरुष ने मुझे राज्य दिया । वैसे आप भी दो । तो मैं आपका वचन मानूँगा । फ़िर आप मुक्ति के लिये हँस जीव मुझसे ले लीजिये ।

हे तात ! मैं आपसे विनती करता हूँ । आप मेरी बात को मानो । आपका कहना ये भ्रमित जीव नहीं मानेंगे । और उल्टे मेरा पक्ष लेकर आपसे वाद विवाद करेंगे । मैंने मोह रूपी फ़ँदा इतना मजबूत बनाया है कि समस्त जीव उसमें उलझ कर रह गये हैं । वेद शास्त्र पुराण स्मृति में विभिन्न प्रकार के गुण धर्म का वर्णन है । और उसमें मेरे तीन पुत्र बृह्मा विष्णु महेश देवताओं में मुख्य हैं ।

उनमें भी मैंने बहुत चतुराई का खेल रचा है कि मेरे मत पँथ का ज्ञान प्रमुख रूप से वर्णन किया गया है । जिससे सब मेरी बात ही मानते हैं । मैं जीवों से मन्दिर देव और पत्थर पुजवाता हूँ । और तीर्थ वृत जप और तप में

सबका मन फ़ँसा रहता है ।

संसार में लोग देवी देवों और भूत भैरव आदि की पूजा आराधना करेंगे । और जीवों को मार काटकर बलि देंगे । इन ऐसे अनेक मत सिद्धांतो से मैंने जीवों को बाँध रखा है कि धर्म के नाम पर यज्ञ होम नेम और इसके अलावा भी अनेक जाल मैंने डाल रखे हैं । अतः हे ज्ञानी जी ..आप संसार में जायेंगे । तो जीव आपका कहा नहीं मानेंगे । वे मेरे मत फ़ँदे में फ़ँसे रहेंगे ।

तब मैंने कहा - अन्याय करने वाले.. हे निरंजन ! सुनो मैं तुम्हारे जाल फ़ँदे को काटकर जीव को सत्यलोक ले जाऊँगा । जितने भी मायाजाल जीव को फ़ँसाने के लिये तुमने रच रखे हैं । सत शब्द से उन सबको नष्ट कर दूँगा । जो जीव मेरा सार शब्द मजबूती से गृहण करेगा । तुम्हारे सब जालों से मुक्त हो जायेगा । जब जीव मेरे शब्द उपदेश को समझेगा । तेरे फ़ैलाये हुये सब भृम अज्ञान को त्याग देगा । मैं जीवों को सतनाम समझाऊँगा । साधना कराऊँगा । और उन हँस जीवों का उद्धार कर सतलोक ले जाऊँगा ।

सत्य शब्द दृणता से देकर मैं उन हँस जीवों को दया । शील । क्षमा । काम आदि विषयों से रहित । सहजता । सम्पूर्ण संतोष और आत्मपूजा आदि अनेक सदगुणों का धनी बना दूँगा । सतपुरुष के सुमरन का जो सार उपाय है । उसमें सतपुरुष का अविचल नाम हँस जीव पुकारेंगे । तब तुम्हारे सिर पर पांव रखकर मैं उन हँस जीवों को सतलोक भेज दूँगा । अविनाशी अमृत नाम का प्रचार प्रसार करके मैं हँस जीवों को चेताकर भृम मुक्त कर दूँगा । इसलिये हे धर्मराय निरंजन ! मेरी बात मन लगाकर सुन । इस प्रकार मैं तुम्हारा मान मर्दन करूँगा । जो मनुष्य विधिपूर्वक सदगुरु से दीक्षा लेकर नाम को प्राप्त करेगा । उसके पास काल नहीं आता । सत्यपुरुष के नामज्ञान से हँस जीव को संधि हुआ देखकर काल निरंजन भी उसको सिर झुकाता है ।

मेरी इतनी बात सुनते ही काल निरंजन भयभीत हो गया । उसने हाथ जोडकर विनती की - हे तात ! आप दया करने वाले साहब दाता हो । इसलिये आप मुझ पर इतनी कृपा करो । सतपुरुष ने मुझे ऐसा शाप दिया है कि मैं नित्य लाखों जीव खाऊँ । यदि संसार के सभी जीव सत्यलोक चले गये । तो मेरी भूख कैसे मिटेगी ? फ़िर सतपुरुष ने मुझ पर दया की । और भवसागर का राज्य मुझे दिया । आप भी मुझ पर कृपा करो । और जो मैं माँगता हूँ । वह वर मुझे दीजिये ।

सतयुग त्रेता और द्वापर इन तीनों में से थोडे जीव सत्यलोक में जायँ । लेकिन जब कलियुग आये । तो आपकी शरण में बहुत जीव जायँ । ऐसा पक्का वचन मुझे देकर ही आप संसार में जायें ।

तब मैंने कहा - अरे काल निरंजन ! तुमने ये छल मिथ्या का जो प्रपंच फ़ैलाया है । और तीनों युगों में जीव को दुख में डाल दिया । मैंने तुम्हारी विनती जान ली । अरे अभिमानी काल ! तुम मुझे ठगते हो ।

जैसी विनती तुमने मुझसे की । वह मैंने तुम्हें बख्श दी । लेकिन चौथा युग यानी कलियुग जब आयेगा । तब मैं जीवों के उद्धार के लिये अपने वंश यानी सन्तों को भेजूँगा ।

आठ अंश सुरति संसार में जाकर प्रकट होंगे । उसके पीछे फ़िर नये और उत्तम स्वरूप सुरति । नौतम । धर्मदास के घर जाकर प्रकट होंगे । सतपुरुष के वे 42 अंश जीव उद्धार के लिये संसार में आयेंगे । वे कलियुग में व्यापक रूप से पंथ प्रकट कर चलायेंगे । और जीव को ज्ञान प्रदान कर सतलोक भेजेंगे । वे 42 अंश जिस जीव को सत्य शब्द का उपदेश देंगे । मैं सदा उनके साथ रहूँगा । तब वह जीव यमलोक नहीं जायेगा । और काल जाल से मुक्त रहेगा ।

तब निरंजन बोला - हे साहिब ! आप पँथ चलाओ । और भवसागर से उद्धार कर जीव को सतलोक ले जाओ । जिस जीव के हाथ में मैं अंश वंश की छाप (नाम मोहर) देखूँगा । उसे मैं सिर झुकाकर प्रणाम करूँगा । सतपुरुष की बात को मैंने मान लिया । परन्तु हे ज्ञानी जी ..मेरी भी एक विनती है ।

आप एक पँथ चलाओगे । और जीवों को नाम देकर सत्यलोक भिजवाओगे । तब मैं 12 पँथ (नकली) बनाऊँगा । जो आपकी ही बात करते हुये (मतलब आपके जैसे ही ज्ञान की बात.. मगर फ़र्जी) ज्ञान देंगे । और अपने आपको कबीरपँथी ही कहेंगे । मैं 12 यम संसार में भेजूँगा । और आपके नाम से पँथ चलाऊँगा । मृतु अंधा नाम का मेरा एक दूत सुकृत धर्मदास के घर जन्म लेगा । पहले मेरा दूत धर्मदास के घर जन्म लेगा । इसके बाद आपका अंश वहाँ आयेगा । इस प्रकार मेरा वह दूत जन्म लेकर जीवों को भरमायेगा । और जीवों को सत्यपुरुष का नाम उपदेश (मगर नकली प्रभावहीन) देकर समझायेगा ।

उन 12 पँथ के अंतर्गत जो जीव आयेंगे । वे मेरे मुख में आकर मेरा ग्रास बनेंगे । मेरी इतनी विनती मानकर मेरी बात बनाओ । और मुझ पर कृपा करके मुझे क्षमा कर दो ।

द्वापर युग का अंत और कलियुग की शुरूआत जब होगी । तब मैं बौद्ध शरीर धारण करूँगा । इसके बाद मैं उडीसा के राजा इंद्रमन के पास जाऊँगा । और अपना नाम जगन्नाथ धराऊँगा । राजा इन्द्रमन जब मेरा अर्थात जगन्नाथ मंदिर समुद्र के किनारे बनवायेगा । तब उसे समुद्र का पानी ही गिरा देगा । उससे टकराकर बहा देगा । इसका विशेष कारण यह होगा कि त्रेता युग में मेरे विष्णु का अवतार राम वहाँ आयेगा । और वह समुद्र से पार जाने के लिये समुद्र पर पुल बाँधेगा । इसी शत्रुता के कारण समुद्र उस मंदिर को डुबा देगा ।

अतः हे ज्ञानी जी ! आप ऐसा विचार बनाकर पहले वहाँ समुद्र के किनारे जाओ । आपको देखकर समुद्र रुक जायेगा । आपको लाँघकर समुद्र आगे नहीं जायेगा । इस प्रकार मेरा वहाँ मंदिर स्थापित करो । उसके बाद अपना अंश भेजना ।

आप भवसागर में अपना मत पँथ चलाओ । और सत्यपुरुष के सतनाम से जीवों का उद्धार करो । और अपने मत पँथ का चिह्न छाप मुझे बता दो । तथा सत्यपुरुष का नाम भी सुझा समझा दो । बिना इस छाप के जो जीव भवसागर के घाट से उतरना चाहेगा । वह हँस के मुक्ति घाट का मार्ग नहीं पायेगा ।

तब मैंने कहा - हे निरंजन ! जैसा तुम मुझसे चाहते हो । वैसा तुम्हारे चरित्र को मैंने अच्छी तरह समझ लिया है । तुमने 12 पँथ चलाने की जो बात कही है । वह मानों तुमने अमृत में विष डाल दिया है । तुम्हारे इस चरित्र को देखकर तुम्हें मिटा ही डालूँ । और अब पलटकर अपनी कला दिखाऊँ । तथा यम से जीव का बँधन छुडाकर अमरलोक ले जाऊँ ।

मगर सतपुरुष का आदेश ऐसा नहीं है । यही सोचकर मैंने निश्चय किया है कि अमरलोक उस जीव को ले जाकर पहुँचाऊँगा । जो मेरे सत्य शब्द को मजबूती से ग्रहण करेगा ।

हे अन्यायी निरंजन ! तुमने जो 12 पँथ चलाने की माँग कही है । वह मैंने तुमको दी । पहले तुम्हारा दूत धर्मदास के यहाँ प्रकट होगा । पीछे से मेरा अंश आयेगा । समुद्र के किनारे में चला जाऊँगा । और जगन्नाथ मंदिर भी बनवाऊँगा । उसके बाद अपना सत्य पँथ चलाऊँगा । और जीवों को सत्यलोक भेजूँगा ।

तब निरंजन बोला - हे ज्ञानी जी ! आप मुझे सत्यपुरुष से अपने मेल का छाप निशान दीजिये । जैसी पहचान आप अपने हंस जीवों को दोगे । जो जीव मुझको उसी प्रकार की निशान पहचान बतायेगा । उसके पास काल नहीं

आयेगा । अतः हे साहिब दया करके सतपुरुष की नाम निशानी मुझे दें ।

तब मैंने कहा - हे धर्मराय निरंजन ! जो मैं तुम्हें सत्यपुरुष के मेल की निशानी समझा दूँ । तो तुम जीवों के उद्धार कार्य में विघ्न पैदा करोगे । तुम्हारी इस चाल को मैंने समझ लिया । हे काल ! तुम्हारा ऐसा कोई दाव मुझ पर नहीं चलने वाला । हे धर्मराय ! मैंने तुम्हें साफ़ शब्दों में बता दिया कि अपना अक्षर नाम मैंने गुप्त रखा है । जो कोई हमारा नाम लेगा । तुम उसे छोड़कर अलग हो जाना । जो तुम हँस जीवों को रोकोगे । तो काल तुम रहने नहीं पाओगे ।

तब धर्मराय निरंजन बोला - हे ज्ञानी जी ! आप संसार में जाईये । और सत्यपुरुष के नाम द्वारा जीवों को उद्धार करके ले जाईये । जो हँस जीव आपके गुण गायेगा । मैं उसके पास कभी नहीं आऊँगा । जो जीव आपकी शरण में आयेगा । वह मेरे सिर पर पाँव रखकर भवसागर से पार होगा । मैंने तो व्यर्थ आपके सामने मूर्खता की । तथा आपको पिता समान समझकर लड़कपन किया । बालक करोंड़ो अवगुण वाला होता है । परन्तु पिता उनको हृदय में नहीं रखता । यदि अवगुणों के कारण पिता बालक को घर से निकाल दे । फ़िर उसकी रक्षा कौन करेगा । इसी प्रकार मेरी मूर्खता पर यदि आप मुझे निकाल देंगे । तो फ़िर मेरी रक्षा कौन करेगा ? ऐसा कहकर निरंजन ने उठकर शीश नवाया । और मैंने संसार की और प्रस्थान किया ।

तब कबीर साहब ने धर्मदास से कहा - जब मैंने निरंजन को व्याकुल देखा । तब मैंने वहाँ से प्रस्थान किया । और भवसागर की ओर चला आया ।

आदि सृष्टि की रचना

धर्मदास बोले - हे साहिब ! अब आप मुझे कृपा करके बतायें । मुक्त होकर अमर हुये लोग कहाँ रहते हैं ? आप मुझे अमरलोक और अन्य दीपों का वर्णन सुनाओ । कौन से दीप में सदगुरु के हँस जीवों का वास है ? और कौन से दीप में सतपुरुष का निवास है ? वहाँ पर हँस जीव कौन सा तथा कैसा भोजन करते हैं ? और वे कौन सी वाणी बोलते हैं ? आदि पुरुष ने लोक कैसे रच रखा है ? तथा उन्हें दीप रचने की इच्छा कैसे हुयी ? तीनों लोकों की उत्पत्ति कैसे हुयी । हे साहिब ! मुझे वह सब भी बताओ । जो गुप्त है ।

काल निरंजन किस विधि से पैदा हुआ ? और 16 सुतों का निर्माण कैसे हुआ ? स्थावर । अण्डज । पिण्डज । ऊष्मज इन चार प्रकार की चार खानों वाली सृष्टि का विस्तार कैसे हुआ । और जीव को कैसे काल के वश में डाल दिया गया । कूर्म और शेषनाग उपराजा कैसे उत्पन्न हुये ? और कैसे मत्स्य तथा वराह जैसे अवतार हुये ? तीन प्रमुख देव बृहमा विष्णु महेश किस प्रकार हुये ? तथा प्रथ्वी आकाश का निर्माण कैसे हुआ । चन्द्रमा और सूर्य कैसे हुये ? कैसे तारों का समूह प्रकट होकर आकाश में ठहर गया ? और कैसे चार खानों के जीव शरीर की रचना हुयी । इन सबकी उत्पत्ति के विषय में स्पष्ट बतायें ।

तब कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! मैंने तुम्हें सत्यज्ञान और मोक्ष पाने का सच्चा अधिकारी पाया है । इसलिये मैंने सत्यज्ञान का जो अनुभव मैंने किया । उसके सार शब्द का रहस्य कहकर सुनाया । अब तुम मुझसे आदि सृष्टि की उत्पत्ति सुनो । मैं तुम्हें सबकी उत्पत्ति और प्रलय की बात सुनाता हूँ ।

हे धर्मदास ! यह तत्व की बात सुनो । जब धरती और आकाश और पाताल भी नहीं था । जब कूर्म वराह शेषनाग

सरस्वती और गणेश भी नहीं थे । जब सबका राजा निरंजन राय भी नहीं था । जिन्होंने सबके जीवन को मोह माया के बंधन में झुलाकर रखा है । 33 करोङ देवता भी नहीं थे । और मैं तुम्हें अनेक क्या बताऊँ ?
तब बृहमा विष्णु महेश भी नहीं थे । और न ही शास्त्र वेद पुराण थे । तब ये सब आदि पुरुष में समाये हुये थे । जैसे बरगद के पेङ के बीच में छाया रहती है ।

हे धर्मदास ! तुम प्रारम्भ की आदि उत्पत्ति सुनो । जिसे प्रत्यक्ष रूप से कोई नहीं जानता । जिसके पीछे सारी सृष्टि का विस्तार हुआ है । उसके लिये मैं तुम्हें क्या प्रमाण दूँ कि जिसने उसे देखा हो । चारों वेद परम पिता की वास्तविक कहानी नहीं जानते । क्योंकि तब वेद का मूल ही (आरम्भ होने का आधार) नहीं था । इसीलिये वेद सत्य पुरुष को अकथनीय अर्थात जिसके बारे में कहा न जा सके ..ऐसा कहकर पुकारते हैं । चारों वेद निराकार निरंजन से उत्पन्न हुये हैं । जो कि सृष्टि के उत्पत्ति आदि रहस्य को जानते ही नहीं । इसी कारण पंडित लोग उसका खंडन करते हैं । और असल रहस्य से अंजान वेद मत पर यह सारा संसार चलता है ।
हे धर्मदास ! सृष्टि के पूर्व जब सत्यपुरुष गुप्त रहते थे । उनसे जिनसे कर्म होता है । वे निमित्त कारण और उपादान कारण और करण यानी साधन उत्पन्न नहीं किये थे । उस समय गुप्त रूप से कारण और करण सम्पुट कमल में थे । उसका सम्बन्ध सत्यपुरुष से था । विदेह सत्यपुरुष उस कमल में थे ।

तब सत्यपुरुष ने स्वयँ इच्छा कर अपने अंशों को उत्पन्न किया । और अपने अंशो को देखकर वह बहुत प्रसन्न हुये । सबसे पहले सत्यपुरुष ने शब्द का प्रकाश किया । और उससे लोक दीप रचकर उसमें वास किया । फ़िर सत्यपुरुष ने चार पायों वाले एक सिंहासन की रचना की । और उसके ऊपर पुण्य दीप का निर्माण किया । तब सत्यपुरुष अपनी समस्त कलाओं को धारण करके उस पर बैठे । और उनसे " अगर वासना " यानी एक सुगन्ध प्रकट हुयी । सत्यपुरुष ने अपनी इच्छा से सब कामना की । और 88 000 दीपों की रचना की । उन सभी दीपों में वह चन्दन जैसी सुगन्ध समा गयी । जो बहुत अच्छी लगी ।

इसके बाद सत्यपुरुष ने दूसरा शब्द उच्चारित किया । उससे कूर्म नाम का सुत (अंश) प्रकट हुआ । और उन्होंने सत्यपुरुष के चरणों में प्रणाम किया ।
तब उन्होंने तीसरे शब्द का उच्चारण किया । तो उससे ज्ञान नाम के सुत हुये । जो सब सुतों में श्रेष्ठ थे । वे सत्यपुरुष के चरणों में शीश नवाकर खङे रहे । तब सत्यपुरुष ने उनको एक दीप में रहने की आज्ञा दी ।
चौथे शब्द के उच्चारण से विवेक नामक सुत हुये ।

और पाँचवे शब्द से काल निरंजन प्रकट हुआ । काल निरंजन अत्यन्त तेज अंग और भीषण प्रकृति वाला होकर आया । इसी ने अपने उग्र स्वभाव से सब जीवों को कष्ट दिया है । वैसे ये जीव सत्यपुरुष का अंश है । जीव के आदि अंत को कोई नहीं जानता है ।

छठवें शब्द से सहजनाम सुत उत्पन्न हुये । सातवें शब्द से संतोष नाम के सुत हुये । जिनको सत्यपुरुष ने उपहार में दीप देकर संतुष्ट किया । आठवें शब्द से सुरति सुभाव नाम के सुत उत्पन्न हुये । उन्हें भी एक दीप दिया गया । नवें शब्द से आनन्द अपार नाम के सुत उत्पन्न हुये । दसवें शब्द से क्षमा नाम के सुत उत्पन्न हुये । ग्यारहवें से निष्काम नाम और बारहवें से जलरंगी नाम के सुत हुये । तेरहवें से अंचित और चौदहवें से प्रेम नाम के सुत हुये । पन्द्रहवें से दीनदयाल और सोलहवें से धीरज नाम के विशाल सुत उत्पन्न हुये । सत्रहवें शब्द के उच्चारण से योग संतायन हुये ।

इस तरह एक ही नाल से सत्यपुरुष के शब्द उच्चारण से 16 सुतों की उत्पत्ति हुयी ।
सत्यपुरुष के शब्द से ही उन सुतों का आकार का विकास हुआ । और शब्द से ही सभी दीपों का विस्तार हुआ ।
सत्यपुरुष ने अपने प्रत्येक दिव्य अंग यानी अंश को अमृत का आहार दिया । और प्रत्येक को अलग अलग दीप का

अधिकारी बनाकर बैठा दिया । सत्यपुरुष के इन अंशों की शोभा और कला अनन्त है । उनके दीपों में मायारहित अलौकिक सुख रहता है । सत्यपुरुष के दिव्य प्रकाश से सभी दीप प्रकाशित हो रहे है । सत्यपुरुष के एक ही रोम का प्रकाश करोंङो सूर्य चन्द्रमा के समान है ।

सत्यलोक आनन्द धाम है । वहाँ पर शोक मोह आदि दुख नहीं है । वहाँ सदैव मुक्त हँसों का विश्राम होता है । सतपुरुष का दर्शन तथा अमृत का पान होता है ।

आदि सृष्टि की रचना के बाद जब बहुत दिन ऐसे ही बीत गये । तब धर्मराज काल निरंजन ने क्या तमाशा किया । हे धर्मदास ! तुम उस चरित्र को ध्यान से सुनो ।

निरंजन ने सत्यपुरुष में ध्यान लगाकर । एक पैर पर खङे होकर 70 युग तक कठिन तपस्या की । इससे आदि पुरुष बहुत प्रसन्न हुये । तब निरंजन के लिये सत्यपुरुष की आवाज वाणी के रूप में हुयी - हे धर्मराय ! किस हेतु से तुमने यह तप सेवा की ?

इस पर निरंजन सिर झुकाकर बोला - हे प्रभु ! आप मुझे वह स्थान दें । जहाँ जाकर मैं निवास करूँ ।

तब सत्यपुरुष ने कहा - पुत्र ! तुम मानसरोवर दीप में जाओ ।

सत्यपुरुष की आज्ञा से प्रसन्न होकर धर्मराज मानसरोवर दीप की ओर चला गया । और उसे देखकर आनन्द से भर गया । मानसरोवर पर निरंजन ने फ़िर से एक पैर पर खङे होकर 70 युग तपस्या की । तब दयालु सत्यपुरुष के ह्रदय में दया भर गयी । निरंजन की कठिन सेवा तपस्या से पुष्प दीप के पुष्प विकसित हो गये । और फ़िर सत्यपुरुष की वाणी प्रकट हुयी । उनके बोलते ही वहां सुगन्ध फ़ैल गयी ।

सत्यपुरुष ने अपने सहज सुत से कहा - हे सहज ! तुम निरंजन के पास जाओ । और उससे तप का कारण पूछो । निरंजन की सेवा तपस्या से पहले ही मैंने उसको मानसरोवर दीप दिया है । अब वह क्या चाहता है । यह ज्ञात कर तुम मुझे बताओ ?

तब सहज निरंजन के पास पहुँचे । और प्रेमभाव से कहा - हे भाई ! अब तुम क्या चाहते हो ?

यह सुनकर निरंजन प्रसन्न होकर बोला - हे सहज ! तुम मेरे बङे भाई हो । इतना सा स्थान ..ये मानसरोवर मुझे अच्छा नहीं लगता । अतः मैं किसी बङे स्थान का स्वामी बनना चाहता हूँ । मुझे ऐसी इच्छा है कि या तो मुझे देवलोक दें । या मुझे एक अलग देश दें ।

सहज ने निरंजन की ये अभिलाषा सत्यपुरुष को जाकर बतायी । ये सुनकर सत्यपुरुष ने स्पष्ट शब्दों में कहा - हम निरंजन की सेवा तपस्या से संतुष्टि होकर उसको तीन लोक देते हैं । वह उसमें अपनी इच्छा से शून्य 0 देश बसाये । और वहाँ जाकर सृष्टि की रचना करे । हे सहज ! तुम निरंजन से ऐसा जाकर कहो ।

जब निरंजन ने सहज द्वारा ये बात सुनी । तो वह बहुत प्रसन्न और आश्चर्यचकित हुआ ।

तब निरंजन बोला - हे सहज सुनो । मैं किस प्रकार सृष्टि की रचना करके उसका विस्तार करूँ ? सत्यपुरुष ने मुझे तीन लोक का राज्य दिया है । परन्तु मैं सृष्टि की रचना का भेद नहीं जानता । फ़िर यह कार्य कैसे करूँ । जो सृष्टि मन बुद्धि की पहुँच से परे अत्यन्त कठिन और जटिल है । वह मुझे रचनी नहीं आती । अतः दया करके मुझे उसकी युक्ति बतायी जाये । हे भाई ! तुम मेरी तरफ़ से सत्यपुरुष से यह विनती करो कि मैं किस प्रकार नवखण्ड बनाऊँ ? अतः मुझे वह साज सामान दो । जिससे जगत की रचना हो सके ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! सहज ने यह सब बात जब जाकर सत्यपुरुष से कही । तब उन्होंने आज्ञा दी । हे सहज ! कूर्म के पेट के अन्दर सृष्टि रचना का सब साज सामान है । उसे लेकर निरंजन अपना कार्य करे । इसके लिये निरंजन कूर्म से विनती करे । और उससे दण्ड प्रणाम करके विनयपूर्वक सिर झुकाकर माँगे ।

सहज ने सत्यपुरुष की आज्ञा निरंजन को बता दी ।

यह बात सुनते ही निरंजन बहुत हर्षित हुआ । और उसके अन्दर बहुत अभिमान हुआ । वह कूर्म के पास जाकर

खड़ा हो गया । और बताये अनुसार दण्ड प्रणाम भी नहीं किया ।

अमृत स्वरूप कूर्म जो सबको सुख देने वाले हैं । और उनमें क्रोध एवं अभिमान का भाव जरा भी नहीं है । और वे अत्यन्त शीतल स्वभाव के हैं । अतः जब काल निरंजन ने अभिमान करके देखा । तो पता चला कि कूर्म जी अत्यन्त धैर्यवान और बलशाली हैं ।

12 पालंग कूर्म जी का विशाल शरीर है । और 6 पालंग बलबान निरंजन का शरीर है । निरंजन क्रोध करता हुआ कूर्म के चारों ओर दौड़ता रहा । और ये सोचता रहा कि किस उपाय से इससे उत्पत्ति का सामान लूँ ?

तब निरंजन बेहद रोष से कूर्म से भिड़ गया । और अपने तीखे नाखूनों से कूर्म के शीश पर आघात करने लगा । प्रहार करने से कूर्म के उदर से पवन निकले । उसके शीश के तीन अंश सत रज तम गुण निकले । आगे जिनके वंश बृह्मा विष्णु महेश हुये । 5 तत्व धरती आकाश आदि तथा चन्द्रमा सूर्य आदि तारों का समूह उसके उदर में थे । उसके आघात से पानी अग्नि चन्द्रमा और सूर्य निकले । और प्रथ्वी जगत को ढकने के लिये आकाश निकला । फ़िर उसके उदर से प्रथ्वी को उठाने वाले वाराह शेषनाग और मत्स्य निकले ।

तब प्रथ्वी सृष्टि का आरम्भ हुआ ।

जब काल निरंजन ने कूर्म का शीश काटा । तब उस स्थान से रक्त जल के स्रोत बहने लगे । जब उनके रक्त में स्वेद यानी पसीना और जल मिला । उससे समुद्र का निर्माण तथा 49 कोटि प्रथ्वी का निर्माण हुआ । जैसे दूध पर मलाई ठहर जाती है । वैसे ही जल पर प्रथ्वी ठहर गयी ।

वाराह के दाँत प्रथ्वी के मूल में रहे । पवन प्रचण्ड था । और प्रथ्वी स्थूल थी । आकाश को अंडास्वरूप समझो । और उसके बीच में प्रथ्वी स्थिति है ।

कूर्म के उदर से कूर्म सुत उत्पन्न हुये । उस पर शेषनाग और वराह का स्थान है । शेषनाग के सिर पर प्रथ्वी है । निरंजन के चोट करने से कूर्म बरियाया । सृष्टि रचना का सब साजो सामान कूर्म उदर के अंडे में थी । परन्तु वह कूर्म के अंश से अलग थी । आदि कूर्म सत्यलोक के बीच रहता था ।

निरंजन के आघात से पीड़ित होकर उसने सत्यपुरुष का ध्यान किया । और शिकायत करते हुये कहा - काल निरंजन ने मेरे साथ दुष्टता की है । उसने मेरे ऊपर बल प्रयोग करते हुये मेरे पेट को फ़ाड़ डाला है । आपकी आज्ञा का उसने पालन नहीं किया ।

सत्यपुरुष स्नेह से बोले - कूर्म ! वह तुम्हारा छोटा भाई है । और यह रीत है कि छोटे के अवगुणों को भुलाकर उससे स्नेह किया जाय । सत्यपुरुष के ऐसे वचन सुनकर कूर्म आनन्दित हो गये ।

इधर काल निरंजन ने फ़िर से सत्यपुरुष का ध्यान किया । और अनेक युगों तक उनकी सेवा तपस्या की । निरंजन ने अपने स्वार्थ से तप किया था । अतः सृष्टि रचना को लेकर वह पछताया । तब धर्मराय निरंजन ने विचार किया कि तीनों लोकों का विस्तार कैसे और कहाँ तक किया जाय ?

उसने स्वर्गलोक । मृत्युलोक और पाताललोक की रचना तो कर दी । परन्तु बिना बीज और जीव के सृष्टि का विस्तार कैसे संभव हो । किस प्रकार और क्या उपाय किया जाय । जो जीवों के धारण करने का शरीर बनाकर सजीव सृष्टि रचना हो सके । यह सब तरीका विधि सत्यपुरुष की सेवा तपस्या से ही होगा । ऐसा विचार करके हठपूर्वक एक पैर पर खड़ा होकर उसने 64 युगों तक तपस्या की ।

तब दयालु सत्यपुरुष ने सहज से कहा - अब ये तपस्वी निरंजन क्या चाहता है । वह तुम उससे पूछो । और दे दो

। उससे कहो । वह हमारे वचन अनुसार सृष्टि का निर्माण करे । और छल मत का त्याग करे ।

सहज ने निरंजन से जाकर यह सब बात कही । तब निरंजन बोला - मुझे वह स्थान दो । जहाँ जाकर मैं बैठ जाऊँ ।

यह सुनकर सहज बोले - सत्यपुरुष ने पहले ही सब कुछ दे दिया है । कूर्म के उदर से निकले सामान से तुम सृष्टि रचना करो ।

निरंजन बोला - मैं कैसे क्या बनाकर रचना करूँ । सत्यपुरुष से मेरी तरफ़ से विनती कर कहो । अपना सारा खेत बीज मुझे दे दें ।

सहज ने यह हाल सत्यपुरुष को कह सुनाया । सत्यपुरुष ने आज्ञा दी । तो सहज अपने सुखासन दीप चले गये । निरंजन की इच्छा जानकर सत्यपुरुष ने इच्छा व्यक्त की । उनकी इस इच्छा से अष्टांगी नाम की कन्या उत्पन्न हुयी । वह कन्या आठ भुजाओं की होकर आयी थी । वह सत्यपुरुष के वायें अंग जाकर खडी हो गयी । और प्रणाम करते हुये बोली - हे सत्यपुरुष ! मुझे क्या आज्ञा है ?

सत्यपुरुष बोले - हे पुत्री ! तुम निरंजन के पास जाओ । मैं तुम्हें जो वस्तु देता हूँ । उसे संभाल लो । उससे तुम निरंजन के साथ मिलकर सृष्टि रूपी फ़ुलवारी की रचना करो ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! सत्यपुरुष ने अष्टांगी नामक कन्या को जो जीव बीज दिया । उसका नाम " सोहंग " है । इस तरह जीव का नाम सोहंग है । जीव ही सोहंगम है । दूसरा नहीं है । और वह जीव सत्यपुरुष का अंश है । फ़िर सत्यपुरुष ने तीन शक्तियों को उत्पन्न किया । उनके नाम चेतन । उलंघिन और अभय थे ।

सत्यपुरुष ने अष्टांगी कन्या से कहा कि निरंजन के पास जाकर उसे पहचान कर यह 84 लाख जीवों का मूल बीज .. जीव बीज दे दो ।

अष्टांगी कन्या यह जीव बीज लेकर मानसरोवर चली गयी । तब सत्यपुरुष ने सहज को बुलाया ।

सत्यपुरुष ने सहज से कहा । तुम निरंजन के पास जाकर यह कहो । जो वस्तु तुम चाहते थे । वह तुम्हें दे दी गयी है । जीब बीज सोहंग तुम्हें मिल गया है । अब जैसी चाहो सृष्टि रचना करो । और मानसरोवर में जाकर रहो । वहीं से सृष्टि का आरम्भ होना है ।

सहज ने निरंजन से जाकर ऐसा ही कहा ।

राम नाम की उत्पत्ति

कबीर साहब बोले - धर्मदास भवसागर की ओर चलते हुये मैं सबसे पहले बृह्मा के पास आया । और बृह्मा को आदि पुरुष का शब्द उपदेश प्रकट किया । तब बृह्मा ने मन लगाकर सुनते हुये आदि पुरुष के चिह्न लक्षण के बारे में बहुत पूछा । उस समय निरंजन को संदेह हुआ कि बृह्मा मेरा बडा लडका है । और वह ज्ञानी जी की बातों में आकर उनके पक्ष में न चला जाय । तब निरंजन ने बृह्मा की बुद्धि फ़ेरने का उपाय किया । क्योंकि निरंजन मन के रूप में सबके भीतर बैठा हुआ है । अतः वह बृह्मा के शरीर में भी विराजमान था । उसने बृह्मा की बुद्धि को अपनी ओर फ़ेर दिया । (सव जीवों आदि के भीतर मन स्वरूप निरंजन का वास है । जो सबकी बुद्धि अपने

अनुसार घुमाता फ़िराता है ।)

बुद्धि फ़िरते ही बृहमा ने मुझसे कहा - वह ईश्वर निराकार निर्गुण अविनाशी ज्योति स्वरूप और शून्य का वासी है । उसी पुरुष यानी ईश्वर का वेद वर्णन करता है । वेद आज्ञानुसार ही मैं उस पुरुष को मानता और समझता हूँ ।

जब मैंने देखा कि काल निरंजन ने बृहमा की बुद्धि को फ़ेर दिया है । और उसे अपने पक्ष में मजबूत कर लिया है । तो मैं वहाँ से विष्णु के पास आ गया । मैंने विष्णु को भी वही आदि पुरुष का शब्द उपदेश किया । परन्तु काल के वश में होने के कारण विष्णु ने भी उसे गृहण नहीं किया ।

विष्णु ने मुझसे कहा - मेरे समान अन्य कौन है ? मेरे पास चार पदार्थ यानी फ़ल हैं । धर्म अर्थ काम मोक्ष मेरे अधिकार में है । उनमें से जो चाहे । मैं किसी जीव को दूँ ।

तब मैंने कहा - हे विष्णु सुनो । तुम्हारे पास यह कैसा मोक्ष है ? मोक्ष अमरपद तो मृत्यु के पार होने से यानी आवागमन छूटने पर ही प्राप्त होता है । तुम स्वयँ स्थिर शांत नहीं हो । तो दूसरों को स्थिर शांत कैसे करोगे ? झूठी साक्षी.. झूठी गवाही से तुम भला किसका भला करोगे ? और इस अवगुण को कौन भरेगा ?

मेरी निर्भीक सत्य वाणी सुनकर विष्णु भयभीत होकर रह गये । और अपने हृदय में इस बात का बहुत डर माना । उसके बाद मैं नागलोक चला गया । और वहाँ शेषनाग से अपनी कुछ बातें कहने लगा ।

मैंने कहा - आदि पुरुष का भेद कोई नहीं जानता है । और सभी काल की छाया में लगे हुये हैं । और अज्ञानता के कारण काल के मुँह में जा रहे हैं । हे भाई ! अपनी रक्षा करने वाले को पहचानो । यहाँ काल से तुम्हें कौन छुड़ायेगा । बृहमा विष्णु और रुद्र जिसका ध्यान करते हैं । और वेद जिसका गुण दिन रात गाते हैं । वहीं आदि पुरुष तुम्हारी रक्षा करने वाले हैं । वहीं तुम्हें इस भवसागर से पार करेंगे । रक्षा करने वाला और कोई नहीं है । विश्वास करो । मैं तुम्हें उनसे मिलाता हूँ । साक्षात्कार कराता हूँ ।

लेकिन विष खाने से उत्पन्न शेषनाग का बहुत तेज स्वभाव था । अतः उसके मन में मेरे वचनों का विश्वास नहीं हुआ ।

जब बृहमा विष्णु और शेषनाग ने मेरे द्वारा सत्यपुरुष का संदेश मानने से इंकार कर दिया । तब मैं शंकर के पास गया । परन्तु शंकर को भी सत्यपुरुष का यह संदेश अच्छा नहीं लगा । शंकर ने कहा - मैं तो निरंजन को मानता हूँ । और बात को मन में नहीं लाता ।

तब वहाँ से मैं भवसागर की ओर चल दिया ।

कबीर साहब आगे बोले - हे बुद्धिमान धर्मदास सुनो । जब मैं इस भवसागर यानी मृत्युमंडल में आया । तब मैंने यहाँ किसी जीव को सतपुरुष की भक्ति करते नहीं देखा । ऐसी स्थिति में सतपुरुष का ज्ञान उपदेश किससे कहता ? जिससे कहूँ । वह अधिकांश तो यम के वेश में दिखायी पड़े । विचित्र बात यह थी कि जो घातक विनाश करने वाला काल निरंजन है । लोगों को उसका तो विश्वास है । और वे उसी की पूजा करते हैं । और जो रक्षा करने वाला है । उसकी ओर से वे जीव उदास हैं । उसके पक्ष में न बोलते हैं । न सुनते हैं । जीव जिस काल को जपता है । वही उसे धरकर खा जाता है । तब मेरे शब्द उपदेश से उसके मन में चेतना आती है । जीव जब दुखी होता है । तब ज्ञान पाने की बात उसकी समझ में आती है । लेकिन उससे पहले जीव मोहवश कुछ देखता समझता नहीं । तब ऐसा भाव मेरे मन में उपजा कि काल निरंजन की शाखा वंश संतति को मिटा डालूँ । और उसे अपना प्रत्यक्ष प्रभाव दिखाऊँ । यम निरंजन से जीवों को छुड़ा लूँ । तथा उन्हें अमरलोक भेज दूँ । जिनके कारण मैं शब्द उपदेश को रटते हुये फ़िरता हूँ । वे ही जीव मुझे पहचानते तक नहीं । सब जीव काल के वश में पड़े हैं । और सत्यपुरुष के नाम उपदेश रूपी अमृत को छोड़कर विषय रूपी विष गृहण कर रहे हैं ।

लेकिन सत्यपुरुष का आदेश ऐसा नहीं है । यही सोचकर मैंने अपने मन में निश्चय किया कि अमरलोक उसी जीव को लेकर पहुँचाऊँ । जो मेरे सार शब्द को मजबूती से गृहण करे ।

हे धर्मदास ! इसके आगे जैसा चरित्र हुआ । वह तुम ध्यान लगाकर सुनो । मेरी बातों से विचलित होकर बृहमा

विष्णु शंकर और बृहमा के पुत्र सनकादिक सबने मिलकर शून्य 0 में ध्यान समाधि लगायी । समाधि में उन्होंने प्रार्थना की - हे ईश्वर ! हम किस नाम का सुमरन करें ? और तुम्हारा कौन सा नाम ध्यान के योग्य है ?

हे धर्मदास ! जैसे सीप स्वाति नक्षत्र का स्नेह अपने भीतर लाती है । ठीक उसी प्रकार उन सबने ईश्वर के प्रति प्रेमभाव से शून्य 0 में ध्यान लगाया । उसी समय निरंजन ने उनको उत्तर देने का उपाय सोचा । और शून्य 0 गुफ़ा से अपना शब्द उच्चारण किया । तब इनकी ध्यान समाधि में ररं यानी रा शब्द बहुत बार उच्चारित हुआ । उसके आगे म अक्षर उसकी पत्नी माया यानी अष्टांगी ने मिला दिया । इस तरह रा और म दोनों अक्षरों को बराबर मिलाने पर राम शब्द बना । तब राम नाम उन सबको बहुत अच्छा लगा । और सबने राम नाम सुमिरन की ही इच्छा की । बाद में उसी राम नाम को लेकर उन्होंने संसार के जीवों को उपदेश दिया । और सुमिरन कराया । काल निरंजन और माया के इस जाल को कोई पहचान समझ नहीं पाया । और इस तरह राम नाम की उत्पत्ति हुयी । हे धर्मदास ! इस बात को तुम गहरायी से समझो ।

तब धर्मदास बोले - आप पूरे सदगुरु हैं । आपका ज्ञान सूर्य के समान है । जिससे मेरा सारा अज्ञान अंधेरा दूर हो गया है । संसार में माया मोह का घोर अंधेरा है । जिसमें विषय विकारी लालची जीव पङे हुये हैं । जब आपका ज्ञान रूपी सूर्य प्रकट होता है । और उससे जीव का मोह अंधकार नष्ट हो जाये । यही आपके शब्द उपदेश के सत्य होने का प्रमाण है । मेरे धन्य भाग्य जो मैंने आपको पाया । आपने मुझ अधम को जगा लिया ।

अष्टांगी कन्या और काल निरंजन

सहज के द्वारा सत्यपुरुष के ऐसे वचन सुनकर निरंजन प्रसन्न होकर अहंकार से भर गया । और मानसरोवर चला आया । फ़िर जब उसने सुन्दर कामिनी अष्टांगी कन्या को आते हुये देखा । तो उसे अति प्रसन्नता हुयी । अष्टांगी का अनुपम सौंदर्य देखकर निरंजन मुग्ध हो गया । उसकी सुन्दरता की कला का अन्त नहीं था । यह देखकर काल निरंजन बहुत व्याकुल हो गया ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! काल निरंजन की क्रूरता सुनो । वह अष्टांगी कन्या को ही निगल गया । जब अन्यायी काल निरंजन अष्टांगी का ही आहार करने लगा । तब उस कन्या को काल निरंजन के प्रति बहुत आश्चर्य हुआ । जब वह उसे निगल रहा था । तो अष्टांगी ने सत्यपुरुष को ध्यान करके पुकारा कि काल निरंजन ने मेरा आहार कर लिया है ।

अष्टांगी की पुकार सुनकर सत्यपुरुष ने सोचा कि यह काल निरंजन तो बहुत क्रूर और अन्यायी है । इस कन्या की तरह ही पहले कूर्म ने ध्यान करके मुझे पुकारा था कि काल निरंजन ने मेरे तीन शीश खा लिये हैं । हे सत्यपुरुष ! आप मुझ पर दया कीजिये ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! काल निरंजन का ऐसा क्रूर चरित्र जानकर सत्यपुरुष ने उसे शाप दिया कि वह प्रतिदिन लाख जीवों को खायेगा । और सवा लाख का विस्तार करेगा । फ़िर सत्यपुरुष ने ऐसा भी विचार किया कि इस कालपुरुष को मिटा ही डालें । क्योंकि अन्यायी और क्रूर काल निरंजन बहुत ही कठोर और भयंकर है । यह सभी जीवों का जीवन बहुत दुखी कर देगा ।

लेकिन अब वह मिटाने से भी नहीं मिट सकता था । क्योंकि एक ही नाल से वे सब 16 सुत उत्पन्न हुये थे ।

अतः एक को मिटाने से सभी मिट जायेंगे । और मैंने सबको अलग लोक दीप देकर जो रहने का वचन दिया है । वह डांवाडोल हो जायेगा । और मेरी ये सब रचना भी समाप्त हो जायेगी । अतः इसको मारना ठीक नहीं है । सत्यपुरुष ने विचार किया कि कालपुरुष को मारने से उनका वचन भंग हो जायेगा । अतः अपने वचन का पालन करते हुये उसे न मारकर यह कहता हूँ कि अब वह कभी हमारा दर्शन नहीं पायेगा ।

यह कहते हुये सत्यपुरुष ने योगजीत को बुलवाया । और सब हाल कहा कि किस तरह काल निरंजन ने अष्टांगी कन्या को निगल लिया । और कूर्म के तीन शीश खा लिये ।

उन्होंने कहा- हे योगजीत ! तुम शीघ्र मानसरोवर दीप जाओ । और वहाँ से निरंजन को मारकर निकाल दो । वह मानसरोवर में न रहने पाये । और हमारे देश सत्यलोक में कभी न आने पाये । निरंजन के पेट में अष्टांगी नारी है । उससे कहो कि वह मेरे वचनों का संभालकर पालन करे । निरंजन जाकर उसी देश में रहे । जो मैंने पहले उसे दिये हैं । अर्थात वह स्वर्गलोक मृत्युलोक और पाताल पर अपना राज्य करे । वह अष्टांगी नारी निरंजन का पेट फ़ाड़कर बाहर निकल आये । जिससे पेट फ़टने से वह अपने कर्मों का फ़ल पाये । निरंजन से निर्णय करके कह दो । वह अष्टांगी नारी ही अब तुम्हारी स्त्री होगी ।

योगजीत सत्यपुरुष को प्रणाम करके मानसरोवर दीप आये ।

काल निरंजन उन्हें वहाँ आया देखकर भयंकर रूप हो गया । और बोला - तुम कौन हो ? और किसने तुम्हें यहाँ भेजा है ।

योगजीत ने कहा - अरे निरंजन ! तुम नारी को ही खा गये । अतः सत्यपुरुष ने मुझे आज्ञा दी कि तुम्हें शीघ्र ही यहाँ से निकालूँ ।

योगजीत ने निरंजन के पेट में समायी हुयी अष्टांगी से कहा - अरे अष्टांगी ! तुम वहाँ क्यों रहती हो । तुम सत्यपुरुष के तेज का सुमिरन करो । और पेट फ़ाड़कर बाहर आ जाओ ।

योगजीत की बात सुनकर निरंजन का ह्रदय क्रोध से जलने लगा । और वह योगजीत से भिड़ गया । योगजीत ने सत्यपुरुष का ध्यान किया । तो सत्यपुरुष ने आज्ञा दी कि वह निरंजन के माथे के बीच में जोर से घूंसा मारे । योगजीत ने ऐसा ही किया । फ़िर योगजीत ने निरंजन की बाँह पकड़कर उसे उठाकर दूर फ़ेंक दिया । तो वह सत्यलोक के मानसरोवर दीप से अलग जाकर दूर गिर पड़ा ।

सत्यपुरुष के डर से वह डरता हुआ सँभल सँभलकर उठा । फ़िर अष्टांगी कन्या निरंजन के पेट से निकली । वह काल निरंजन से बहुत भयभीत थी । वह सोचने लगी कि अब मैं वह देश न देख सकूंगी । मैं न जाने किस प्रकार यहाँ आकर गिर पड़ी । यह कौन बताये ।

वह निरंजन से बहुत डरी हुयी थी । और सकपका कर इधर उधर देखती हुयी निरंजन को शीश नवा रही थी ।

तब निरंजन बोला - हे आदि कुमारी ! सुनो । अब तुम मेरे डर से मत डरो । सत्यपुरुष ने तुम्हें मेरे काम के लिये रचा है । हम तुम दोनों एकमति होकर सृष्टि रचना करें । मैं पुरुष हूँ । और तुम मेरी स्त्री हो । अतः तुम मेरी यह बात मान लो ।

अष्टांगी बोली - तुम यह कैसी वाणी बोलते हो । मैं तो तुम्हें बड़ा भाई मानती हूँ । हे भाई ! इस प्रकार जानते हुये भी तुम मुझसे ऐसी बातें मत करो । जब से तुमने मुझे पेट में डाल लिया था । और उससे उत्पन्न होने पर अब तो मैं तुम्हारी पुत्री भी हो गयी हूँ । बड़े भाई का रिश्ता तो पहले से ही था । अब तो तुम मेरे पिता भी हो गये हो । अब तुम मुझे साफ़ दृष्टि से देखो । नहीं तो तुमसे यह पाप हो जायेगा । अतः मुझे विषय वासना की दृष्टि से मत देखो ।

तब निरंजन बोला - हे भवानी सुनो । मैं तुम्हें सत्य बताकर अपनी पहचान कराता हूँ । पाप पुण्य के डर से मैं नहीं डरता । क्योंकि पाप पुण्य का मैं ही तो कर्ता (कराने वाला) हूँ । पाप पुण्य मुझसे ही होंगे । और मेरा हिसाब कोई नहीं लेगा । पाप पुण्य को मैं ही फ़ैलाऊँगा । जो उसमें फ़ँस जायेगा । वही मेरा होगा । अतः तुम मेरी इस सीख को मानों । सत्यपुरुष ने मुझे कह समझाकर तुझे दिया है । अतः हे भवानी ! तुम मेरा कहना मानों ।

निरंजन की ऐसी बातें सुनकर अष्टांगी हँसी । और दोनों एकमति होकर एक दूसरे के रंग में रंग गये । अष्टांगी मीठी वाणी से रहस्यमय वचन बोली । और फ़िर उस नीच बुद्धि स्त्री ने विषय भोग की इच्छा प्रकट की । उसके रति विषयक रहस्यमय वचन सुनकर निरंजन बहुत प्रसन्न हुआ । और उसके भी मन में विषय भोग की इच्छा जाग उठी । निरंजन और अष्टांगी दोनों परस्पर रति क्रिया में लग गये । तब कहीं चैतन्य सृष्टि का विशेष आरम्भ हुआ ।

हे धर्मदास ! तुम आदि उत्पत्ति का यह भेद सुनो । जिसे भृमवश कोई नहीं जानता । उन दोनों ने तीन बार रतिक्रिया की । जिससे बृहमा विष्णु तथा महेश हुये । उनमें बृहमा सबसे बङे । मंझले विष्णु और सबसे छोटे शंकर थे । इस प्रकार अष्टांगी और निरंजन का रति प्रसंग हुआ । उन दोनों ने एकमति होकर भोग विलास किया । तब उससे आदि उत्पत्ति का प्रकाश हुआ ।

वेद की उत्पत्ति

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! तुम यह विचार करो । इसके पीछे ऐसा वर्णन हो चुका है कि अग्नि पवन जल प्रथ्वी और प्रकाश कूर्म के उदर से प्रकट हुये । उसके उदर से ये पाँचो अंश लिये । तथा तीनों सिर काटने से सत रज तम तीनों गुण प्राप्त हुये ।

इस प्रकार पाँच तत्व और तीन गुण प्राप्त होने पर निरंजन ने सृष्टि रचना की । फ़िर अष्टांगी और निरंजन के परस्पर रति प्रसंग से अष्टांगी को गुण एवं तत्व समान करके दिये । और अपने अंश उत्पन्न किये । इस प्रकार पाँच तत्व और तीन गुण को देने से उसने संसार की रचना की ।

वीर्य शक्ति की पहली बूँद से बृहमा हुये । तब उन्हें रजोगुण और पाँच तत्व दिये । दूसरी बूँद से विष्णु हुये । उन्हें सतगुण और पाँच तत्व दिये । तीसरी बूँद से शंकर हुये । तब उन्हें तमोगुण और पाँच तत्व दिये । पाँच तत्व तीन गुण के मिश्रण से बृहमा विष्णु महेश के शरीर की रचना हुयी । इसी प्रकार सब जीवों के शरीर की रचना हुयी । उससे ये पाँच तत्व और तीन गुण परिवर्तनशील और विकारी होने से बार बार सृजन और प्रलय यानी जीवन और मरण होता है । सृष्टि की रचना के इस आदि रहस्य को वास्तविक रूप से कोई नहीं जानता ।

हे धर्मदास ! तब निरंजन बोला - हे अष्टांगी कामिनी ! मेरी बात सुन । और जो मैं कहूँ । उसे मानों । अब जीव बीज सोहंग तुम्हारे पास है । उसके द्वारा सृष्टि रचना का प्रकाश करो । हे रानी सुन । अब मैं कैसे क्या करूँ । आदि भवानी ! बृहमा विष्णु महेश तीनों पुत्र तुमको सौंप दिये । अब मैंने तो अपना मन सत्यपुरुष की सेवा भक्ति में लगा दिया है । तुम इन तीनों बालकों को लेकर राज करो । परन्तु मेरा भेद किसी से न कहना । मेरा दर्शन ये तीनों पुत्र न कर सकेंगे । चाहे मुझे खोजते खोजते अपना जन्म ही क्यों न समाप्त कर दें ।

सोच समझकर सब लोगों को ऐसा मत सुदृढ कराना कि सत्यपुरुष का भेद कोई प्राणी जानने न पाये । जब ये तीनों पुत्र बुद्धिमान हो जायँ । तब उन्हें समुद्र मंथन का ज्ञान देकर समुद्र मंथन के लिये भेजना ।

इस तरह निरंजन ने अष्टांगी को बहुत प्रकार से समझाया । और फ़िर अपने आप गुप्त हो गया । उसने शून्य 0 गुफ़ा में निवास किया । वह जीवों के ह्रदयाकाश रूपी शून्य 0 गुफ़ा में रहता है । तब उसका भेद कौन ले सकता है ?

वह गुप्त होकर भी सबके साथ है । जो सबके भीतर है । उस मन को ही निरंजन जानों । जीवों के ह्रदय में रहने वाला यह मन निरंजन सत्यपुरुष परमात्मा के रहस्यमय ज्ञान के प्रति संदेह उत्पन्न कर उसे मिटाता है । यह अपने मत से सभी को वशीभूत करता है । और स्वयं की बङाई प्रकट करता है ।

सभी जीवों के ह्रदय में बसने वाला यह मन काल निरंजन का ही रूप है । सबके साथ रहता हुआ भी ये मन पूर्णतया गुप्त है । और किसी को दिखाई नहीं देता । ये स्वाभाविक रूप से अत्यन्त चंचल है । और सदा सांसारिक विषयों की ओर दौङता है । विषय सुख और भोग प्रवृति के कारण मन को चैन कहाँ है ? यह तो दिन रात सोते जागते अपनी अनन्त इच्छाओं की पूर्ति के लिये भटकता ही रहता है । और मन के वशीभूत होने के कारण ही जीव अशांत और दुखी होता है । इसी कारण उसका पतन होकर जन्म मरण का बंधन बना हुआ है । जीव का मन ही उसके दुखों भोगों और जन्म मरण का कारण है । अतः मन को वश में करना ही सभी दुखों और जन्म मरण के बँधन से मुक्त होने का उपाय है ।

जीव तथा उसके ह्रदय के भीतर मन दोनों एक साथ है । मतवाला और विषयगामी मन काल निरंजन के अंग स्पर्श करने से जीव बुद्धिहीन हो गये । इसी से अज्ञानी जीव कर्म अकर्म के करते रहने से.. तथा उनका फ़ल भोगते रहने के कारण ही.. जन्म जन्मांतर तक उनका उद्धार नहीं हो पाता । यह मन काल जीव को सताता है । यह इन्द्रियों को प्रेरित कर विभिन्न प्रकार के पापकर्मों में लगाता है । यह स्वयँ पाप पुण्य के कर्मों की काल कुचाल चलता है । और फ़िर जीव को दुख रूपी दण्ड देता है ।

उधर जब ये तीनों बालक बृह्मा विष्णु महेश सयाने और समझदार हुये । तो उनकी माता अष्टांगी देवी ने उन्हें समुद्र मथने के लिये भेजा । लेकिन वे बालक खेल खेलने में मस्त थे । अतः समुद्र मथने नहीं गये ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! उसी समय एक तमाशा हुआ । निरंजन राव ने योग धारण किया । उसमें उसने पवन यानी सांस खींचकर पूरक प्राणायाम से आरम्भ कर.. पवन ठहराकर कुम्भक प्राणायाम बहुत देर तक किया । फ़िर जब निरंजन कुम्भक त्यागकर रेचन क्रिया से पवन रहित हुआ । तब उसकी सांस के साथ वेद बाहर निकले । वेद उत्पत्ति के इस रहस्य को कोई विरला विद्वान ही जानेगा ।

वेद ने निरंजन की स्तुति की । और कहा - हे निर्गुण नाथ ! मुझे क्या आज्ञा है ?

तब निरंजन बोला - तुम जाकर समुद्र में निवास करो । तथा जिसका तुमसे भेंट हो । उसके पास चले जाना । वेद को आज्ञा देते हुये काल निरंजन की आवाज तो सुनायी दी । पर वेद ने उसका स्थूल रूप नहीं देखा । उसने केवल अपना ज्योतिस्वरूप ही दिखाया । उसके तेज से प्रभावित होकर आज्ञानुसार वेद चले गये । फ़िर अंत में उस तेज से विष की उत्पत्ति हुयी । इधर चलते हुये वेद वहाँ जा पहुँचे । जहाँ निरंजन ने समुद्र की रचना की थी । वे सिंधु के मध्य में पहुँच गये । तब निरंजन ने समुद्र मँथन की युक्ति का विचार किया ।

त्रिदेव द्वारा प्रथम समुद्र मंथन

तब निरंजन ने गुप्त ध्यान से अष्टांगी को याद करते हुये समझाया । और कहा - बताओ समुद्र मथने में किसलिये देर हो रही है ? बृहमा विष्णु और महेश हमारे तीनों पुत्रों को समुद्र मथने के लिये शीघ्र ही भेजो । और मेरे वचन दृढता से मानों । और अष्टांगी इसके बाद तुम स्वयँ समुद्र में समा जाना ।

तब अष्टांगी ने समुद्र मंथन हेतु विचार किया । और तीनों बालकों को अच्छी तरह समझा बुझाकर समुद्र मथने के लिये भेजा । उन्हें भेजते समय अष्टांगी ने कहा - समुद्र से तुम्हें अनमोल वस्तुयें प्राप्त होंगी । इसलिये तुम जल्दी ही जाओ । यह सुनकर बृहमा विष्णु और महेश तीनों बालक चल पडे । और जाकर समुद्र के पास खडे हो गये । और उसे मथने का उपाय सोचने लगे ।

फ़िर तीनों ने समुद्र मंथन किया । तीनों को समुद्र से तीन वस्तुयें प्राप्त हुयीं । बृहमा को वेद । विष्णु को तेज और शंकर को हलाहल विष की प्राप्ति हुयी । ये तीनों वस्तुयें लेकर वे अपनी माता अष्टांगी के पास आये । और खुशी खुशी तीनों वस्तुयें दिखायीं । अष्टांगी ने उन्हें अपनी अपनी वस्तु अपने पास रखने की आज्ञा दी । अष्टांगी ने कहा - अब फ़िर से जाकर समुद्र मथो । और जिसको जो प्राप्त हो । वह ले लो ।

उसी समय आदि भवानी ने एक चरित्र किया । उसने तीन कन्यायें उत्पन्न की । और अपनी उन अंश को समुद्र में प्रवेश करा दिया । जब इन तीनों कन्याओं को समुद्र में प्रवेश कराने के लिये भेजा । इस रहस्य को अष्टांगी के तीनों पुत्र नहीं जान सके । अतः उन्होंने जब समुद्र मंथन किया । तो समुद्र से तीन कन्यायें निकलीं । उन्होंने खुशी से तीनों कन्याओं को ले लिया । और अष्टांगी के पास आये ।

तब अष्टांगी ने कहा - पुत्रो तुम्हारे सब कार्य पूरे हो गये । अष्टांगी ने उन तीन कन्याओं को तीनों पुत्रों को बाँट दिया । बृहमा को सावित्री । विष्णु को लक्ष्मी । और शंकर को पार्वती दी ।

तीनों भाई कामिनी स्त्री को पाकर बहुत आनन्दित हुये । और उन कामनियों के साथ काम के वशीभूत होकर उन्होंने देव और दैत्य दोनों प्रकार की संताने उत्पन्न की ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! तुम यह बात समझो कि जो माता थी । वह अब स्त्री हो गयी । अष्टांगी ने फ़िर से अपने पुत्रों को समुद्र मथने की आज्ञा दी ।

इस बार समुद्र में से 14 रत्न निकले । उन्होंने रत्न की खान निकाली । और रत्न लेकर माता के पास पहुँचे । तब अष्टांगी ने कहा - हे पुत्रो । अब तुम सृष्टि रचना करो । अण्डज खान की उत्पत्ति स्वयँ अष्टांगी ने की । पिण्ड खाने को बृहमा ने बनाया । ऊष्मज खान को विष्णु तथा स्थावर खाने को शंकर ने बनाया । उन्होंने 84 लाख योनियों की रचना की । और उनके अनुसार आधा जल आधा थल बनाया । स्थावर खान को एक तत्व का समझो । और ऊष्मज खान को दो तत्व । तीन तत्वों से अण्डज और चार तत्वों से पिण्डज का निर्माण हुआ । पाँच तत्वों से मनुष्य को बनाया । और तीन गुणों से सजाया संवारा ।

इसके बाद बृहमा वेद पढने लगे । वेद पढते हुये बृहमा को निराकार के प्रति अनुराग हुआ । क्योंकि वेद कहता है । पुरुष एक है । और वह निराकार है । और उसका कोई रूप नहीं है । वह शून्य 0 में ज्योति दिखाता है । परन्तु

देखते समय उसकी देह दृष्टि में नहीं आती । उस निराकार का सिर स्वर्ग है । और पैर पाताल है । इस वेद मत से बृहमा मतवाला हो गया ।

बृहमा ने विष्णु से कहा - वेद ने मुझे आदि पुरुष को दिखा दिया है । फ़िर ऐसा ही उन्होंने शंकर से भी कहा । वेद पडने से पता चलता है कि - पुरुष एक है । और सबका स्वामी केवल एक निराकार पुरुष है । यह तो वेद ने बताया । परन्तु उसने ऐसा भी कहा कि - मैंने उसका भेद नहीं पाया ।

तब बृहमा अष्टांगी के पास आये । और बोले - हे माता ! मुझे वेद ने दिखाया । और बताया कि सृष्टि की रचना करने वाला । हम सबका स्वामी कोई और ही है ? अतः हे माता ! हमें बताओ कि तुम्हारा पति कौन है ? और हमारा पिता कहाँ है ?

अष्टांगी बोली - हे बृहमा सुनो । मेरे अतिरिक्त तुम्हारा अन्य कोई पिता नहीं है । मुझसे ही सब उत्पत्ति हुयी है । और मैंने ही सबको संभारा है ।

तब बृहमा ने कहा - हे माता ! सुनो । वेद निर्णय करके कहता है कि पुरुष केवल एक है । और वह गुप्त है ।

अष्टांगी बोली - हे पुत्र बृहम कुमार ! मुझसे न्यारा सृष्टि रचियता और कोई नहीं है । मैंने ही स्वर्गलोक प्रथ्वीलोक और पाताललोक बनाये हैं । और सात समुद्रों का निर्माण भी मैंने ही किया है ।

यह सुनकर बृहमा ने कहा - मैंने तुम्हारी बात मानी कि तुमने ही सब कुछ किया है । परन्तु पहले से ही पुरुष को गुप्त कैसे रख लिया ? जबकि वेद कहता है कि पुरुष एक है । और वह अलख निरंजन है । हे माता ! तुम कर्ता बनो । आप बनो । परन्तु पहले वेद की रचना करते समय यह विचार क्यों नहीं किया । और उसमें पुरुष को निरंजन क्यों बताया ? अतः अब तुम मेरे से छल न करो । और सच सच बात बताओ ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! जब इस तरह बृहमा ने जिद पकड ली । तो अष्टांगी ने अपने मन में विचार किया कि बृहमा को किस प्रकार समझाऊँ । जो यह मेरी महिमा को..बडाई को नहीं मानता । जो यह बात निरंजन से कहूँ । तो यह किस प्रकार ठीक से समझेगा ?

निरंजन राव ने मुझसे पहले ही कहा था कि मेरा दर्शन कोई नहीं पायेगा । अब जो बृहमा को अलख निरंजन के बारे में कुछ नहीं बताया । तो किस प्रकार उसे दिखाया जाये । ऐसा विचार कर अष्टांगी ने कहा - अलख निरंजन अपना दर्शन नहीं दिखाता ।

बृहमा बोले - माता ! तुम मुझे सही सही स्थान बताओ । आगे पीछे की उल्टी सीधी बातें करके मुझे न बहलाओ । मैं ये बातें नहीं मानता । और न ही मुझे अच्छी लगती हैं ।

पहले तुमने मुझे बहकाया कि मैं ही सृष्टिकर्ता हूँ । और मुझसे अलग कुछ भी नहीं है । और अब तुम कहती हो कि अलख निरंजन तो है । पर वह अपना दर्शन नहीं दिखाता । क्या उसका दर्शन पुत्र भी नहीं पायेगा । ऐसी पैदा न होने वाली बात क्यों कहती हो । हे माता ! इसलिये मुझे तुम्हारे कहने पर भरोसा नहीं है । अतः इसी समय उस कर्ता का दर्शन करा दीजिये । और मेरे संशय को दूर कीजिये । इसमें जरा भी देर न करो ।

अष्टांगी बोली - हे पुत्र बृहमा सुनो । मैं तुमसे सत्य ही कहती हूँ कि उस अलख निरंजन के सात स्वर्ग ही माथा है । और सात पाताल चरण हैं । यदि तुम्हें उसके दर्शन की इच्छा हो । तो हाथ में फ़ूल ले जाकर उसे अर्पित करते हुये प्रणाम करो । यह सुनकर बृहमा बहुत प्रसन्न हुये ।

अष्टांगी ने अपने मन में विचार किया - ये बृहमा मेरा कहा मानता नहीं है । ये कहता है कि वेद ने मुझे उपदेश

किया है कि एक पुरुष निरंजन है । परन्तु कोई उसके दर्शन नहीं पाता है ।

अतः वह बोली - अरे बालक सुन । अलख निरंजन तुम्हारा पिता है । पर तुम उसका दर्शन नहीं पा सकते । यह मैं तुमसे सत्य वचन कहती हूँ ।

यह सुनकर बृह्मा ने व्याकुल होकर माँ के चरणों में सिर रख दिया । और बोले - मैं पिता का शीश स्पर्श व दर्शन करके तुम्हारे पास आता हूँ । यह कहकर बृह्मा उत्तर दिशा को चले गये ।

अपनी माता से आज्ञा मांगकर विष्णु भी अपने पिता के दर्शनों हेतु पाताल चले गये । केवल शंकर का मन इधर उधर नहीं भटका । और वह माता की सेवा करते हुये कुछ नहीं बोले ।

बृह्मा और गायत्री का अष्टांगी से झूठ बोलना

इस प्रकार बहुत दिन बीत गये । तब अष्टांगी ने सोचा । मेरे गये हुये पुत्रों बृह्मा और विष्णु ने क्या किया । इसका कुछ पता नहीं लगा । वे अब तक लौटकर क्यों नहीं आये ।

तब सबसे पहले विष्णु लौटकर माता के पास आये । और बोले - पाताल में मुझे पिता के चरण तो नहीं मिले । उल्टे मेरा शरीर विष ज्वाला (शेषनाग के प्रभाव से) से श्यामल हो गया । हे माता ! जब मैं पिता निरंजन के दर्शन नहीं कर पाया । तो मैं व्याकुल हो गया । और फ़िर लौट आया । अष्टांगी यह सुनकर प्रसन्न हो गयी । और विष्णु को दुलारते हुये बोली - हे पुत्र ! तुमने निश्चय ही सत्य कहा है ।

उधर अपने पिता के दर्शनों के बेहद इच्छुक बृह्मा चलते चलते उस स्थान पर पहुँच गये । जहाँ न सूर्य था । न चन्द्रमा केवल शून्य 0 था । वहाँ बृह्मा ने अनेक प्रकार से निरंजन की स्तुति की । जहाँ ज्योति का प्रभाव था । वहाँ भी ध्यान लगाया । और ऐसा करते हुये बहुत दिन बीत गये । परन्तु बृह्मा को निरंजन के दर्शन नहीं हुये । शून्य 0 में ध्यान करते हुये बृह्मा को अब चार युग बीत गये ।

तब अष्टांगी को बहुत चिंता हुयी कि मैं बृह्मा के बिना किस प्रकार सृष्टि रचना करूँ ? और किस प्रकार उसे वापस लाऊँ ?

तब अष्टांगी ने एक युक्ति सोचते हुये अपने शरीर में उबटन लगाकर मैल निकाला । और उस मैल से एक पुत्री रूपी कन्या उत्पन्न की । उस कन्या में उन्होंने दिव्य शक्ति का अंश मिलाया । और इस कन्या का नाम गायत्री रखा ।

तब गायत्री उन्हें प्रणाम करती हुयी बोली - हे माता ! तुमने मुझे किस कार्य हेतु बनाया है ? वह आज्ञा कीजिये । अष्टांगी बोली - हे पुत्री ! मेरी बात सुनो । बृह्मा तुम्हारा बङा भाई है । वह पिता के दर्शन हेतु शून्य 0 आकाश की ओर गया है । उसे बुलाकर लाओ । वह चाहे अपने पिता को खोजते खोजते सारा जन्म गवां दे । पर उनके दर्शन नही कर पायेगा । अतः तुम जिस विधि से चाहो । कोई उपाय करके उसे बुलाकर लाओ ।

तब गायत्री बताये अनुसार बृह्मा के पास पहुँची ।

तो उसने देखा - ध्यान में लीन बृह्मा अपनी पलक तक नहीं झपकाते थे । वह कुछ दिन तक यही उपाय सोचती रही कि किस विधि द्वारा बृह्मा का ध्यान से ध्यान हटाकर अपनी ओर आकर्षित किया जाय । फ़िर उसने अष्टांगी का ध्यान किया ।

तब अष्टांगी ने ध्यान में गायत्री को आदेश दिया कि अपने हाथ से बृह्मा को स्पर्श करो । तब वह ध्यान से जागेंगे । गायत्री ने ऐसा ही किया । और बृह्मा के चरण कमलों का स्पर्श किया ।

बृहमा ध्यान से जाग गया । और उसका मन भटक गया । तब वह व्याकुल होकर बोला - तू ऐसी कौन सी पापी अपराधी है । जो मेरी ध्यान समाधि छुङायी । मैं तुझे शाप देता हूँ । क्योंकि तूने आकर पिता के दर्शन का मेरा ध्यान खंडित कर दिया ।

तब गायत्री बोली - मुझसे कोई पाप नहीं हुआ है । पहले तुम सब बात समझ लो । तब मुझे शाप दो । मैं सत्य कहती हूँ । तुम्हारी माता ने मुझे तुम्हारे पास भेजा है । अतः शीघ्र चलो । तुम्हारे बिना सृष्टि का विस्तार कौन करे ।

बृहमा बोले - मैं माता के पास किस प्रकार जाऊँ । अभी मुझे पिता के दर्शन भी नहीं हुये हैं ।

गायत्री बोली - तुम पिता के दर्शन कभी नहीं पाओगे । अतः शीघ्र चलो । वरना पछताओगे ।

तब बृहमा बोला - यदि तुम झूठी गवाही दो कि मैंने पिता का दर्शन पा लिया है । और ऐसा स्वयँ तुमने भी अपनी आँखों से देखा है कि पिता निरंजन प्रकट हुये । और बृहमा ने आदर से उनका शीश स्पर्श किया । यदि तुम माता से इस प्रकार कहो । तो मैं तुम्हारे साथ चलूँ ।

गायत्री बोली - हे वेद सुनने और धारण करने वाले बृहमा । सुनो मैं झूठ वचन नहीं बोलूँगी । हाँ यदि मेरे भाई ! तुम मेरा स्वार्थ पूरा करो । तो मैं इस प्रकार की झूठ बात कह दूँगी ।

बृहमा बोले - मैं तुम्हारी स्वार्थ वाली बात समझा नहीं । अतः मुझे स्पष्ट कहो ।

गायत्री बोली - यदि तुम मुझे रतिदान दो । यानी मेरे साथ कामक्रीङा करो । तो मैं ऐसा कह सकती हूँ । यह मेरा स्वार्थ है । फ़िर भी तुम्हारे लिये परमार्थ जानकर कहती हूँ ।

बृहमा विचार करने लगे कि इस समय क्या उचित होगा ? यदि मैं इसकी बात नहीं मानता । तो ये गवाही नहीं देगी । और माता मुझे मुझे धिक्कारेगी कि न तो मैंने पिता के दर्शन पाये । और न कोई कार्य सिद्ध हुआ । अतः मैं इसके प्रस्ताव में पाप को विचारता हूँ । तो मेरा काम नहीं बनता । इसलिये रतिदान देने की इसकी इच्छा पूरी करनी ही चाहिये ।

ऐसा ही निर्णय करते हुये बृहमा और गायत्री ने मिलकर विषय भोग किया । उन दोनों पर रतिसुख का रंग प्रभाव दिखाने लगा । बृहमा के मन में पिता को देखने की जो इच्छा थी । उसे वह भूल गया । और दोनों के हृदय में काम विषय की उमंग बङ गयी । फ़िर दोनों ने मिलकर छलपूर्ण बुद्धि बनायी ।

तब बृहमा ने कहा कि - चलो अब माता के पास चलते हैं ।

गायत्री बोली - एक उपाय और करो । जो मैंने सोचा है । वह युक्ति यह है कि एक दूसरा गवाह भी तैयार कर लेते हैं ।

बृहमा बोले - यह तो बहुत अच्छी बात है । तुम वही करो । जिस पर माता विश्वास करे ।

तब गायत्री ने साक्षी उत्पन्न करने हेतु अपने शरीर से मैल निकाला । और उसमें अपना अंश मिलाकर एक कन्या बनायी । बृहमा ने उस कन्या का नाम सावित्री रखवाया । तब गायत्री ने सावित्री को समझाया कि तुम चलकर माता से कहना कि बृहमा ने पिता का दर्शन पाया है ।

सावित्री बोली - जो तुम कह रही हो । उसे मैं नहीं जानती । और झूठी गवाही देने में तो बहुत हानि है ।

अब बृहमा और गायत्री को बहुत चिंता हुयी । उन्होंने सावित्री को अनेक प्रकार से समझाया । पर वह तैयार नहीं हुयी ।

तब सावित्री अपने मन की बात बोली - यदि बृहमा मुझसे रति प्रसंग करे । तो मैं ऐसा कर सकती हूँ । तब गायत्री ने बृहमा को समझाया कि सावित्री को रतिदान देकर अपना काम बनाओ ।

बृहमा ने सावित्री को रतिदान दिया । और बहुत भारी पाप अपने सिर ले लिया । सावित्री का दूसरा नाम बदलकर पुहुपावती कहकर अपनी बात सुनाते हैं । ये तीनों मिलकर वहाँ गये । जहाँ कन्या आदि कुमारी अष्टांगी थी ।

तीनों के प्रणाम करने पर अष्टांगी ने पूछा - हे बृहमा ! क्या तुमने अपने पिता के दर्शन पाये हैं ? और यह दूसरी स्त्री कहाँ से लाये ।

बृहमा बोले - हे माता ! ये दोनों साक्षी है कि मैंने पिता के दर्शन पाये । इन दोनों के सामने मैंने पिता का शीश स्पर्श किया है ।

तब अष्टांगी बोली - हे गायत्री ! विचार करके कहो कि तुमने अपनी आँखों से क्या देखा है ? सत्य बताओ । बृहमा ने अपने पिता का दर्शन पाया ? और इस दर्शन का उस पर क्या प्रभाव पड़ा ?

गायत्री बोली - बृहमा ने पिता के शीश का दर्शन पाया है । ऐसा मैंने अपनी आँखों से देखा है कि बृहमा अपने पिता निरंजन से मिले । हे माता ! यह सत्य है । बृहमा ने अपने पिता पर फ़ूल चढ़ाये । और उन्हीं फ़ूलों से यह पुहुपावती उस स्थान से प्रकट हुयी । इसने भी पिता का दर्शन पाया है । आप इससे पूछ के देखिये । इसमें रत्ती भर भी झूठ नहीं है ।

अष्टांगी बोली - हे पुहुपावती ! मुझसे सत्य कहो । और बताओ । क्या बृहमा ने पिता के सिर पर पुष्प चढ़ाया । पुहुपावती ने कहा - हे माता ! मैं सत्य कहती हूँ । चतुर्मुख बृहमा ने पिता के शीश के दर्शन किये । और शांत एवं स्थिर मन से फ़ूल चढ़ाये ।

इस झूठी गवाही को सुनकर अष्टांगी परेशान हो गयी । और विचार करने लगी ।

अष्टांगी का बृहमा गायत्री और पुहुपावती को शाप देना

अष्टांगी को ये जानकर बेहद आश्चर्य हुआ कि बृहमा ने निरंजन के दर्शन पा लिये हैं । जबकि अलख निरंजन ने तो ऐसी प्रतिज्ञा कर रखी है कि उसे कोई आँखों से देख नहीं पायेगा । फ़िर ये तीनों लबारी झूठे कपटी कैसे कहते हैं कि उन्होंने निरंजन को देखा है । तब उसी क्षण अष्टांगी ने ध्यान किया ।

इस पर निरंजन उसके ध्यान में बोला - मुझे सत्य बताओ ।

फ़िर निरंजन ने कहा - बृहमा ने मेरा दर्शन नहीं पाया । उसने तुम्हारे पास आकर झूठी गवाही दिलवायी । उन तीनों ने झूठ बनाकर सब कहा है । वह सब मत मानों । वह झूठ है ।

अष्टांगी को यह सुनकर बहुत क्रोध आया । और उन्होंने बृहमा को शाप दिया - हे बृहमा ! तुमने मुझसे आकर झूठ बोला । अतः कोई तुम्हारी पूजा नहीं करेगा । एक तो तुम झूठ बोले । और दूसरे तुमने न करने योग्य कर्म यानी दुष्कर्म करके बहुत बड़ा पाप अपने सिर ले लिया है ।

आगे जो भी तुम्हारी शाखा संतति होगी । वह बहुत झूठ और पाप करेगी । तुम्हारी संतति (बृहमा के वंश अथवा बृहमा के नाम से पुकारे जाने वाले ब्राहमण) प्रकट में तो बहुत नियम धर्म वृत उपवास पूजा शुचि आदि करेंगे ।

परन्तु उनके मन में भीतर पाप मैल का विस्तार रहेगा । वे तुम्हारी संतान विष्णु भक्तों से अहंकार करेंगी । इसलिये नरक को प्राप्त होंगी । तुम्हारे वंश वाले पुराणों की धर्म कथाओं को लोगों को समझायेंगे । परन्तु स्वयँ उसका आचरण न करके दुख पायेंगे । उनसे जो और लोग ज्ञान की बात सुनेंगे । उसके अनुसार वे भक्ति कर सत्य को बतायेंगे । ब्राह्मण परमात्मा का ज्ञान और भक्ति को छोड़कर दूसरे देवताओं को ईश्वर का अंश बताकर उनकी भक्ति पूजा करायेंगे । औरों की निंदा करके विकराल काल के मुँह में जायेंगे ।
अनेक देवी देवताओं की बहुत प्रकार से पूजा करके यजमानों से दक्षिणा लेंगे । और दक्षिणा के कारण पशु बलि में पशुओं का गला कटवायेंगे । या दक्षिणा के लालच में यजमानों को बेबकूफ़ बनायेंगे । फ़िर वे जिसको शिष्य बनायेंगे । उसे भी परमार्थ या कल्याण का रास्ता नहीं दिखायेंगे । परमार्थ के तो वे पास भी नहीं जायेंगे । परन्तु स्वार्थ के लिये वे सबको अपनी बात समझायेंगे । वे आप स्वार्थी होकर सबको अपनी स्वार्थ सिद्ध का ज्ञान सुनायेंगे । और संसार में अपनी सेवा पूजा मजबूत करेंगे । अपने आपको ऊँचा और औरों को छोटा कहेंगे । इस प्रकार हे बृह्मा ! तेरे वंशज तेरे ही जैसे झूठे और कपटी होंगे ।
अष्टांगी का ऐसा शाप सुनकर बृह्मा मूर्छित होकर गिर पड़े ।
फ़िर अष्टांगी ने गायत्री को शाप दिया - हे गायत्री ! बृह्मा के साथ कामभावना से हो जाने से मनुष्य जन्म में तेरे पाँच पति होंगे । हे गायत्री ! तेरे गाय रूपी शरीर में बैल पति होंगे । और वे सात पाँच से भी अधिक होंगे । पशु योनि में तू गाय बनकर जन्म लेगी । और न खाने योग्य पदार्थ खायेगी । तुमने अपने स्वार्थ के लिये मुझसे झूठ बोला । और झूठे वचन कहे । क्या सोचकर तुमने झूठी गवाही दी ?
गायत्री ने अपनी गलती मानकर शाप को स्वीकार कर लिया । इसके बाद अष्टांगी ने सावित्री की ओर देखा । और बोली - तुमने अपना नाम तो सुन्दर पुहुपावती रखवा लिया । परन्तु झूठ बोलकर तुमने अपने जन्म का नाश कर लिया । हे पुहुपावती ! सुन । तुम्हारे विश्वास पर । तुमसे कोई आशा रखकर कोई तुम्हें नहीं पूजेगा । अब दुर्गंध के स्थान पर तुम्हारा वास होगा । काम विषय की आशा लेकर अब नरक की यातना भोगो । जान बूझकर जो तुम्हें सींचकर लगायेगा । उसके वंश की हानि होगी । अब तुम जाओ । और वृक्ष बनकर जन्मों । तुम्हारा नाम केवड़ा केतकी होगा ।
कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! माता अष्टांगी के शाप के कारण तीनों बृह्मा गायत्री और सावित्री बहुत दुखी हो गये । अपने पापकर्म से वे बुद्धिहीन और दुर्बल हो गये । काम विषय में प्रवृत कराने वाली कामिनी स्त्री काल रूप काम (वासना की इच्छा) की अति तीवृ कला है । इसने सबको अपने शरीर के सुन्दर चर्म से डसा है । शंकर बृह्मा सनकादि और नारद जैसे कोई भी इससे बच नहीं पाये ।
हे धर्मदास ! इससे कोई बिरला ही सन्त साधक बच पाता है । जो सदगुरु के सत्य शब्दों को भली प्रकार अपनाता है । सदगुरु के शब्द प्रताप से ये काल कला मनुष्य को नहीं व्यापती । अर्थात कोई हानि नहीं करती । जो कल्याण की इच्छा रखने वाला भक्त मन वचन कर्म से सतगुरु के श्री चरणों की शरण गृहण करता है । पाप उसके पास नहीं आता ।
कबीर साहब आगे बोले - हे धर्मदास ! बृह्मा विष्णु महेश तीनों को शाप देने के बाद अष्टांगी माता मन में पछताने लगी । उसने सोचा । शाप देते समय मुझे बिलकुल दया नहीं आयी । अब न जाने निरंजन मेरे साथ कैसा व्यवहार करेगा ?
उसी समय आकाशवाणी हुयी - हे भवानी ! तुमने यह क्या किया ? मैंने तो तुम्हें सृष्टि की रचना के लिये भेजा था । परन्तु तुमने शाप देकर यह कैसा चरित्र किया ? हे भवानी ! ऊँचा और बलबान ही निर्बल को सताता है । और यह निश्चित है कि वह इसके बदले दुख पाता है । इसलिये जब द्वापर युग आयेगा । तब तुम्हारे भी पाँच पति होंगे ।
जब भवानी ने अपने शाप के बदले निरंजन का शाप सुना । तो मन में सोच विचार किया । पर मुँह से कुछ न

बोली । वह सोचने लगी - मैंने बदले में शाप पाया । हे निरंजन राव ! मैं तो तेरे वश में हूँ । जैसा चाहो । व्यवहार करो ।

फ़िर अष्टांगी ने विष्णु को दुलारते हुये कहा - हे पुत्र ! तुम मेरी बात सुनो । सच सच बताओ । जब तुम पिता के चरण स्पर्श करने गये । तब क्या हुआ ? पहले तो तुम्हारा शरीर गोरा था । तुम श्याम रंग कैसे हो गये ?

विष्णु ने कहा - हे माता ! पिता के दर्शन हेतु जब मैं पाताललोक पहुँचा । तो शेषनाग के पास पहुँच गया । वहां उसके विष के तेज से मैं सुस्त (अचेत सा) हो गया । मेरे शरीर में उसके विष का तेज समा गया । जिससे वह श्याम हो गया ।

तब एक आवाज हुयी - हे विष्णु ! तुम माता के पास लौट जाओ । यह मेरा सत्य वचन है कि जैसे ही सतयुग त्रेतायुग बीत जायेंगे । तब द्वापर में तुम्हारा कृष्ण अवतार होगा । उस समय तुम शेषनाग से अपना बदला लोगे । तब तुम यमुना नदी पर जाकर नाग का मान मर्दन करोगे । यह मेरा नियम है कि जो भी ऊँचा नीचे वाले को सताता है । उसका बदला वह मुझसे पाता है । जो जीव दूसरे को दुख देता है । उसे मैं दुख देता हूँ । हे माता ! उस आवाज को सुनकर मैं तुम्हारे पास आ गया । यही सत्य है । मुझे पिता के श्री चरण नहीं मिले ।

भवानी यह सुनकर प्रसन्न हो गयी । और बोली - हे पुत्र सुनो ! मैं तुम्हें तुम्हारे पिता से मिलाती हूँ । और तुम्हारे मन का भृम मिटाती हूँ । पहले तुम बाहर की स्थूल दृष्टि (शरीर की आँखें) छोड़कर । भीतर की ज्ञान दृष्टि (अन्तर की आँख । तीसरी आँख) से देखो । और अपने हृदय में मेरा वचन परखो ।

स्थूल देह के भीतर सूक्ष्म मन के स्वरूप को ही कर्ता समझो । मन के अलावा दूसरा और किसी को कर्ता न मानों ।

यह मन बहुत ही चंचल और गतिशील है । यह क्षण भर में स्वर्ग पाताल की दौड़ लगाता है । और स्वछन्द होकर सब ओर विचरता है । मन एक क्षण में अनन्त कला दिखाता है । और इस मन को कोई नहीं देख पाता । मन को ही निराकार कहो । मन के ही सहारे दिन रात रहो ।

हे विष्णु ! बाहरी दुनियाँ से ध्यान हटाकर अंतर्मुखी हो जाओ । और अपनी सुरति और दृष्टि को पलटकर भृकुटि के मध्य (भोंहों के बीच आज्ञा चक्र) पर या हृदय के शून्य में ज्योति को देखो । जहाँ ज्योति झिलमिल झालर सी प्रकाशित होती है ।

तब विष्णु ने अपनी स्वांस को घुमाकर भीतर आकाश की ओर दौड़ाया । और (अंतर) आकाश मार्ग में ध्यान लगाया । विष्णु ने हृदय गुफ़ा में प्रवेश कर ध्यान लगाया । ध्यान प्रकिया में विष्णु ने पहले स्वांस का संयम प्राणायाम से किया । कुम्भक में जब उन्होंने स्वांस को रोका । तो प्राण ऊपर उठकर ध्यान के केन्द्र शून्य 0 में आया । वहाँ विष्णु को अनहद नाद की गर्जना सुनाई दी । यह अनहद बाजा सुनते हुये विष्णु प्रसन्न हो गये । तब मन ने उन्हें सफ़ेद लाल काला पीला आदि रंगीन प्रकाश दिखाया ।

हे धर्मदास ! इसके बाद विष्णु को ..मन ने अपने आपको दिखाया । और ज्योति प्रकाश किया । जिसे देखकर वह प्रसन्न हो गये । और बोले - हे माता ! आपकी कृपा से आज मैंने ईश्वर को देखा ।

तब धर्मदास चौंककर बोले - हे सदगुरु कबीर साहब ! यह सुनकर मेरे भीतर एक भृम उत्पन्न हुआ है । अष्टांगी कन्या ने जो मन का ध्यान ? बताया । इससे तो समस्त जीव भरमा गये हैं ? यानी भृम में पड़ गये हैं ?? (इस बात पर विशेष गौर करें)

तब कबीर साहिब बोले - हे धर्मदास ! यह काल निरंजन का स्वभाव ही है कि इसके चक्कर में पड़ने से विष्णु सत्यपुरुष का भेद नहीं जान पाये । (निरंजन ने अष्टांगी को पहले ही सचेत कर आदेश दे दिया था कि सत्यपुरुष का कोई भेद जानने न पाये । ऐसी माया फ़ैलाना) अब उस कामिनी अष्टांगी की यह चाल देखो कि उसने अमृतस्वरूप सत्यपुरुष को छुपाकर विष रूप काल निरंजन को दिखाया ।

जिस ज्योति का ध्यान अष्टांगी ने बताया । उस ज्योति से काल निरंजन को दूसरा न समझो । हे धर्मदास ! अब

तुम यह विलक्षण गूढ सत्य सुनो । ज्योति का जैसा प्रकट रूप होता है । वैसा ही गुप्त रूप भी है । जो ह्रदय के भीतर है । वह ही बाहर देखने में भी आता है ।

जब कोई मनुष्य दीपक जलाता है । तो उस ज्योति के भाव स्वभाव को देखो । और निर्णय करो । उस ज्योति को देखकर पतंगा बहुत खुश होता है । और प्रेमवश अपना भला जानकर उसके पास आता है । लेकिन ज्योति को स्पर्श करते ही पतंगा भस्म हो जाता है । इस प्रकार अज्ञानता में मतबाला हुआ वह पतंगा उसमें जल मरता है । ज्योति स्वरूप काल निरंजन भी ऐसा ही है । जो भी जीवात्मा उसके चक्कर में आ जाता है । क्रूर काल उसे छोड़ता नहीं ।

इस काल ने करोंड़ो विष्णु अवतारों को खाया । और अनेकों बृह्मा शंकर को खाया । तथा अपने इशारे पर नचाया । काल द्वारा दिये जाने वाले जीवों के कौन कौन से दुख को कहूँ ? वह लाखों जीव नित्य ही खाता है । ऐसा वह भयंकर काल निर्दयी है ।

तब धर्मदास बोले - हे साहिब ! मेरे मन में एक संशय है । अष्टांगी को सत्यपुरुष ने उत्पन्न किया था । और जिस प्रकार उत्पन्न किया । वह सब कथा मैंने जानी । काल निरंजन ने उसे भी खा लिया । फ़िर वह सत्यपुरुष के प्रताप से बाहर आयी ।

फ़िर उस अष्टांगी ने ऐसा धोखा क्यों किया कि काल निरंजन को तो प्रकट किया । और सत्यपुरुष का भेद गुप्त रखा ? यहाँ तक कि सत्यपुरुष का भेद उसने अपने पुत्रों बृहमा विष्णु महेश को भी नहीं बताया । और उनसे भी काल निरंजन का ध्यान कराया । यह अष्टांगी ने कैसा चरित्र किया कि सत्यपुरुष को छोड़कर काल निरंजन की साथी हो गयी । अर्थात जिन सत्यपुरुष का वह अंश थी । उसका ध्यान क्यों नहीं कराया ?

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास सुनो । नारी का स्वभाव जैसा होता है । वह अब तुम्हें बताता हूँ । जिसके घर में पुत्री होती है । वह अनेक जतन करके उसे पालता पोसता है । वह उसे पहनने को वस्त्र । खाने को भोजन । सोने को शैय्या । रहने को घर आदि सब सुख देता है । और घर बाहर सब जगह उस पर विश्वास करता है । उसके माता पिता उसके हित में यज्ञ आदि करा के विवाह करते हुये विधिपूर्वक उसे विदा करते हैं । माता पिता के घर से विदा होकर जब वह अपने पति के घर आ जाती है । तो उसके साथ सब गुणों में होकर प्रेम में इतनी मगन हो जाती है कि अपने माता पिता सबको भुला देती है ।

हे धर्मदास ! नारी का यही स्वभाव है । इसलिये नारी स्वभाववश अष्टांगी भी पराये स्वभाव वाली ही हो गयी । वह काल निरंजन के साथ होकर उसी की होकर रह गयी । और उसी के रंग में रंग गयी । इसीलिये उसने सत्यपुरुष का भेद प्रकट नहीं किया । और अपने पुत्र विष्णु को काल निरंजन का ही रूप दिखाया ।

काल निरंजन का धोखा

तब धर्मदास बोले - हे साहिब ! यह रहस्य तो मैंने जान लिया । अब आगे का रहस्य बताओ । आगे क्या हुआ ?

कबीर साहब बोले - अष्टांगी ने विष्णु को प्यार किया । और कहा । मेरे बड़े पुत्र बृहमा ने तो व्यभिचार और झूठ से अपनी मान मर्यादा खो दी । हे पुत्र विष्णु ! अब सब देवताओं में तुम्ही ईश्वर होगे । सब देवता तुम्ही को श्रेष्ठ मानेंगे । और तुम्हारी पूजा करेंगे । जिसकी इच्छा तुम मन में करोगे । वह कार्य मैं पूरा करूँगी ।

फ़िर अष्टांगी शंकर के पास गयीं । और बोली - हे शिव ! तुम मुझसे अपने मन की बात कहो । तुम जो चाहते हो वह मुझसे मांगो । अपने दोनों पुत्रों को तो मैंने उनके कर्मानुसार दे दिया है ।

तब शंकर जी ने हाथ जोड़कर कहा - हे माता ! जैसा तुमने कहा । वह मुझे दीजिये । मेरा यह शरीर कभी नष्ट न हो । ऐसा वर दीजिये ।

अष्टांगी ने कहा - ऐसा नहीं हो सकता । क्योंकि आदि पुरुष के अलावा कोई दूसरा अमर नहीं हुआ । तुम प्रेमपूर्वक प्राण पवन का योग संयम करके योग तप करो । तो चार युग तक तुम्हारी देह बनी रहेगी । तब जहाँ तक प्रथ्वी आकाश होगा । तुम्हारी देह कभी नष्ट नहीं होगी ।

विष्णु और महेश ऐसा वर पाकर बहुत प्रसन्न हुये । पर बृह्मा बहुत उदास हुये । तब वह विष्णु के पास पहुँचे । और बोले - हे भाई ! माता के वरदान से तुम देवताओं में प्रमुख और श्रेष्ठ हो । माता तुम पर दयालु हुयी । पर मैं उदास हूँ । अब मैं माता को क्या दोष दूँ । यह सब मेरी ही करनी का फ़ल है । तुम कोई ऐसा उपाय करो । जिससे मेरा वंश भी चले । और माता का शाप भी भंग न हो ।

तब विष्णु बोले - हे भाई बृह्मा ! तुम मन का भय और दुख त्याग दो कि माता ने मुझे श्रेष्ठ पद दिया है । मैं सदा तुम्हारे साथ तुम्हारी सेवा करूँगा । तुम बड़े हो । और मैं छोटा हूँ । अतः तुम्हारा मान सम्मान बराबर करूँगा । जो कोई मेरा भक्त होगा । वह तुम्हारे भी वंश की सेवा करेगा ।

हे भाई ! मैं संसार में ऐसा मत विश्वास बना दूँगा कि जो कोई पुण्य फ़ल की आशा करता हो । और उसके लिये वह जो भी यज्ञ धर्म पूजा वृत आदि जो भी कार्य करता हो । वह बिना ब्राह्मण के नहीं होंगे । जो ब्राह्मणों की सेवा करेगा । उस पर महापुण्य का प्रभाव होगा । वह जीव मुझे बहुत प्यारा होगा । और मैं उसे अपने समान बैकुंठ में रखूँगा ।

यह सुनकर बृह्मा बहुत प्रसन्न हुये । विष्णु ने उनके मन की चिंता मिटा दी । बृह्मा ने कहा । मेरी भी यही चाह थी कि मेरा वंश सुखी हो ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! काल निरंजन के फ़ैलाये जाल का विस्तार देखो । उसने खानी वाणी के मोह से मोहित कर सारे संसार को ठग लिया । और सब इसके चक्कर में पड़कर अपने आप ही इसके बंधन में बँध गये । तथा परमात्मा को । स्वयँ को । अपने कल्याण को भूल ही गये । यह काल निरंजन विभिन्न सुख भोग आदि तथा स्वर्ग आदि का लालच देकर सब जीवों को भरमाता है । और उनसे भांति भांति के कर्म करवाता है । फ़िर उन्हें जन्म मरण के झूले में झुलाता हुआ बहु भांति कष्ट देता है ।

** खानी और वाणी बँधन क्या है - स्त्री । पति । पुत्र । पुत्री । परिवार । धन संपत्ति आदि को ही सब कुछ मानना खानी बँधन है । तथा भूत । प्रेत । स्वर्ग । नरक । मान । अपमान आदि कल्पनायें करते हुये विभिन्न चिंतन करना वाणी का बंधन है । क्योंकि मन इन दोनों जगह ही जीव को अटकाये रखता है ।

सन्तमत में खानी बंधन को मोटी माया और वाणी बंधन को झीनी माया कहते हैं । बिना ज्ञान के इन बंधनों से छूट पाना जीव के लिये बेहद कठिन होता है ।

खानी बंधन के अंतर्गत मोटी माया को त्याग करते तो बहुत लोग देखे गये हैं । आज भी करते हैं । परन्तु झीनी माया का त्याग विरले ही कर पाते हैं ।

- मोटी माया सब तजें । झीनी तजी न जाय । मान बड़ाई ईर्ष्या । फ़िर लख चौरासी 84 लाये ।

कामना वासना रूपी झीनी माया का बंधन बहुत ही जटिल है । इसने सभी को भृम में फ़ँसा रखा है । इसके जाल में फ़ँसा कभी स्थिर नहीं हो पाता । अतः यह काल निरंजन सब जीवों को अपने जाल में फ़ँसाकर बहुत सताता है ।

राजा बलि । हरिश्चन्द्र । वेणु । विरोचन । कर्ण । युधिष्ठर आदि और भी प्रथ्वी के प्राणियों का हित चिंतन करने वाले कितने त्यागी और दानी राजा हुये । इनको काल निरंजन ने किस देश में ले जाकर रखा ?? यानी ये सब भी काल के गाल में ही समा गये । काल निरंजन ने इन सभी राजाओं की जो दुर्दशा की । वह सारा संसार ही जानता है कि ये सब वेवश होकर काल के अधीन थे ।

संसार जानता है कि काल निरंजन से अलग न हो पाने के कारण उनके ह्रदय की शुद्धि नहीं हुयी । काल निरंजन बहुत प्रबल है । उसने सबकी बुद्धि हर ली है । ये काल निरंजन अभिमानी मन हुआ जीवों की देह के भीतर ही रहता है । उसके प्रभाव में आकर जीव मन की तरंग में विषय वासना में भूला रहता है । जिससे वह अपने कल्याण के साधन नहीं कर पाता । तब ये अज्ञानी भ्रमित जीव अपने घर अमरलोक की तरफ़ पलटकर भी नहीं देखता । और सत्य से सदा अंजान ही रहता है ।

धर्मदास बोले - हे साहिब ! आपकी कृपा से मैंने यम यानी काल निरंजन का धोखा तो पहचान लिया है । अब आप बताओ कि गायत्री के शाप का आगे क्या हुआ ?

कबीर साहब बोले - हे प्रिय धर्मदास सुनो । मैं तुम्हारे सामने अगम (जहाँ पहुँचना या जानना असंभव जैसा हो) ज्ञान कहता हूँ । गायत्री ने अष्टांगी द्वारा दिया हुआ शाप स्वीकार तो कर लिया । पर उसने भी पलटकर अष्टांगी माता को शाप दिया कि हे माता ! मनुष्य जन्म में जब मैं पाँच पुरुषों की पत्नी बनूँ । तो उन पुरुषों की माता तुम बनो ।

उस समय तुम बिना पुरुष के ही पुत्र उत्पन्न करोगी । और इस बात को संसार जानेगा । आगे द्वापर युग आने पर दोनों ने गायत्री ने द्रोपदी और अष्टांगी ने कुन्ती के रूप में देह धारण की । और एक दूसरे के शाप का फ़ल भुगता ।

जब यह शाप और उसका झगङा समाप्त हो गया । तब फ़िर से जगत की रचना हुयी । बृह्मा विष्णु महेश और अष्टांगी इन चारों ने अण्डज पिण्डज ऊष्मज और स्थावर इन चार खानियों को उत्पन्न किया । फ़िर 4 खानियों के अंतर्गत भिन्न भिन्न स्वभाव की 84 लाख योनियाँ उत्पन्न की ।

सबसे पहले अष्टांगी ने अण्डज - यानी अंडे से उत्पन्न होने वाले जीव खानि की रचना की । बृह्मा ने पिण्डज - यानी शरीर के अन्दर गर्भ से उत्पन्न होने वाले जीव खानि की रचना की । विष्णु ने ऊष्मज - यानी मैल । पसीना । पानी आदि से उत्पन्न होने वाले जीव खानि की रचना की । शंकर ने स्थावर - यानी वृक्ष । जङ । पहाङ । घास । बेल आदि जीव खानि की रचना की । इस तरह से चारों खानियों को इन चारों ने रच दिया । और उसमें जीव को बँधन में डाल दिया ।

फ़िर प्रथ्वी पर खेती आदि होने लगी । तथा समयानुसार लोग कारण करण और कर्ता को समझने लगे । इस प्रकार चार खानों की चौरासी का विस्तार हो गया । इन चार खानियों को बोलने के लिये चार प्रकार की वाणी दी गयी ।

बृह्मा विष्णु महेश और अष्टांगी द्वारा सृष्टि रचना होने के कारण जीव उन्हीं को सब कुछ समझने लगे । और सत्यपुरुष की तरफ़ से भूले रहे ।

4 खानि 84 लाख योनियों से आये मनुष्य के लक्षण

धर्मदास बोले - हे साहिब ! जिन चार खानों की उत्पत्ति हुयी । आप उनका वर्णन मुझे बतायें । 84 लाख योनियों की जो विकराल धारायें हैं । उनमें किस योनि का कितना विस्तार हुआ । वह भी बतायें ।

कबीर साहब बोले - हे धनी धर्मदास सुनो । मैं तुम्हें योनि भाव का वर्णन सुनाता हूँ ।

84 लाख योनियों में 9 लाख जल के जीव हैं । और 14 लाख पक्षी होते हैं । उङने रेंगने वाले कृमि कीट आदि 27 लाख होते हैं । वृक्ष बेल फ़ूल आदि स्थावर 30 लाख होते हैं । और 4 लाख प्रकार के मनुष्य हुये । इन सब योनियों में मनुष्य देह सबसे श्रेष्ठ है । क्योंकि इसी से मोक्ष को जाना समझा और प्राप्त किया जा सकता है ।

मनुष्य योनि के अतिरिक्त और किसी योनि में मोक्ष पद या परमात्मा का ज्ञान नहीं होता । क्योंकि और योनि के जीव कर्म बँधन में भटकते रहते हैं ।

तब धर्मदास बोले - हे साहिब ! जब सभी योनियों के जीव एक समान हैं । तो फ़िर सभी जीवों को एक सा ज्ञान क्यों नहीं है ?

कबीर साहिब बोले - हे धर्मदास ! सुनो । जीवों की इस असमानता की वजह तुम्हें समझाकर कहता हूँ । चार खानि के जीव एक समान हैं । परन्तु उनकी शरीर रचना में तत्व विशेष का अन्तर है । स्थावर खानि में सिर्फ़ एक ही तत्व होता है । ऊष्मज खानि में दो तत्व होते हैं । अण्डज खानि में तीन तत्व और पिण्डज खानि में चार तत्व होते हैं । इनसे अलग मनुष्य शरीर में 5 तत्व होते हैं ।

हे धर्मदास ! अब चार खानि का तत्व निर्णय भी जानों । अण्डज खानि में 3 तत्व - जल अग्नि और वायु हैं । स्थावर खानि में एक तत्व जल विशेष है । ऊष्मज खानि में दो तत्व वायु तथा अग्नि बराबर समझो । पिण्डज खानि में 4 तत्व अग्नि प्रथ्वी जल और वायु विशेष हैं । पिण्डज खानि में ही आने वाला मनुष्य - अग्नि वायु प्रथ्वी जल आकाश से बना है ।

तब धर्मदास बोले - हे बन्दीछोङ ! सदगुरु कबीर साहिब.. मनुष्य योनि में नर नारी तत्वों में एक समान हैं । परन्तु सबको एक समान ज्ञान क्यों नहीं है । संतोष । क्षमा । दया । शील । आदि सदगुणों से कोई मनुष्य तो शून्य 0 होता है । तथा कोई इन गुणों से परिपूर्ण होता है । कोई मनुष्य पाप कर्म करने वाला अपराधी होता है । तो कोई विद्वान । कोई दूसरों को दुख देने वाले स्वभाव का होता है । तो कोई अति क्रोधी काल रूप होता है । कोई मनुष्य किसी जीव को मारकर उसका आहार करता है । तो कोई जीवों के प्रति दया भाव रखता है । कोई आध्यात्म की बात सुनकर सुख पाता है । तो कोई काल निरंजन के गुण गाता है । हे साहिब मनुष्यों में यह नाना गुण किस कारण से होते हैं ?

कबीर साहिब बोले - हे धर्मदास ! सुनो । मैं तुमसे मनुष्य योनि के नर नारी के गुण अवगुण को भली प्रकार से कहता हूँ । किस कारण से मनुष्य ज्ञानी और अज्ञानी भाव वाला होता है । वह पहचान सुनो ।

शेर । साँप । कुत्ता । गीदङ । सियार । कौवा । गिद्ध । सुअर । बिल्ली तथा इनके अलावा और भी अनेक जीव हैं । जो इनके समान हिंसक । पाप योनि । अभक्ष्य माँस आदि खाने वाले दुष्कर्मी । नीच गुणों वाले समझे जाते हैं । इन योनियों में से जो जीव आकर मनुष्य योनि में जन्म लेता है । तो भी उसके पीछे की योनि का स्वभाव नहीं छूटता । उसके पूर्व कर्मों का प्रभाव उसको अभी प्राप्त मानव योनि में भी बना रहता है । अतः वह मनुष्य देह पाकर भी पूर्व के से कर्मों में प्रवृत रहता है । ऐसे पशु योनियों से आये जीव नर देह में होते हुये भी प्रत्यक्ष पशु ही दिखायी देते हैं ।

जिस योनि से जो मनुष्य आया है । उसका स्वभाव भी वैसा ही होगा । जो दूसरों पर घात करने वाले क्रूर हिंसक पापकर्मी तथा क्रोधी विषैले स्वभाव के जीव हैं । उनका भी वैसा ही स्वभाव बना रहता है ।

हे धर्मदास ! मनुष्य योनि में जन्म लेकर ऐसे स्वभाव को मेटने का एक ही उपाय है कि किसी प्रकार सौभाग्य से सदगुरु मिल जायँ । तो वे ज्ञान द्वारा अज्ञान से उत्पन्न इस प्रभाव को नष्ट कर देते हैं । और फ़िर मनुष्य काग दशा (विष्ठा मल आदि के समान वासनाओं की चाहत) के प्रभाव को भूल जाता है । उसका अज्ञान पूरी तरह समाप्त हो जाता है ।

तब हे भाई ! पूर्व पशु योनि और अभी की मनुष्य योनि का यह द्वंद छूट जाता है । श्री सदगुरुदेव ज्ञान के आधार हैं । वे अपने शरण में आये हुये जीव को ज्ञान अग्नि में तपाकर एवं उपाय से घिस पीटकर सत्यज्ञान उपदेश अनुसार उसे वैसा ही बना लेते हैं । और निरंतर साधना अभ्यास से उस पर प्रभावी पूर्व योनियों के संस्कार समाप्त कर देते हैं ।

हे धर्मदास ! जिस प्रकार धोबी वस्त्र धोता है । और साबुन मलने से वस्त्र साफ़ हो जाता है । ..तब वस्त्र में यदि थोड़ा सा ही मैल हो । तो वह थोडी ही मेहनत से साफ़ हो जाता है । परन्तु वस्त्र बहुत अधिक गन्दा हो । तो उसको धोने में अधिक मेहनत की आवश्यकता होती है । हे धर्मदास ! वस्त्र की भांति ही जीवों के स्वभाव को जानों । कोई कोई जीव जो अंकुरी होता है । ऐसा जीव सदगुरु के थोडे से ज्ञान को ही विचार कर शीघ्र गृहण कर लेता है । उसे ज्ञान का संकेत ही बहुत होता है । अधिक ज्ञान की आवश्यकता नहीं होती । ऐसा शिष्य ही सच्चे ज्ञान का अधिकारी होता है ।

तब धर्मदास बोले - हे साहिब ! यह तो थोडी सी योनियों की बात हुयी । अब आप चार खानि के जीवों की बात कहें । चार खानि के जीव जब मनुष्य योनि में आते हैं । उनके लक्षण क्या हैं ? जिसे जानकर मैं सावधान हो जाऊँ ।

कबीर साहिब बोले - हे धर्मदास सुनो । 4 खानों की 84 लाख योनियों में भरमाया भटकता जीव जब बडे भाग्य से मनुष्य देह धारण करने का अवसर पाता है । तब उसके अच्छे बुरे लक्षणों का भेद तुमसे कहता हूँ ।

जिसको बहुत ही आलस नींद आती है । तथा कामी क्रोधी और दरिद्र होता है । वह अण्डज खानि से आया हुआ होता है । जो बहुत चंचल होता है । और चोरी करना जिसे अच्छा लगता है । धन माया की बहुत इच्छा रखता है । दूसरों की चुगली निंदा जिसे अच्छी लगती है । इसी स्वभाव के कारण वह दूसरों के घर वन तथा झाडी में आग लगाता है । तथा चंचल होने के कारण कभी बहुत रोता है । कभी नाचता कूदता है । कभी मंगल गाता है । भूत प्रेत की सेवा उसके मन को बहुत अच्छी लगती है । किसी को कुछ देता हुआ देखकर वह मन में चिडता है । किसी भी विषय पर सबसे वाद विवाद करता है । ज्ञान ध्यान उसके मन में कुछ नहीं आते । वह गुरु सदगुरु को नहीं पहचानता न मानता । वेद शास्त्र को भी नहीं मानता । वह अपने मन से ही छोटा बडा बनता रहता है । और यह समझता है कि मेरे समान दूसरा कोई नहीं है । उसके वस्त्र मैले तथा आँखे कीचड युक्त और मुँह से लार बहती है । वह अक्सर नहाता भी नहीं है । जुआ चौपड के खेल में मन लगाता है । उसका पांव लम्बा होता है । और कभी कभी वह कुबडा भी होता है । हे धर्मदास ! ये सब अण्डज खानि से आये मनुष्य के लक्षण हैं ।

हे धर्मदास ! अब ऊष्मज के बारे में कहता हूँ । यह जंगल में जाकर शिकार करते हुये बहुत जीवों को मारकर खुश होता है । इन जीवों को मारकर अनेक तरह से पकाकर वह खाता है । वह सदगुरु के नाम ज्ञान की निंदा करता है । गुरु की बुराई और निंदा करके वह गुरु के महत्व को मिटाने का प्रयास करता है । वह शब्द उपदेश और गुरु की निंदा करता है । वह बहुत बात करता है । तथा बहुत अकडता है । और अहंकार के कारण बहुत ज्ञान बनाकर समझाता है । वह सभा में झूठे वचन कहता है । टेडी पगडी बाँधता है । जिसका किनारा छाती तक लटकता है । दया धर्म उसके मन में नहीं होता । जो कोई पुण्य धर्म करता है । वह उसकी हँसी उडाता है । माला पहनता है । और चंदन का तिलक लगाता है । तथा शुद्ध सफ़ेद वस्त्र पहनकर बाजार आदि में घूमता है । वह अन्दर से पापी और बाहर से दयावान दिखता है । ऐसा अधम नीच जीव यम के हाथ बिक जाता है । उसके दाँत लम्बे तथा बदन

भयानक होता है । उसके पीले नेत्र होते हैं ।

कबीर साहिब बोले - हे धर्मदास ! अब स्थावर खानि से आये जीव (मनुष्य) के लक्षण सुनो । इससे आया जीव भैंसे के समान शरीर धारण करता है । ऐसे जीवों की बुद्धि क्षणिक होती है । अतः उनको पलटने में देर नहीं लगती । वह कमर में फ़ेंटा बाँधता है । तथा सिर पर पगडी बाँधता है । तथा राज दरबार की सेवा करता है । और कमर में तलवार कटार बाँधता है । इधर उधर देखता हुआ मन से सैन (आँख मारकर इशारा करना) मारता है । परायी स्त्री को सैन से बुलाता है । वह मुँह से रसभरी मीठी बातें कहता है । जिनमें कामवासना का प्रभाव होता है । वह दूसरे के घर को कुदृष्टि से ताकता है । तथा जाकर चोरी करता है । पकडे जाने पर राजा के पास लाया जाता है । जब सारा संसार भी उसकी हँसी उडाता है । फ़िर भी उसको लाज नहीं आती । एक क्षण में ही वह देवी देवता की पूजा करने की सोचता है । दूसरे ही क्षण विचार बदल देता है । कभी उसका मन किसी की सेवा में लग जाता है । फ़िर जल्दी ही वह उसको भूल भी जाता है । एक क्षण में ही वह किताब (कोई) पढकर ज्ञानी बन जाता है । एक क्षण में ही वह सबके घर आना जाना घूमना करता है । एक क्षण में ही बहादुर और एक क्षण में ही कायर भी हो जाता है । एक क्षण में ही मन में साहू (धनी) हो जाता है । और दूसरे क्षण में ही चोरी करने की सोचता है । एक क्षण में धर्म और दूसरे क्षण में अधर्म भी करता है । इस प्रकार क्षण प्रतिक्षण मन के बदलते भावों के साथ वह सुखी दुखी होता है । वह भोजन करते समय माथा खुजाता है । तथा फ़िर बाँह जाँघ पर रगडता है । भोजन करता है । फ़िर सो जाता है । जो जगाता है । उसे मारने दौडता है । और गुस्से से जिसकी आँखे लाल हो जाती हैं । और उसका भेद कहाँ तक कहूँ ।

हे धर्मदास ! अब पिण्डज खानि से आये जीव का लक्षण सुनो । पिण्डज खानि से आया जीव वैरागी होता है । तथा योग साधना की मुद्राओं में उनमनी समाधि का मत आदि धारण करने वाला होता है । और वह जीव वेद आदि का विचार कर धर्म कर्म करता है । वह तीर्थ वृत ध्यान योग समाधि में लगन वाला होता है । उसका मन गुरु के चरणों में भली प्रकार लगता है । वह वेद पुराण का ज्ञानी होकर बहुत ज्ञान करता है । और सभा में बैठकर मधुर वार्तालाप करता है । राज मिलने का तथा राज के कार्य करने का और स्त्री सुख को बहुत मानता है । कभी भी अपने मन में शंका नहीं लाता । और धन संपत्ति के सुख को मानता है । बिस्तर पर सुन्दर शैया बिछाता है । उसे उत्तम शुद्ध सात्विक पौष्टिक भोजन बहुत अच्छा लगता है । और लोंग सुपारी पान बीडा आदि खाता है । वह पुण्य कर्म में धन खर्च करता है । उसकी आँखों में तेज और शरीर में पुरुषार्थ होता है । स्वर्ग सदा उसके वश में है । वह कहीं भी देवी देवता को देखता है । तो माथा झुकाता है । उसका ध्यान सुमरन में बहुत मन लगता है । तथा वह सदा गुरु के अधीन रहता है ।

हे धर्मदास ! मैंने चारों खानि के लक्षण तुमसे कहे । अब सुनो । मनुष्य योनि की अवधि समाप्त होने से पहले किसी कारण से देह छूट जाय । वह फ़िर से संसार में मनुष्य जन्म लेता है । अब उसके बारे में सुनो ।

84 क्यों बनी ?

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! मैंने चारों खानि के लक्षण तुमसे कहे । अब सुनो । मनुष्य योनि की अवधि समाप्त होने से पहले किसी कारण से देह छूट जाय । वह फ़िर से संसार में मनुष्य जन्म लेता है । अब उसके बारे में सुनो ।

तब धर्मदास बोले - हे साहिब ! मेरे मन में एक संशय उठा है । वह मुझे समझाईये । जब 84 लाख योनियों में भरमने भटकने के बाद ये जीव मनुष्य देह पाता है । और मनुष्य देह पाया हुआ ये जीव फ़िर देह (असमय) छूटने पर पुनः मनुष्य देह पाता है । तो मृत्यु होने और पुनः मनुष्य देह पाने की यह संधि कैसे हुयी ? यह विधि मुझे समझाईये । और उस पुनः मनुष्य जन्म लेने वाले मनुष्य के गुण लक्षण भी कहो ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! सुनो । आयु शेष रहते जो मनुष्य मर जाता है । फ़िर वह शेष बची आयु को पूरा करने हेतु मनुष्य शरीर धारण करके आता है । जो अज्ञानी मूर्ख फ़िर भी इस पर विश्वास न करे । वह दीपक बत्ती जलाकर देखे । और बहुत प्रकार से उस दीपक में तेल भरे । परन्तु वायु का झोंका (मृत्यु आघात) लगते ही वह दीपक बुझ जाता है (भले ही उसमें खूब तेल भरा हो) उसे बुझे दीपक को आग से फ़िर जलायें । तो वह दीपक फ़िर से जल जाता है । इसी प्रकार जीव मनुष्य फ़िर से देह धारण करता है ।

हे धनी धर्मदास ! अब उस मनुष्य के लक्षण भी सुनो । उसका भेद तुमसे नही छुपाऊँगा । मनुष्य से फ़िर मनुष्य का शरीर पाने वाला वह मनुष्य शूरवीर होता है । भय और डर उसके पास भी नहीं फ़टकता । मोह माया ममता उसे नहीं व्यापते । उसे देखकर दुश्मन डर से कांपते हैं । वह सतगुरु के सत्य शब्द को विश्वास पूर्वक मानता है । निंदा को वह जानता तक नहीं है । वह सदा सदगुरु के श्रीचरणों में अपना मन लगाता है । और सबसे प्रेममयी वाणी बोलता है । अज्ञानी होकर (जानते हुये भी) ज्ञान को पूछता समझता है । उसे सत्यनाम का ज्ञान और परिचय करना बेहद अच्छा लगता है ।

हे धर्मदास ! ऐसे लक्षणों से युक्त मनुष्य से ज्ञान वार्ता करने का अवसर कभी खोना नहीं चाहिये । और अवसर मिलते ही उससे ज्ञान चर्चा करनी चाहिये । जो जीव सदगुरु के शब्द (नाम या महामंत्र) रूपी उपदेश को पाता है । और भली प्रकार गृहण करता है । उसके जन्म जन्म का पाप और अज्ञान रूपी मैल छूट जाता है । सत्यनाम का प्रेमभाव से सुमरन करने वाला जीव भयानक काल माया के फ़ंदे से छूटकर सत्यलोक जाता है । सदगुरु के शब्द उपदेश को ह्रदय में धारण करने वाला जीव अमृतमय अनमोल होता है । वह सत्यनाम साधना के बल पर अपने असली घर अमरलोक (या सत्यलोक एक ही बात है) चला जाता है । जहाँ सदगुरु के हँस जीव सदा आनन्द करते हैं । और अमृत का आहार करते हैं । जबकि काल निरंजन के जीव कागदशा (विष्ठा मल के समान घृणित वासनाओं के लालची) में भटकते हुये जन्म मरण के काल झूले में झूलते रहते हैं ।

सत्यनाम के प्रताप से काल निरंजन जीव को सत्यलोक जाने से नहीं रोकता । क्योंकि महाबली काल निरंजन केवल इसी से भयभीत रहता है । उस जीव पर सदगुरु के वंश की छाप (दीक्षा के समय लगने वाली नाम मोहर) देखकर काल बेबशी से सिर झुकाकर रह जाता है ।

तब धर्मदास बोले - हे साहिब ! आपने चार खानि के जो विचार कहे । वो मैंने सुने । अब मैं यह जानना चाहता हूँ कि 84 लाख योनियों की यह धारा का विस्तार किस कारण से किया गया । और इस अविनाशी जीव को अनगिनत कष्टों में डाल दिया गया । मनुष्य के कारण ही यह सृष्टि बनायी गयी है । या कि कोई और जीव को भी भोग भुगतने के लिये बनायी गयी है ?

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! सभी योनियों में श्रेष्ठ यह मनुष्य देह सुख को देने वाली है । इस मनुष्य देह में ही गुरु ज्ञान समाता है । जिसको प्राप्त कर मनुष्य अपना कल्याण कर सकता है । ऐसा मनुष्य सरीर पाकर जीव जहाँ भी जाता है । सदगुरु की भक्ति के बिना दुख ही पाता है ।

मनुष्य देह को पाने के लिये जीव को 84 के भयानक महाजाल से गुजरना ही होता है । फ़िर भी यह देह पाकर मनुष्य अज्ञान और पाप में ही लगा रहता है । तो उसका घोर पतन निश्चित है । उसे फ़िर से भयंकर कष्टदायक साढे 12 लाख साल की 84 धारा से गुजरना होगा । दर बदर भटकना होगा ।

सत्य ज्ञान के बिना मनुष्य तुच्छ विषय भोगों के पीछे भागता हुआ अपना जीवन बिना परमार्थ के ही नष्ट कर लेता है । ऐसे जीव का कल्याण किस तरह हो सकता है ? उसे मोक्ष भला कैसे मिलेगा ? अतः इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये सतगुरु की तलाश और उनकी सेवा भक्ति अति आवश्यक है ।

हे धर्मदास ! मनुष्य के भोग उद्देश्य से 84 धारा या 84 लाख योनियाँ रची गयीं हैं । सांसारिक माया और मन इन्द्रियों के विषयों के मोह में पङकर मनुष्य की बुद्धि (विवेक) का नाश हो जाता है । वह मूढ अज्ञानी ही हो जाता है । और वह सदगुरु के शब्द उपदेश को नहीं सुनता । तो वह मनुष्य 84 को नहीं छोङ पाता ।

उस अज्ञानी जीव को भयंकर काल निरंजन 84 में लाकर डालता है । जहाँ भोजन । नींद । डर और मैथुन के अतिरिक्त किसी पदार्थ का ज्ञान या अन्य ज्ञान बिलकुल नहीं है । 84 लाख योनियों के विषय वासना के प्रबल संस्कार के वशीभूत हुआ ये जीव बार बार क्रूर काल के मुँह में जाता है । और अत्यन्त दुखदायी जन्म मरण को भोगता हुआ भी ये अपने कल्याण का साधन नहीं करता ।

हे धर्मदास ! अज्ञानी जीवों की इस घोर विपत्ति संकट को जानकर उन्हें सावधान करने के लिये (सन्तों ने) पुकारा । और बहुत प्रकार से समझाया कि मनुष्य शरीर पाकर सत्यनाम गृहण करो । और इस सत्यनाम के प्रताप से अपने निज धाम सत्यलोक को प्राप्त करो । आदि पुरुष के विदेह (बिना वाणी से जपा जाने वाला) और स्थिर आदि नाम (जो शुरूआत से एक ही है) को जो जाँच समझकर (सच्चे गुरु से - मतलब ये नाम मुँह से जपने के बजाय धुनि रूप होकर प्रकट हो जाय । यही सच्चे गुरु और सच्ची दीक्षा की पहचान है) जो जीव गृहण करता है । उसका निश्चित ही कल्याण होता है । गुरु से प्राप्त ज्ञान से आचरण करता हुआ वह जीव सार को गृहण करने वाला नीर क्षीर विवेकी

(हँस की तरह दूध और पानी के अन्तर को जानने वाला) हो जाता है । और कौवे की गति (साधारण और दीक्षा रहित मनुष्य) त्याग कर हँस गति वाला हो जाता है । इस प्रकार की ज्ञान दृष्टि के प्राप्त होने से वह विनाशी तथा अविनाशी का विचार करके इस नश्वर नाशवान जङ देह के भीतर ही अगोचर और अविनाशी परमात्मा को देखता है ।

हे धर्मदास ! विचार करो । वह निअक्षर (शाश्वत नाम) ही सार है । जो अक्षर (ज्योति जिस पर सभी योनियों के शरीर बनते हैं । ..ध्यान की एक ऊँची स्थिति) से प्राप्त होता है । सब जङ तत्वों से परे वही असली सारतत्व है ।

काल निरंजन की चालबाजी

तब धर्मदास बोले - हे साहिब ! अब आप आगे की बात कहो । चार खानियों की रचना कर फ़िर क्या किया ? यह मुझे स्पष्ट कहो ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास यह काल निरंजन की चालबाजी है । जिसे पंडित काजी नहीं समझते । और वे इस भक्षक काल निरंजन को भ्रमवश स्वामी (भगवान आदि) कहते हैं । और सत्यपुरुष के नाम ज्ञान रूपी अमृत को त्याग कर माया का विषय रूपी विष खाते हैं । इन चारों.. अष्टांगी (देवी आदिशक्ति) बृहमा । विष्णु । महेश । ने मिलकर यह सृष्टि रचना की । और उन्होंने जीव की देह को कच्चा रंग दिया । इसीलिये मनुष्य की देह में आयु समय आदि के अनुसार बदलाव होता रहता है । 5 तत्व - प्रथ्वी । जल । वायु । अग्नि । आकाश और 3 गुण - सत । रज । तम से देह की रचना हुयी है । उसके साथ चौदह 14 यम लगाये गये हैं । इस प्रकार मनुष्य देह की रचना कर काल ने उसे मार खाया । तथा फ़िर फ़िर.. उत्पन्न किया । इस तरह मनुष्य सदा जन्म मरण के

चक्कर में पङा ही रहता है । ॐकार वेद का मूल अर्थात आधार है । और इस ॐकार में ही संसार भूला भूला फ़िर रहा है (बल्कि फ़ूला फ़ूला फ़िर रहा है - राजीव) संसार के लोगों ने ॐकार को ही ईश्वर परमात्मा सब कुछ मान लिया । वे इसमें उलझकर सब ज्ञान भूल गये । और तरह तरह से इसी की व्याख्या करने लगे । यह ॐकार ही (भी) निरंजन है । परन्तु आदि पुरुष का सत्यनाम जो विदेह है । उसे गुप्त समझो । काल माया से परे वह आदि नाम गुप्त ही है ।

(यह बात एक दृष्टि से सही है । परन्तु मैंने ॐकार द्वारा शरीर बनना बताया है । अतः मेरे नियमित पाठकों को भ्रम हो सकता है । लेकिन ..सत्यपुरुष ने जीव बीज को " सोहंग " रूप में काल पुरुष को दिया था । तब इस परिवार ने अपनी इच्छानुसार मनुष्य या अन्य जीव बनाये । और काल अदृष्य होकर मन रूप में सब जीवों के भीतर बैठ गया । अतः ये शरीर उसी का है । उसी के अधिकार में है । अतः ॐकार को काल निरंजन कह सकते हैं । क्योंकि अविनाशी " सोहंग " जीव शरीर में रहते हुये भी उससे अलग ही है ।)

हे धर्मदास ! फ़िर बृहमा ने 88 000 ऋषियों को उत्पन्न किया । जिससे काल निरंजन का बहुत प्रभाव बङ गया (क्योंकि वे उसी का गुण तो गाते हैं) बृहमा से जो जीव उत्पन्न हुये । वो ब्राहमण कहलाये । ब्राहमणों ने आगे इसी शिक्षा के लिये शास्त्रों का विस्तार कर दिया (इससे काल निरंजन का प्रभाव और भी बङा । क्योंकि उनमें उसी की बनाबटी महिमा गायी गयी है)

बृहमा ने स्मृति । शास्त्र । पुराण आदि धर्म गृन्थों का विस्त्रत वर्णन किया । और उसमें समस्त जीवों को बुरी तरह उलझा दिया (जबकि परमात्मा को जानने का सीधा सरल आसान रास्ता " सहज योग " है) जीवों को बृहमा ने भटका दिया । और शास्त्र में तरह तरह के कर्म कांड । पूजा । उपासना की नियम विधि बताकर जीवों को सत्य से विमुख कर भयानक काल निरंजन के मुँह में डालकर उसी की (अलख निरंजन) महिमा को बताकर झूठा ध्यान (और ज्ञान) कराया । इस तरह " वेद मत " से सब भृमित हो गये । और सत्यपुरुष के रहस्य को न जान सके ।

हे धर्मदास ! निरंकार (निरंकारी) निरंजन ने यह कैसा झूठा तमाशा किया । उस चरित्र को भी समझो ।

काल निरंजन आसुरी भाव (मन द्वारा) उत्पन्न कर प्रताङित जीवों को सताता है । देवता । ऋषि । मुनि सभी को प्रताङित करता है । फ़िर अवतार (दिखावे के लिये । निज महिमा के लिये) धारण कर रक्षक बनता है (जबकि सबसे बङा भक्षक स्वयँ हैं) और फ़िर असुरों का संहार (का नाटक) करता है । और इस तरह सबसे अपनी महिमा का विशेष गुणगान करवाता है । जिसके कारण जीव उसे शक्ति संपन्न और सब कुछ जानकर उसी से आशा बाँधते हैं कि - यही हमारा महान रक्षक है ???

विशेष - कुछ पाठकों ने कहा था कि लिखा है - अवतार विष्णु लेते हैं ।.. ऐसा काल निरंजन खुद विष्णु को मायाशक्ति से भरमाता है । यानी खुद को छिपाये रखने हेतु अवतार में जिक्र विष्णु (खुद विष्णु से भी) का करता है । और राम ..कृष्ण ये दो अवतार खुद लेता है । यह बात यहाँ स्पष्ट हो गयी ।)

वह अपनी रक्षक कला दिखाकर अन्त में सव जीवों का भक्षण कर लेता है (यहाँ तक कि अपने पुत्र बृहमा विष्णु महेश को भी नहीं छोङता) जीवन भर उसके नाम ज्ञान जप पूजा आदि के चक्कर में पङा जीव अन्त समय पछताता है । जब काल उसे बेरहमी से खाता है (मृत्यु से कुछ पहले अपनी आगामी गति पता लग जाती है)

हे धर्मदास ! अब आगे सुनो । बृहमा ने 68 तीर्थ स्थापित कर पाप पुण्य और कर्म अकर्म का वर्णन किया । फ़िर बृहमा ने 12 राशि । 27 नक्षत्र । 7 वार और 15 तिथि का विधान रचा । इस प्रकार ज्योतिष शास्त्र की रचना हुयी । अब आगे की बात सुनो ।

तप्तशिला पर काल पीङित जीवों की सत्यपुरुष को पुकार

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! काल निरंजन का जाल फ़ैलाने के लिये बनाये गये 68 तीर्थ ये हैं - 1 काशी 2 प्रयाग 3 नैमिषारण्य 4 गया 5 कुरुक्षेत्र 6 प्रभास 7 पुष्कर 8 विश्वेश्वर 9 अट्टहास 10 महेंद्र 11 उज्जैन 12 मरुकोट 13 शंकुकर्ण 14 गोकर्ण 15 रुद्रकोट 16 स्थलेश्वर 17 हर्षित 18 वृषभध्वज 19 केदार 20 मध्यमेश्वर 21 सुपर्ण 22 कार्तिकेश्वर 23 रामेश्वर 24 कनखल 25 भद्रकर्ण 26 दंडक 27 चिदण्डा 28 कृमिजांगल 29 एकाग्र 30 छागलेय 31 कालिंजर 32 मंडकेश्वर 33 मथुरा 34 मरुकेश्वर 35 हरिश्चंद्र 36 सिद्धार्थ क्षेत्र 37 वामेश्वर 38 कुक्कुटेश्वर 39 भस्मगात्र 40 अमरकंटक 41 त्रिसंध्या 42 विरजा 43 अर्केश्वर 44 द्वारिका 45 दुष्कर्ण 46 करबीर 47 जलेश्वर 48 श्रीशैल 49 अयोध्या 50 जगन्नाथपुरी 51 कारोहण 52 देविका 53 भैरव 54 पूर्व सागर 55 सप्त गोदावरी 56 निमलेश्वर 57 कर्णिकार 58 कैलाश 59 गंगाद्वार 60 जललिंग 61 बङवागिन 62 बद्रिकाश्रम 63 श्रेष्ठ स्थान 64 विंध्याचल 65 हेमकूट 66 गंधमादन 67 लिंगेश्वर 68 हरिद्वार

और बारह राशियाँ - 1 मेष 2 वृष 3 मिथुन 4 कर्क 5 सिंह 6 कन्या 7 तुला 8 वृश्चिक 9 धनु 10 मकर 11 कुंभ 12 मीन..ये हैं ।

तथा सत्ताईस नक्षत्र - 1 अश्विनी 2 भरणी 3 कृत्तिका 4 रोहिणी 5 मृगशिरा 6 आर्द्रा 7 पुनर्वसु 8 पुष्य 9 आश्लेषा 10 मघा 11 पूर्वाफ़ाल्गुनी 12 उत्तराफ़ाल्गुनी 13 हस्त 14 चित्रा 15 स्वाति 16 विशाखा 17 अनुराधा 18 ज्येष्ठा 19 मूल 20 पूर्वाषाढा 21 उत्तराषाढा 22 श्रवण 23 धर्निष्ठा 24 शतभिषा 25 पूर्वाभाद्रप्रद 26 उत्तराभादप्रद 27 रेवती..ये हैं ।

सात दिन - 1 रविवार 2 सोमवार 3 मंगलवार 4 बुधवार 5 बृहस्पतिवार 6 शुक्रवार 7 शनिवार

पंद्रह तिथियाँ - 1 प्रथम या पङवा 2 दूज 3 तीज 4 चौथ 5 पंचमी 6 षष्ठी 7 सप्तमी 8 अष्टमी 9 नवमी 10 दशमी 11 एकादशी 12 द्वादशी 13 त्रयोदशी 14 चौदस 15 पूर्णिमा (शुक्ल पक्ष) दूसरा एक कृष्ण पक्ष भी होता है । जिसकी सभी तिथियाँ ऐसी ही होती हैं । केवल उसकी पंद्रहवी तिथि को पूर्णिमा के स्थान पर अमावस्या कहते हैं ।

हे धनी धर्मदास ! फ़िर बृहमा ने चारों युगों के समय को एक नियम से विस्तार करते हुये बाँध दिया । एक पलक झपकने में जितना समय लगता है । उसे पल कहते हैं । 60 पलक को 1 घङी कहते हैं । 1 घङी 24 मिनट की होती है । साढे 7 घङी का 1 पहर होता है । 8 पहर का दिन रात 24 घंटे होते हैं । 7 दिनों का 1 सप्ताह और 15 दिनों का 1 पक्ष होता है । 2 पक्ष का 1 महीना । और 12 महीने का 1 वर्ष होता है । 17 लाख 28 हजार वर्ष का सतयुग । 12 लाख 96 हजार का त्रेता । और 8 लाख 64 हजार का द्वापर । 4 लाख 32 हजार का कलियुग होता है । 4 युगों को मिलाकर 1 महायुग होता है ।

(युगों का समय गलत ..बल्कि बहुत ज्यादा गलत है । ये विवरण कबीर साहब द्वारा बताया हुआ नहीं है । बल्कि शास्त्र आधार पर है । कलियुग सिर्फ़ 22 000 वर्ष का होता है । और त्रेता लगभग 38 000 का होता है । यह सही आयु मेरे ब्लाग में प्रकाशित हो चुकी है । अतः इस सम्बन्ध में चर्चा इस लेख का विषय नहीं है - राजीव)

हे धर्मदास 12 महीने में कार्तिक और माघ इन दो महीनों को पुण्य वाला कह दिया । जिससे जीव विभिन्न धर्म कर्म करे । और उलझा रहे । जीवों को इस प्रकार भृम में डालने वाले काल निरंजन (एन्ड फ़ैमिली) की चालाकी कोई बिरला साधक ही समझ पाता है ।

प्रत्येक तीर्थ धाम का बहुत महात्मय (महिमा) बताया । जिससे कि मोहवश जीव लालच में तीर्थों की ओर भागने लगे । अपनी बहुत सी कामनाओं की पूर्ति के लिये लोग तीर्थों में नहाकर पानी और पत्थर से बनी देवी देवता की मूर्तियों को पूजने लगे । लोग आत्मा परमात्मा (के ज्ञान) को भूलकर इस झूठ पूजा के भृम में पङ गये । इस तरह काल ने सब जीवों को बुरी तरह उलझा दिया ।

सदगुरु के सत्य शब्द उपदेश बिना जीव सांसारिक कलेश काम क्रोध शोक मोह चिंता आदि से नहीं बच सकता । सदगुरु के नाम बिना वह यमरूपी काल के मुँह में ही जायेगा । और बहुत से दुखों को भोगेगा । वास्तव में जीव काल निरंजन का भय मानकर ही पुण्य कमाता है । थोङे फ़ल से..धन संपत्ति आदि से उसकी भूख शान्त नहीं होती ।

जब तक जीव सत्यपुरुष से डोर नहीं जोङता । सदगुरु से (हँस) दीक्षा लेकर भक्ति नहीं करता । तब तक 84 लाख योनियों में बारबार आता जाता रहेगा । यह काल निरंजन अपनी असीम कला जीव पर लगाता है । और उसे भरमाता है । जिससे जीव सत्यपुरुष का भेद नहीं जान पाता ।

लाभ के लिये जीव लोभवश शास्त्र में बताये कर्मों की और दौङता फ़िरता है । और उससे फ़ल पाने की आशा करता है । इस प्रकार जीव को झूठी आशा बँधाकर काल धरकर खा जाता है । काल निरंजन की चालाकी कोई पहचान नहीं पाता । और काल निरंजन शास्त्रों द्वारा पाप पुण्य के कर्मों से स्वर्ग नरक की प्राप्ति और विषय भोगों की आशा बँधाकर जीव को 84 लाख योनियों में नचाता है ।

पहले सतयुग में इस काल निरंजन का यह व्यवहार था कि वह जीवों को लेकर आहार करता था । वह एक लाख जीव नित्य खाता था । ऐसा महान और अपार बलशाली काल निरंजन कसाई है । वहाँ रात दिन तप्तशिला जलती थी । काल निरंजन जीवों को पकङकर उस पर धरता था । उस तप्तशिला पर उन जीवों को जलाता था । और बहुत दुख देता था । फ़िर वह उन्हें 84 में डाल देता था ।

उसके बाद जीवों को तमाम योनियों में भरमाता भटकाता था । इस प्रकार काल निरंजन जीवों को अनेक प्रकार के बहुत से कष्ट देता था । तब अनेकानेक जीवों ने अनेक प्रकार से दुखी होकर पुकारा कि - काल निरंजन हम जीवों को अपार कष्ट दे रहा है । इस यम काल का दिया हुआ कष्ट हमसे सहा नहीं जाता । हे सदगुरु ! हमारी सहायता करो । आप हमारी रक्षा करो ।

जब सत्यपुरुष ने जीवों को इस प्रकार पीङित होते देखा । तब उन्हें दया आयी । और उन दया के भंडार स्वामी ने मुझे (ज्ञानी नाम से) बुलाया । और बहुत प्रकार से समझाकर कहा - हे ज्ञानी ! तुम जाकर जीवों को चेताओ । तुम्हारे दर्शन से जीव शीतल हो जायेंगे । जाकर उनकी तपन दूर करो ।

हे धर्मदास ! तब सत्यपुरुष की आज्ञा से मैं वहाँ आया । जहाँ काल निरंजन जीवों को सता रहा था । और दुखी जीव उसके संकेत पर नाच रहे थे ।

हे धर्मदास ! जीव वहाँ दुख से छटपटा रहे थे । और मैं वहाँ जाकर खङा हो गया ।

तब जीवों ने मुझे देखकर पुकारा - हे साहिब ! हमें इस दुख से उबार लो । तम मैंने " सत्य शब्द " पुकारा । और सत्य शब्द का उपदेश किया । और सत्यपुरुष के " सार शब्द " से जीवों को जोङ दिया । तब वे दुख से जलते जीव शान्ति महसूस करने लगे ।

तब सब जीवों ने स्तुति की - हे पुरुष ! आप धन्य हो । आपने हम दुखों से जलते हुओं की तपन बुझायी । हे स्वामी ! आप हमें इस काल निरंजन के जाल से छुङा लो । हे प्रभु ! हम पर दया करो ।

तब मैंने जीवों को समझाया - यदि मैं इस वक्त अपनी शक्ति से तुम्हारा उद्धार करता हूँ । तो सत्यपुरुष का वचन भंग होता है । क्योंकि सत्यपुरुष के वचन अनुसार सद उपदेश द्वारा ही आत्मज्ञान से जीवों का उद्धार करना है ।

अतः जब तुम यहाँ से जाकर मनुष्य देह धारण करोगे । तब तुम मेरे शब्द उपदेश को विश्वास से गृहण करना । जिससे तुम्हारा उद्धार होगा । उस समय मैं सत्यपुरुष के नाम सुमरन की सही विधि और सार शब्द का उपदेश करूँगा । तब तुम विवेकी होकर सत्यलोक जाओगे । और सदा के लिये काल निरंजन के बँधन से मुक्त हो जाओगे ।

जो कोई भी मन वचन कर्म से सुमरन करता है । और जहाँ अपनी आशा रखता है । वहाँ उसका वास होता है । अतः संसार में जाकर देह धारण कर जिसकी आशा करोगे । और उस समय यदि तुम सत्यपुरुष को भूल गये । तो काल निरंजन तुमको धरकर खा जायेगा ।

तब जीव बोले - हे पुरातन पुरुष ! सुनो मनुष्य देह धारण करके (माया रचित वासनाओं में फ़ँसकर) यह ज्ञान भूल ही जाता है । अतः याद नहीं रहता । पहले हमने सत्यपुरुष जानकर काल निरंजन का सुमरन किया कि - वही सब कुछ है । क्योंकि वेद पुराण सभी यही बताते हैं ।

वेद पुराण सभी एक मत होकर यही कहते हैं कि - निराकार निरंजन से प्रेम करो । 33 करोङ देवता । मनुष्य और मुनि सबको निरंजन ने अपने विभिन्न झूठे मतों की डोरी में बाँध रखा है । उसी के झूठे मत से हमने मुक्त होने की आशा की । परन्तु वह हमारी भूल थी । अब हमें सब सही सही रूप से दिखायी दे रहा है । और समझ में आ गया है कि - वह सब दुखदायी यम की काल फ़ाँस ही है ।

तब कबीर साहब बोले - हे जीवों सुनो । यह सब इस काल का धोखा है । इस काल ने विभिन्न मत मतांतरों का फ़ंदा बहुत अधिक फ़ैलाया हुआ है । काल निरंजन ने अनेक कला मतों का प्रदर्शन किया । और जीव को उसमें फ़ँसाने के लिये बहुत ठाठ फ़ैलाया । (यानी तरह तरह की भोग वासना बनायी) और सबको तीर्थ वृत यज्ञ एवं यज्ञादि कर्म कांडो के फ़ंदे में फ़ाँसा । जिससे कोई मुक्त नहीं हो पाता । फ़िर आप शरीर धारण करके प्रकट होता है । और अपनी विशेष महिमा (अवतार द्वारा) करवाता है । और नाना प्रकार के गुण कर्म आदि करके सब जीवों को बँधन में बाँध देता है ।

काल निरंजन और अष्टांगी ने जीव को फ़ँसाने के लिये अनेक मायाजाल रचे । वेद शास्त्र पुराण स्मृति आदि के भ्रामक जाल से भयंकर काल ने मुक्ति का रास्ता ही बन्द कर दिया । जीव मनुष्य देह धारण करके भी अपने कल्याण के लिये उसी से आशा करता है । काल निरंजन की शास्त्र आदि मत रूपी कलाएं बहुत भयंकर हैं । और जीव उसके वश में पङे हैं । सत्यनाम के बिना जीव काल का दंड भोगते हैं ।

इस तरह जीवों को बारबार समझाकर मैं सत्यपुरुष के पास गया । और उनको काल द्वारा दिये जा रहे विभिन्न दुखों का वर्णन किया । दयालु सत्यपुरुष तो दया के भंडार और सबके स्वामी हैं । वे जीव के मूल । अभिमान रहित और निष्कामी हैं ।

तब सत्यपुरुष ने बहुत प्रकार से समझाकर कहा । काल के भ्रुम से छुङाने के लिये जीवों को नाम उपदेश से सावधान करो ।

काल के 4 दूत

तब कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! उन चार दूतों के बारे में तुमसे समझाकर कहता हूँ । उन चार दूतों के नाम - रंभदूत । कुरंभदूत । जयदूत और विजयदूत हैं । अब रंभदूत की बात सुनो । यह भारत के गढ कांलिंजर में अपनी गद्‌दी स्थापित करेगा । और अपना नाम भगत रखेगा । और बहुत जीवों को अपना शिष्य बनायेगा ।

जो कोई जीव अंकुरी होगा । अर्थात जिसमें सत्यज्ञान के प्रति चेतना होगी । तथा जिसके पूर्व के शुभ कर्म होंगे । वह यम (काल निरंजन) के इस फ़ँदे को तोङकर बच जायेगा ।

वह कालरूप रंभदूत बहुत बलबान तथा षङयंत्र करने वाला होगा । वह तुम्हारी और मेरी वार्ता का खंडन करेगा । वह दीक्षा विधान को रोकेगा । और सत्यपुरुष के सत्यलोक और दीपों को झूठा बतायेगा । वह अपनी अलग ही रमैनी कहेगा ।

वह मेरी सत्यवाणी के प्रति विवाद करेगा । जिसके कारण उसके जाल में बहुत लोग फ़ँसेंगे । चारों धाराओं का अपने मतानुसार ज्ञान करेगा । मेरा नाम कबीर जोङकर अपना झूठा प्रचार प्रसार करेगा । वह अपने आपको कबीर ही बतायेगा । और मुझे पाँच तत्व की देह में बसा हुआ बतायेगा ।

हे भाई वह जीव को सत्यपुरुष के समान सिद्‌ध करेगा । तथा सत्यपुरुष का खंडन कर जीव को श्रेष्ठ बतायेगा । हँस जीव को इष्ट कबीर ठहरायेगा । तथा कर्ता को कबीर कहकर पुकारेगा । सबका कर्ता काल निरंजन जीवों को घोर दुख देने वाला है । और उसके ही समान यह यमदूत मुझे भी समझता है ।

वह कर्म करने वाले जीव को ही सत्यपुरुष ठहरायेगा । और सत्यपुरुष के नाम ज्ञान को छिपाकर अपने आपको प्रकट करेगा । विचार करो । यदि वह जीव अपने आप ही सब कुछ होता । तो इस तरह अनेक दुख क्यों भोगता ? पाँच तत्व की देह वाला पाँच तत्व के अधीन हुआ ये जीव दुख पाता है । और रम्भदूत जीव को सत्यपुरुष के समान बताता है । सत्यपुरुष का शरीर तो अजर अमर है । उनकी अनेक कलायें हैं । तथा उनका रूप और छाया नहीं है ।

हे धर्मदास ! ये गुरु ज्ञान अनुपम है । जिसमें बिना दर्पण के अपना रूप दिखायी देता है । अब तुम दूसरे कुरंभ दूत का वर्णन सुनो ।

वह मगध देश में जाकर प्रकट होगा । और अपना नाम धनीदास रखेगा । कुरंभ छल प्रपंच के बहुत से जाल बिछायेगा । और ज्ञानी जीवों को भी भटकायेगा । जिसके हृदय में थोङा भी आत्मज्ञान होगा । ये यमदूत धोखा देकर उसे नष्ट कर देगा ।

हे धर्मदास ! तुम इस कुरंभ की चालबाजी सुनो । यह अपने कथन की टकसार बताकर मजबूत जाल सजायेगा । वह चन्द्र इङा सूर्य पिंगला नाङियों के अनुसार शुभ अशुभ लगन का प्रचार प्रसार करेगा । तथा राहु केतु आदि गृहों का विस्तार से वर्णन करेगा । जब वह पाँच तत्व तथा उनके गुणों के मत को श्रेष्ठ बताकर उनका वर्णन करेगा । तब अज्ञानी जीव उसके फ़ैलाये भृम को नहीं जानेंगे । वह ज्योतिष के मत को टकसार कहकर फ़ैलायेगा । और जीवों को ग्रह नक्षत्र तथा इन्द्रियों के वश में करके उनका असली सत्यपुरुष की भक्ति से ध्यान हटा देगा ।

वह जल और वायु का ज्ञान बतायेगा । और पवन के विभिन्न नामों और गुणों का वर्णन करेगा । वह सत्य से हटकर ऐसी पूजा विधान चलाकर जीवों को धोखा देकर भरमायेगा भटकायेगा । वह अपने शिष्य बनाते समय विशेष नाटक करेगा । वह अंग अंग की रेखा देखेगा । और पाँव के नाखून से सिर की चोटी को देखते हुये जीवों को कर्मजाल में फ़ँसाकर भरमायेगा । वह जीव को देख समझकर तथा शूरवीर कहकर मोह मद में चङाकर धर खायेगा । भरमाये हुये अपने शिष्यों से दक्षिणा में स्वर्ण तथा स्त्री अर्पण करायेगा । इस प्रकार वह जीवों को ठगेगा ।

शिष्य को गाँठ बाँधकर तब वह फ़ेरा करेगा । और कर्म दोष लगाकर उसे यम का गुलाम बना देगा । 85 पवन

काल के हैं । अतः वह शिष्य को पवन नाम लिखकर पान खिलायेगा । वह नीर पवन के ज्ञान का प्रसार करेगा । और शिष्यों को पवन नाम देकर आरती उतरवायेगा । काल के 85 पवन अनुसार पूजा करायेगा ।
हे भाई ! क्या नारी क्या पुरुष । वह सबके शरीर के तिल मस्से की पहचान देखा करेगा । शंख चक्र और सीप के चिन्ह देखेगा । काल निरंजन का वह दूत ऐसी दुष्ट बुद्धि का होगा । और जीवों में संशय उत्पन्न करेगा । तथा उन्हें ग्रसित (बरबाद) करते हुये पीङित करेगा ।
इस कालदूत का और भी झूठ प्रपँच सुनो । वह अपनी साठ समै तथा बारह चौपाईयों को उठाकर जीवों में भ्रम उत्पन्न करेगा । वह पंचामृत एकोत्तर नाम का सुमिरन को श्रेष्ठ शब्द और और मुक्तिदाता बतायेगा ।
जीवों के कल्याण का जो असली ज्ञान आदिकाल से निश्चित है । वह उसे झूठ और धोखा बतायेगा । तथा पाँच तत्व पच्चीस प्रकृति तीन गुण चौदह यम यही ईश्वर है । अर्थात ऐसा कहेगा । तुम ही सब कुछ हो ।
पाँच तत्व का जाल बनाकर यह यमदूत शरीर के तत्वों का ध्यान करायेगा । विचार करो । तत्वों का ध्यान लगायें । तब शरीर छूटने पर कहाँ जायेंगे । तत्व तो तत्व में मिल जायेगा ।
हे धर्मदास ! जीव को जहाँ आशा होती है । वहीं उसका वास होता है । अतः नाम सुमरन से ध्यान हटने पर तत्व में उलझकर वह तत्व में ही समायेगा । (इसका मतलव है - जैसे कोई अग्नि तत्व की पूजा ध्यान आदि करता है । तो देह छूटने पर अग्नि के देवता सम्बंधित कोई छोटा मोटा गण बन जायेगा । यही बात दूसरे तत्वों पर समझो ।)
हे धर्मदास ! कहाँ तक कहूँ । कुरंभ घमासान विनाश करेगा । उसके छल को वही समझेगा । जो जीव सत्यनाम उपदेश को गृहण करने वाला और समझने वाला होगा । पाँचों जङ तत्व तो काल के अंग है । अतः तत्वों के मत में पङकर जीव की दुर्गति ही होगी । और यह सब कुछ वह कबीर के नाम पर । खुद को कबीर पँथी बताकर । इसको कबीर का ज्ञान बताकर करेगा । जो जीव उसके जाल में फ़ँस जायेंगे । वह क्रूर काल निरंजन के मुख में ही जायेंगे ।
हे धर्मदास ! अब तीसरे दूत जयदूत के बारे में जानों । यह यमदूत बङा विकराल होगा । यह झूठा प्रपँची अपनी वाणी को आदि अनादि (वाणी) कहेगा । यह जयदूत कुरकुट ग्राम में जाकर प्रकट होगा । जो बाँधौगढ के पास ही है । वह चमार कुल में उत्पन्न होगा । और ऊँचे कुल वालों की जाति को बिगाङने की कोशिश करेगा । यह यमदूत दास कहायेगा । और गणपत नाम का उसका पुत्र होगा । वे दोनों पिता पुत्र प्रबल काल स्वरूप दुखदायी होंगे । और तुम्हारे वंश को आकर घेरेंगे । अर्थात जीवों के उद्धार में यथाशक्ति बाधा पहुँचायेंगे ।
वह कहेगा । असली ज्ञान हमारे पास है । और हे धर्मदास ! वह तुम्हारे वंश को उठा देगा । अर्थात प्रभाव खत्म करने की कोशिश करेगा । वह अपना अनुभव कहकर अपने बहुत से गृंथ बनायेगा । और उसमें ज्ञानी पुरुष के समान संवाद बनायेगा । वह कहेगा कि मूल ज्ञान तो सत्यपुरुष ने मुझे दिया है । धर्मदास के पास मूल ज्ञान नहीं है । वह तुम्हारे वंश को भरमा देगा । और ज्ञान मार्ग को विचलित करेगा ।
वह तुम्हारे वंश में अपना मत पक्का करेगा । और मूल पारस थाका पँथ चलायेगा । मूल छाप लेकर वंश को बिगाङेगा । वह काल दूत अपना मूल पारस देकर सबकी वैसी ही बुद्धि कर देगा ।
(आप लोगों को रैदास जी की बात याद होगी । जिन्हें एक साधु पारस दे गया था । जिन लोगों ने नहीं पङी । इन्हीं ब्लाग्स में देखें ।)
वह भीतर शून्य 0 में झंकृत होने वाले " झंग " शब्द की बात करेगा । जिससे ज्ञानहीन कच्चे जीव को भुलावा देगा

। पुरुष स्त्री के जिस रज वीर्य (के जल) से शरीर की रचना होती है । उसको ही वह अपना मूल मत प्रचलित करेगा ।

शरीर का मूल आधार बीज काम विषय है । परन्तु उसका नाम वह गुप्त रखेगा । पहले तो वह अपना मूल आधार थाका ही गुप्त रखेगा । फ़िर जब शिष्यों को जोड़कर पूरी तरह साध लेगा । तव उसका वर्णन करेगा । पहले तो ज्ञान गृन्थों को समझायेगा । फ़िर पीछे से अपना मत पक्का करायेगा । वह स्त्री के अंग को पारस ज्ञान देगा । जिसे आज्ञा मानकर उसके सब शिष्य लेंगे ।

पहले वह ज्ञान का शब्द उपदेश समझायेगा । फ़िर काम विषय वासना जो नरक की खान है । उसे वह मूल बखानेगा । वह झांझरी दीप की कथा सुनायेगा ।

हे भाई ! पाँच तत्व से बने शरीर की शून्य 0 गुफ़ा में जाकर ये पाँचों तत्व बहुत प्रकार से रंगीन चमकीला प्रकाश बनाते हैं । उस गुफ़ा में " हंग " शब्द बहुत जोर से उठता है ।

जब " सोहंगम " जीव अपना शरीर छोड़ेगा । तब कौन से विधि से " झंग " शब्द उसके सामने आयेगा । क्योंकि वह तो शरीर के रहने तक ही होता है । शरीर के छूटते ही वह भी समाप्त हो जायेगा । झांझरी दीप काल निरंजन ने रच रखा है । और " झंग - हंग " दोनों काल की ही शाखा हैं ।

ये अन्यायी कालदूत अविहर (स्त्री पुरुष का काम सम्बन्ध) ज्ञान कहेगा । अविहर ज्ञान काल निरंजन का धोखा है । वह तुम्हारे ज्ञान की भी महिमा शामिल करके मिलाकर कहेगा । इसलिये उसके मत में बहुत से कड़िहार महंत होंगे । वह कालदूत स्थान स्थान पर नीच कर्म करेगा । और हमारी बात करते हुये हम पर ही हँसेगा ।

अतः अज्ञानी संसारी लोग समझेंगे कि यह सब समान है ।

अर्थात कबीर का मत और जयदूत का मत एक ही है । जब कोई इस भेद को जानने की कोशिश करेगा । तभी उसे पता चलेगा । जिसके हाथ में सतनाम रूपी दीपक होगा । वह हँस जीव काल के इस जंजाल को त्यागकर अपना कल्याण करेगा । इसमें कोई संदेह नहीं है । ये कपटी काल बगुले का ध्यान लगाये रहेगा । और सत्यनाम को छोड़कर काल सम्बन्धी नामों को प्रकटायेगा ।

हे धर्मदास ! अब चौथे विजयदूत की बात सुनो । यह बुन्देलखन्ड में जाकर प्रकट होगा । और अपना नाम जीव धरायेगा । यह विजयदूत सखा भाव की भक्ति पक्की करेगा । यह सखियों के साथ रास रचायेगा । और मुरली बजायेगा । अनेक सखियों के संग लगन प्रेम लगायेगा । और अपने आपको दूसरा कृष्ण कहायेगा । वह जीवों को धोखा देकर फ़ाँसेगा ।

और कहेगा - आँखों के आगे मन की छाया रहती है । और नाक के ऊपर की ओर आकाश शून्य 0 है । आँख और कान बन्द कर ध्यान लगाने की स्थिति में कोहरा जैसा दीखता है । सफ़ेद । काला । नीला । पीला आदि रंग दिखना चित्त की क्रियायें हैं । परन्तु वह मुक्ति के नाप पर उनमें जीवों को डालकर भरमायेगा । ये सब काल का धोखा है । यह प्रतिक्षण बदलती क्रियायें स्थिर हैं । जो शरीर की आँखों से देखी जाती हैं । अतः यह कालदूत मन की छाया माया दिखायेगा । और मुक्ति का मूल छाया को बतायेगा । यह सत्यनाम से जीव को भटकाकर काल के मुख में ले जायेगा ।

विशेष - अब मेरे तमाम पाठक समझ सकते हैं कि आजकल मुक्ति ज्ञान के नाम पर जो हो रहा है । वह सब क्या है ? क्यों है ? और उसे बताने वाले कौन हैं ?

काल का अपने दूतों को चाल समझाना ।

धर्मदास बोले - हे साहिब ! जीवों के उद्धार के लिये जो वचन वंश चूड़ामणि संसार में आया । वह सब आपने बताया । वचन वंश को जो ज्ञानी पहचान लेगा । उसको काल निरंजन का दुर्गदानी जैसा दूत भी नहीं रोक पायेगा । तीसरा सुरति अंश चूड़ामणि संसार में प्रकट हुआ है । वह मैंने देख लिया । फ़िर भी मुझे एक संशय है । हे साहिब ! मुझे समर्थ सत्यपुरुष ने भेजा था । परन्तु संसार में आकर मैं भी काल निरंजन के जाल में फ़ँस गया । आप मुझे सत सुकृत का अंश कहते हो । तब भी भयंकर काल निरंजन ने मुझे डस लिया ।

अगर ऐसा ही सब वंशो के साथ हुआ । तो संसार के सब जीव नष्ट हो जायेंगे । इसलिये हे साहिब ! ऐसी कृपा करिये कि काल निरंजन सत्यपुरुष के वंशो को अपने छल भेद से न छल पाये ।

तब कबीर साहिब बोले - हे धर्मदास ! यह तुमने ठीक ही कहा है । और तुम्हारा यह संशय भी सत्य है । हे धर्मदास ! अब आगे भविष्य में काल निरंजन क्या चाल खेलेगा ? वह मैं तुम्हें बताता हूँ । जब सतयुग में सत्यपुरुष ने मुझे बुलाया । और संसार में जाकर जीवों को चेताने के लिये कहा । तो काल निरंजन ने रास्ते में मुझसे झगड़ा किया । और मैंने उसका घमन्ड चूर चूर कर दिया । पर उसने मेरे साथ एक धोखा किया । और याचना करते हुये मुझसे तीन युग मांग लिये ।

अन्यायी काल निरंजन ने तब ऐसा कहा था - हे भाई ! मैं चौथा कलियुग नहीं माँगता । और मैंने उसे वचन दे दिया था । और तब जीवों के कल्याण हेतु संसार में आया । क्योंकि मैंने उसको तीन युग दे दिये थे । उसी से उस समय वचन मर्यादा के कारण अपना पँथ प्रकट नहीं किया । लेकिन जब चौथा कलियुग आया ।

तब सत्यपुरुष ने फ़िर से मुझे संसार में भेजा । पहले की ही तरह कसाई काल निरंजन ने मुझे रास्ते में रोका । और मेरे साथ झगड़ा किया । वह बात मैंने तुम्हें बता दी है । और काल निरंजन के बारह पँथ का भेद भी बता दिया है ।

काल निरंजन ने उस समय मुझसे धोखा किया । उसने मुझसे केवल बारह पँथ की बात कही थी । और गुप्त बात मुझको नहीं बतायी । तीन युग में तो वचन लेकर उसने मुझे विवश कर दिया । और कलियुग में बहुत जाल रचकर ऊधम मचाया । काल ने मुझसे सिर्फ़ बारह पँथ की कहकर गुप्त रूप से चार पँथ और बनाये । जब मैंने जीवों को चेताने के लिये चार कडिहार गुरु के निर्माण की व्यवस्था की । तो काल ने अपना अँश दूत भेज दिया । और अपनी छल बुद्धि का विस्तार किया । और अपने चार अँश दूतों को बहुत शिक्षा दी ।

काल निरंजन ने अपने दूतों से कहा - हे मेरे अँशो ! सुनो । तुम तो मेरे अपने वँश हो । तुमसे जो कहूँ । उसे मानो । और मेरी आज्ञा का पालन करो ।

हे भाई ! हमारा एक दुश्मन है । जो संसार में कबीर नाम से जाना जाता है । वह हमारा भवसागर मिटाना चाहता है । और जीवों को दूसरे लोक (सत्यलोक) ले जाना चाहता है । वह छल कपट कर मेरी पूजा के विरुद्ध जगत में भ्रम फ़ैलाता है । और मेरी तरफ़ से सबका मन हटा देता है । वह सत्यनाम की समधुर टेर सुनाकर जीवों को सत्यलोक ले जाता है । इस संसार को प्रकाशित करने में मैंने अपना मन दिया हुआ है । और इसलिये मैंने तुमको उत्पन्न किया । मेरी आज्ञा मानकर तुम संसार में जाओ । और कबीर नाम से झूठे पँथ प्रकट करो । संसार के लालची और मूर्ख जीव काम मोह विषय वासना आदि विषयों के रस में मग्न हैं । अतः मैं जो कहता हूँ । उसी अनुसार उन पर घात लगाकर हमला करो ।

संसार में तुम अपने चार पँथ स्थापित करो । और उनको अपनी अपनी (झूठी) राह बताओ ।
चारों के नाम कबीर नाम पर ही रखो । और बिना कबीर शब्द लगाये मुँह से कोई बात ही न बोलो । अर्थात इस तरह कहो । कबीर ने ऐसा कहा । कबीर ने वैसा कहा । जैसे तुम कबीर की ही वाणी उपदेश कर रहे होओ । कबीर नाम के वशीभूत होकर जब जीव तुम्हारे पास आये । तो उससे ऐसे मीठे वचन कहो । जो उसके मन को अच्छे लगते हों । (अर्थात चोट मारने वाले वाले सत्य ज्ञान की बजाय उसको अच्छी लगने वाली मीठी मीठी बातें करो । क्योंकि तुम्हें जीव को झूठ में उलझाना है ।)

कलियुग के लालची मूर्ख अज्ञानी जीवों को ज्ञान की समझ नहीं है । वे देखा देखी की रास्ता चलते हैं । तुम्हारे वचन सुनकर वे प्रसन्न होंगे । और बारबार तुम्हारे पास आयेंगे । जब उनकी श्रद्धा पक्की हो जाय । और वे कोई भेदभाव न मानें । यानी सत्य के रास्ते और तुम्हारे झूठ के रास्ते को एक ही समझने लगें । तब तुम उन पर अपना जाल डाल दो । पर बेहद होशियारी से । कोई इस रहस्य को जानने न पाये ।

तुम जम्बूदीप (भारत) में अपना स्थान बनाओ । जहाँ पर कबीर के नाम और ज्ञान का प्रमाण है ।

जब कबीर बाँधोंगढ (छत्तीसगढ) में जायें । और धर्मदास को उपदेश दीक्षा आदि दें । तब वे उसके 42 वंश के ज्ञान राज्य को स्थापित करेंगे । तब तुम्हें उसमें घुसपैठ करके उनके राज्य को डांवाडोल करना है । वैसे मैंने 14 यमों की नाकाबन्दी करके जीव के सत्यलोक जाने का मार्ग रोक दिया है । और कबीर के नाम पर 12 झूठे पँथ चलाकर जीव को धोखे में डाल दिया है ।

हे भाई ! तब भी मुझको संशय है । उसी से मैं तुमको वहाँ भेजता हूँ । उनके 42 वंशो पर तुम हमला करो । और उन्हें अपनी बातों में फ़ँसा लो ।

काल निरंजन की बात सुनकर वे चारों दूत बोले - हम ऐसा ही करेंगे ।

यह सुनकर काल निरंजन बहुत प्रसन्न हुआ । और जीवों को छल कपट द्वारा धोखे में रखने के बहुत से उपाय बताने लगा । जीवों पर हमला करने के उसने बहुत से मन्त्र सुनाये ।

फ़िर उसने कहा - अब तुम संसार में जाओ । और चारों तरफ़ फ़ैल जाओ । और ऊँच नीच गरीब अमीर किसी को मत छोङो । और सब पर काल का फ़ँदा कस दो । तुम ऐसी कपट चालाकी करो कि जिससे मेरा आहार जीव कहीं निकलकर न जाने पाये ।

हे धर्मदास ! यही चारों दूत संसार में प्रगट होंगे । जो चार अलग अलग नामों से कबीर के नाम पर पँथ चलायेंगे । इन चार दूतों को मेरे चलाये बारह पँथों का मुखिया मानों ।

इनसे जो चार पँथ चलेंगे । उससे सब ज्ञान उलट पुलट हो जायेगा । ये चार पँथ बारह पँथो का मूल यानी आधार होंगे । जो वचन वँश (कबीर साहिब का असली पँथ) के लिये शूल के समान पीङादायक होंगे । यानी हर तरह से उनके कार्य में विघ्न करते हुये जीवों के उद्धार में बाधा पहुँचायेंगे ।

यह सुनकर धर्मदास घबरा गये । और बोले - हे साहिब ! अब मेरा संशय और भी बङ गया है । मुझे उन काल दूतों के बारे में अवश्य बताओ । आप उनका चरित्र मुझे सुनाओ । उन काल दूतों का वेश और उनका लक्षण कहो । ये संसार में कौन सा रूप बनायेंगे । और किस प्रकार जीवों को मारेंगे । वे कौन से देश में प्रकट होंगे । आप मुझे शीघ्र बताओ ।

यहाँ तो बहुत काल कलेश दुख पीङा है

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास सुनो । सतयुग में जिन जीवों को मैंने नाम ज्ञान का उपदेश किया था । सतयुग में मेरा नाम सत सुकृत था । मैं उस समय राजा धोंधल के पास गया । और उसे सार शब्द का उपदेश सुनाया । उसने मेरे ज्ञान को स्वीकार किया । और उसे मैंने नाम दिया । इसके बाद में मथुरा नगरी आया । यहाँ मुझे खेमसरी नाम की स्त्री मिली । उसके साथ अन्य स्त्री वृद्ध और बच्चे भी थे ।

खेमसरी बोली - हे पुरुष पुरातन ! आप कहाँ से आये हो ?

तब मैंने उससे सत्यपुरुष । सत्यलोक । तथा काल निरंजन आदि का वर्णन किया । खेमसरी ने ये सब सुना । और उसके मन में सत्यपुरुष के लिये प्रेम भी उत्पन्न हुआ । उसके मन में ज्ञान भाव आया । और उसने काल निरंजन की चाल को भी समझा ।

पर खेमसरी के मन में एक संदेह था कि अपनी आँखों से सत्यलोक देखूँ । तब ही मेरे मन में विश्वास हो । तब मैंने (सत सुकृत) उसके शरीर को वहीं रहता हुआ । उसकी आत्मा को एक पल में सतलोक पहुँचा दिया ।

फ़िर अपनी देह में आते ही खेमसरी सत्यलोक को याद करके पछताने लगी । और बोली - हे साहिब ! आपने जो देश दिखाया है । मुझे उसी देश अमरलोक ले चलो । यहाँ तो बहुत काल कलेश दुख पीङा है । यहाँ सिर्फ़ झूठी मोह माया का पसारा है ।

तब मैनें कहा - हे खेमसरी सुनो । जब तक आयु पूरी नहीं हो जाती । तब तक तुम्हें मैं सत्यलोक नहीं ले जा सकता । इसलिये अपनी आयु रहने तक मेरे दिये हुये सत्यनाम का सुमरन करो । अब क्योंकि तुमने तो सत्यलोक देखा है । इसलिये आयु रहने तक तुम दूसरे जीवों को सार शब्द का उपदेश करो ।

जब किसी ज्ञानवान मनुष्य के द्वारा एक भी जीव सत्यपुरुष की शरण में आता है । तब ऐसा ज्ञानवान मनुष्य सत्यपुरुष को बहुत प्रिय होता है ।

जैसे यदि कोई गाय शेर के मुख में जाती हो । यानी शेर उसे खाने वाला हो । और तब कोई बलबान मनुष्य आकर उसे छुङा ले । तो सभी उसकी बङाई करते हैं । जैसे बाघ अपने चंगुल में फ़ँसी गाय को सताता डराता भयभीत करता हुआ मार डालता है । ऐसे ही काल निरंजन जीवों को दुख देता हुआ मारकर खा जाता है । इसलिये जो भी मनुष्य एक भी जीव को सत्यपुरुष की भक्ति में लगाकर काल निरंजन से बचा लेता है । तो वह मनुष्य करोंङो गाय को बचाने के समान पुण्य पाता है ।

(अब समझ गये । आप लोग । मेरे मेहनत करने का कारण - राजीव)

तब खेमसरी मेरे चरणों में गिर पडी । और बोली - हे साहिब ! मुझ पर दया कीजिये । और मुझे इस क्रूर रक्षक के वेश में भक्षक काल निरंजन से बचा लीजिये ।

तब मैंने कहा - हे खेमसरी सुन । यह काल निरंजन का देश है । उसके जाल में फ़ँसने का जो अंदेशा है । वह सत्यपुरुष के नाम से दूर हो जाता है ।

तब खेमसरी बोली - हे साहिब ! आप मुझे वह नामदान (दीक्षा) दीजिये । और काल के पंजो से छुङाकर अपनी आत्मा (गुरु की) बना लीजिये । हे साहिब ! हमारे घर में भी जो अन्य जीव हैं उन्हें भी ये नाम दीजिये ।

हे धरमदास ! तब मैं खेमसरी के घर गया । और सभी जीवों को सत्यनाम उपदेश किया । सब नर नरी मेरे चरणों में गिर गये ।

तब खेमसरी अपने घरवालों से बोली - हे भाई ! यदि अपने जीवन की मुक्ति चाहते हो । तो आकर सदगुरु से शब्द

उपदेश गृहण करो । ये यम के फ़ंदे से छुड़ाने वालें हैं । तुम यह बात सत्य जानों ।

खेमसरी के इन वचनों से सबको विश्वास हो गया । और सब ने आकर विनती की ।

हे साहिब ! हे बन्दीछोड़ गुरु हमारा उद्धार करो । जिससे यम का फ़ंदा नष्ट हो जाये । और जन्म जन्म का कष्ट (जीवन मरण) मिट जाये ।

(इसके बाद दीक्षा की विधि सामान आदि वर्णन मैंने छोड़ दिया है । वह किसी अलग लेख में - राजीव)

तब मैंने उन सबको नामदान करते हुये ध्यान साधना (नाम जप) के बारे में, समझाया । और सार नाम से हँस जीव को बचाया ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! इस तरह सतयुग में मैं 12 जीवों को नाम उपदेश कर सत्यलोक चला गया । हे धर्मदास ! सत्यलोक में रहने वाले जीवों की शोभा मुख से कही नहीं जाती । वहाँ एक हँस (आत्मा) का दिव्य प्रकाश 16 सूर्यों के बराबर होता है ।

फ़िर मैंने कुछ समय तक सत्यलोक में निवास किया । और दोबारा भवसागर में आकर अपने दीक्षित हँस जीवों धोंधल खेमसरी आदि को देखा । मैं रात दिन संसार में गुप्त रूप से रहता हूँ । पर मुझको कोई पहचान नहीं पाता ।

फ़िर सतयुग बीत गया । त्रेता आया । तब त्रेता में मैं मुनीन्द्र स्वामी के नाम से संसार में आया । मुझे देखकर काल निरंजन को बड़ा अफ़सोस हुआ । उसने सोचा । इन्होंने तो मेरे भवसागर को ही उजाड़ दिया । ये जीव को सत्यनाम का उपदेश कर सत्यपुरुष के दरबार में ले जाते हैं । मैंने कितने छल बल के उपाय किये । पर उससे ज्ञानी जी को कोई डर नहीं हुआ । वे मुझसे नहीं डरते हैं । ज्ञानी जी के पास सत्यपुरुष का बल है । उससे मेरा बस इन पर नहीं चलता है । और न ही ये मेरे काल माया के जाल में फ़ँसते हैं ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! जैसे सिंह को देखकर हाथी का ह्रदय भय से कांपने लगता है । और वह प्रथ्वी पर गिर पड़ता है । वैसे ही सत्यपुरुष के नाम से काल निरंजन भय से थरथर कांपता है ।

काल निरंजन का छलावा - 12 पंथ

तब धर्मदास बोले - हे साहिब ! काल निरंजन ने जीव को भरमाने के लिये जो अपने 12 पंथ चलाये । वे मुझे समझाकर कहो ।

कबीर साहिब बोले - हे धर्मदास ! मैं तुमसे काल के बारह पंथ के बारे कहता हूँ ।

मृत्यु अंधा नाम का दूत जो छल बल में शक्तिशाली है । वह स्वयँ तुम्हारे घर में उत्पन्न हुआ है । यह पहला पंथ है । दूसरा तिमिर दूत चलकर आयेगा । उसकी जाति अहीर होगी । और वह नफ़र यानी गुलाम कहलायेगा । वह तुम्हारी बहुत सी पुस्तकों से ज्ञान चुराकर अलग पंथ चलायेगा ।

तीसरा पंथ का नाम अंधा अचेत दूत होगा । वह सेवक होगा । वह तुम्हारे पास आयेगा । और अपना नाम सुरति गोपाल बतायेगा । वह भी अपना अलग पंथ चलायेगा । और जीव को अक्षर योग (काल निरंजन) के भ्रम में डालेगा ।

हे धर्मदास ! चौथा मनभंग नाम का कालदूत होगा । वह कबीरपंथ की मूल कथा का आधार लेकर अपना पंथ चलायेगा । और उसे मूलपंथ कहकर संसार में फ़ैलायेगा । वह जीवों को लूदी नाम लेकर समझायेगा । उपदेश करेगा । और इसी नाम को पारस कहेगा । वह शरीर के भीतर झंकृत होने वाले शून्य 0 के " झंग " शब्द का सुमरन अपने मुख से वर्णन करेगा । सब जीव उसे " थाका " कहकर मानेंगे ।

हे धर्मदास ! पाँचवे पंथ को चलाने वाला ज्ञानभंगी नाम का दूत होगा । उसका पंथ टकसार नाम से होगा । वह इंगला पिंगला नाड़ियों के स्वर को साधकर भविष्य की बात करेगा । जीव को जीभ । नेत्र । मस्तक की रेखा के बारे में बताकर समझायेगा । जीवों के तिल मस्सा आदि चिह्न देखकर उन्हें भ्रम रूपी धोखे में डालेगा । वह जिस जीव के ऊपर जैसा दोष लगायेगा । वैसा ही उसको पान खिलायेगा (नाम आदि देना)

छठा पंथ कमाल नाम का है । वह मन मकरंद दूत के नाम से संसार में आया है । उसने मुर्दे में वास किया । और मेरा पुत्र होकर प्रकट हुआ । वह जीवों को झिलमिल ज्योति का उपदेश करेगा (जो अष्टांगी ने विष्णु को दिखाकर भरमा दिया) और इस तरह वह जीवों को भरमायेगा । जहाँ तक जीव की दृष्टि है । वह झिलमिल ज्योति ही देखेगा । जिसने दोनों आँखो से झिलमिल ज्योति नहीं देखी है । वह कैसे झिलमिल ज्योति के रूप को पहचानेगा ? झिलमिल ज्योति काल निरंजन की है । उस दूत के ह्रदय में सत्य मत समझो । वह तुम्हें भरमाने के लिये है ।

सातवां दूत चितभंग है । वह मन की तरह अनेक रंग रूप बदलकर बोलेगा । वह दीन नाम कहकर पंथ चलायेगा । और देह के भीतर बोलने वाले आत्मा को ही सत्यपुरुष बतायेगा । वह जगत सृष्टि में पाँच तत्व तीन गुण बतायेगा । और ऐसा ज्ञान करता हुआ अपना पंथ चलायेगा । इसके अतिरिक्त आदि पुरुष । काल निरंजन । अष्टांगी । बृह्मा आदि कुछ भी नहीं हैं । ऐसा भृम बनायेगा । सृष्टि हमेशा से है । तथा इसका कर्ता धर्ता कोई नहीं है । इसी को वह ठोस " बीजक " ज्ञान कहेगा ।

वह कहेगा कि अपना आपा ही बृह्म है । वही वचन वाणी बोलता है । तो फ़िर सोचो गुरु का क्या महत्व और आवश्यकता है ? श्रीराम ने वशिष्ठ को और श्रीकृष्ण ने दुर्वासा को गुरु क्यों बनाया ।

जव श्रीकृष्ण जैसों ने गुरुओं की सेवा की । तो ऋषियों मुनियों की फ़िर गिनती ही क्या है ? नारद ने गुरु को दोष लगाया । तो विष्णु ने उनसे नरक भुगतवाया ।

जो बीजक ज्ञान वह दूत थोपेगा । वह ऐसा होगा । जैसे गूलर के भीतर कीड़ा घूमता है । तथा वह कीड़ा समझता है कि संसार इतना ही है । अपने आपको कर्ता धर्ता मानने से जीव का कभी भला न होगा । अपने आपको ही मानने वाला जीव रोता रहेगा ।

आठवां पंथ चलाने वाला अकिल भंग दूत होगा । वह परमधाम कहकर अपना पंथ चलायेगा । कुछ कुरआन तथा वेद की बातें चुराकर अपने पंथ में शामिल करेगा । वह कुछ कुछ मेरे निर्गुण मत की बातें लेगा । और उन सब बातों को मिलाकर एक पुस्तक बनायेगा । इस प्रकार जोड़ जाड़ कर वह बृह्म ज्ञान का पंथ चलायेगा । उसमें कर्म आश्रित (यानी ज्ञान रहित । ज्ञान आश्रित नहीं । कर्म ही पूजा है - मानने वाले) जीव बहुत लिपटेंगे ।

हे धर्मदास ! नौवां पंथ विशंभर दूत का होगा । और उसका जीवन चरित्र ऐसा होगा कि वह राम कबीर नाम का पंथ चलायेगा । वह निर्गुण सगुण दोनों को मिलाकर उपदेश करेगा । पाप पुण्य को एक समझेगा । ऐसा कहता हुआ वह अपना पंथ चलायेगा ।

दसवां पंथ के दूत का नाम नकटा नैन है । वह सतनामी कहकर पंथ चलायेगा । और चार वर्ण के जीवों को एक में मिलायेगा । वह अपने वचन उपदेश में ब्राह्मण । क्षत्रिय । वैश्य । शूद्र सबको एक समान मिलायेगा । परंतु वह सदगुरु के शब्द उपदेश को नहीं पहचानेगा । वह अपने पक्ष को बाँधकर रखेगा । जिससे जीव नरक को जायेंगे । वह शरीर का ज्ञान कथन सब समझायेगा । परन्तु सत्यपुरुष के मार्ग को नहीं पायेगा ।

हे धर्मदास ! काल निरंजन की चालबाजी की बात सुनो । वह जीवों को फ़ँसाने के लिये बड़े बड़े फ़ँदों की रचना करता है । वह काल जीव को अनेक कर्म (पूजा आदि आडंबर । सामाजिक रीति रिवाज) और कर्म जाल में ही

जीव को फ़ाँसकर खा जाता है ।

जो जीव सार शब्द (के बारे में) को पहचानता है । समझता है । वह इस काल निरंजन के यम जाल से छूट जाता है । और श्रद्धा से सत्यनाम का सुमरन करते हुये अमरलोक को जाता है ।

अब ग्यारहवें पंथ की बात सुनो । जिसको चलाने वाला दुर्गदानी नाम का कालदूत अत्यन्त बलशाली होगा । वह जीव पंथ नाम कहकर पंथ चलायेगा । और शरीर ज्ञान के बारे में समझायेगा । उससे भोले अज्ञानी जीव भरमेंगे । और भवसागर से पार नहीं होंगे । जो जीव बहुत अधिक अभिमानी होगा । वह उस कालदूत की बात सुनकर उससे प्रेम करेगा ।

हे धर्मदास ! अब बारहवें पंथ की बात सुनो । इसका कालदूत हँसमुनि नाम का होगा । वह बहुत तरह के चरित्र करेगा । वह वचन वंश के घर में सेवक होगा । और पहले बहुत सेवा करेगा । फ़िर पीछे (अर्थात पहले विश्वास जमायेगा । और जब लोग उसको मानने लगेंगे ।) वह अपना मत प्रकट करेगा । और बहुत से जीवों को अपने जाल में फ़ँसा लेगा । और अंश वंश (कबीर साहब के स्थापित असली ज्ञान) का विरोध करेगा । वह उसके ज्ञान की कुछ बातों को मानेगा । कुछ को नहीं मानेगा ।

इस प्रकार काल निरंजन जीवों पर अपना दांव फ़ेंकते हुये उन्हें अपने फ़ंदे में (असली ज्ञान से दूर) बनाये रखेगा । यानी ऐसी कोशिश करेगा । वह अपने इन अंशो (कालदूतों) से बारह पंथ (झूठे ज्ञान को फ़ैलाने हेतु) प्रकट करायेगा । और ये दूत सिर्फ़ एक बार ही प्रकट नहीं होंगे । बल्कि वे उन पंथों में बारबार आते जाते रहेंगे । और इस तरह बारबार संसार में प्रकट होंगे ।

जहाँ जहाँ भी ये दूत प्रकट होंगे । जीवों को बहुत ज्ञान (भरमाने वाला) कहेंगे । और वे यह सब खुद को कबीरपंथी बताते हुये करेंगे । और वे शरीर ज्ञान का कथन करके सत्यज्ञान के नाम पर काल निरंजन की ही महिमा को घुमा फ़िरा कर बतायेंगे । और अज्ञानी जीव को काल के मुँह में भेजते रहेंगे । काल निरंजन ने ऐसा ही करने का उनको आदेश दिया है ।

जब जब ये निरंजन के दूत संसार में जन्म लेकर प्रकट होंगे । तब तब ये अपना पंथ फ़ैलायेंगे । वे जीवों को हैरान करने वाली विचित्र बातें बतायेंगे । और जीवों को भरमाकर नरक में डालेंगे ।

हे धर्मदास ! सुनो । ऐसा वह काल निरंजन बहुत ही प्रबल है । वह तथा उसके दूत कपट से जीवों को छल बुद्धि वाला ही बनायेंगे ।

अब मेरी बात - पिछले दिनों मेरे पास बहुत से ई मेल इसी तरह की शंकाओं के आये कि फ़लाना बाबा ऐसा ज्ञान दे रहा है । वह यह योग बता रहा है । यह सब क्या है ? और सच्चाई क्या है ?

सच्चाई जानना बहुत सरल है - मैं तो कहता हूँ । आप मुझ पर भी शंका करो कि मैं आपको सही बात बता रहा हूँ । या भरमा रहा हूँ । कबीर की वाणी बीजक (इसकी अभी सही कीमत मुझे पता नहीं । 100 से 500 के बीच में ही होगी ।) अभी भी प्रमाणित है । अगर कबीर जैसे दोहे बनाकर कोई झूठा (कालदूत) ज्ञान इसमें मिलाता भी है । तो कबीर की वाणी अलग ही नजर आती है ।

अब किसी भी गुरु का ज्ञान उपदेश यही कबीर बीजक वाली बात कह रहा है । और दीक्षा के बाद वही क्रियायें आपके सुमरन ध्यान में अनुभव में आती हैं । तो वह गुरु सच्चा है ।

अगर कोई भी आपको माला जपना आदि किसी भी आडंबर को बताता है । नाम मुँह से जपने को बताता है । जैसे ॐ नमो फ़लाने देवाय..तो आप समझ जाओ । वह कौन है ??

ना कर में माला गहूँ । न मुख से बोलूँ राम । हरि मेरा चिंतन करें । मैं पायो आराम । ये है सच ।

आत्मज्ञान की हँसदीक्षा और परमहँस दीक्षा में वाणी या अन्य इन्द्रियों का कोई स्थान नहीं हैं । दोनों ही दीक्षाओं में सुरति को दो अलग अलग स्थानों से जोङा जाता है । मतलब ध्यान बारबार वहीं ले जाने का अभ्यास किया जाता है । जब ध्यान पर साधक की पकङ हो जाती है । तो ये ध्यान खुद ब खुद अपने आप होने लगता है । और तीन महीने के ही सही अभ्यास से दिव्य दर्शन । अन्तर्लोकों की सैर । भंवर गुफ़ा । आसमानी झूला । आदि बहुत अनुभव होते हैं । (पूरी जानकारी के लिये मेरा लेख " सहज समाधि की ओर " पढें ।) इसीलिये इसे " सहज योग " कहा गया है ।

दूसरे दीक्षा के बाद आप एक स्थायी सी शांति महसूस करते हैं । जैसी पहले कभी नहीं की । और आपकी जिन्दगी में । स्वभाव में एक मजबूती सी आ जाती है । इसीलिये सन्तों ने कहा है । फ़िकर मत कर । जिकर कर ।

कबीर और रावण

त्रेता युग में जब मुनीन्द्र स्वामी (कबीर साहब त्रेता में मुनीन्द्र नाम से प्रकट हुये) प्रथ्वी पर आये । और उन्होंने जाकर जीवों से कहा - यम रूपी काल से तुम्हें कौन छुङायेगा ?

तब वे अज्ञानी भ्रमित जीव बोले - हमारा कर्ता धर्ता स्वामी पुराण पुरुष (काल निरंजन) है । वह पुराण पुरुष विष्णु हमारी रक्षा करने वाला है । और हमें यम के फ़ंदे से छुङाने वाला है ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! उन अज्ञानी जीवों में से कोई तो अपनी रक्षा और मुक्ति की आस शंकर से लगाये हुये था । कोई अपनी रक्षा के लिये चंडी देवी को ध्याता गाता था । अब क्या कहूँ । ये वासना का लालची जीव अपनी सदगति भूलकर पराया ही हो गया । और सत्यपुरुष को भूल गया । तथा तुच्छ देवी देवताओं के हाथ लोभवश बिक गया ।

काल निरंजन ने सब जीवों को प्रतिदिन पाप कर्म की कोठरी में डाला हुआ है । और सबको अपने मायाजाल में फ़ँसाकर मार रहा है । यदि सत्यपुरुष की ऐसी आज्ञा होती । तो काल निरंजन को अभी मिटाकर जीवों को भवसागर के तट पर लाऊँ ।

लेकिन यदि अपने बल से ऐसा करूँ । तो सत्यपुरुष का वचन नष्ट होता है । इसलिये उपदेश द्वारा ही जीवों को सावधान करूँ । कितनी विचित्र बात है कि जो (काल निरंजन) इस जीव को दुख देता खाता है । वह जीव उसी की पूजा करता है । इस प्रकार बिना जाने यह जीव यम के मुख में जाता है ।

हे धर्मदास ! तब चारों तरफ़ घूमते हुये मैं लंका देश में आया । वहाँ मुझे विचित्र भाट नाम का श्रद्धालु मिला । उसने मुझसे भवसागर से मुक्ति का उपाय पूछा । और मैंने उसे ज्ञान का उपदेश दिया । उस उपदेश को सुनते ही विचित्र भाट का संशय दूर हो गया । और वह मेरे चरणों में गिर गया । मैंने उसके घर जाकर उसे दीक्षा दी ।

उस विचित्र भाट की स्त्री राजा रावण के महल गयी । और जाकर रानी मंदोदरी को सब बात बतायी ।

उसने मंदोदरी से कहा - हे महारानी जी ! हमारे घर एक सुन्दर महामुनि श्रेष्ठ योगी आये हैं । उनकी महिमा का मैं क्या वर्णन करूँ । ऐसा सन्त योगी मैंने पहले कभी नहीं देखा । मेरे पति ने उनकी शरण ग्रहण की है । और उनसे दीक्षा ली है । तथा इसी में अपने जीवन को सार्थक समझा है ।

यह बात सुनते ही मंदोदरी में भक्ति भाव जागा । और वह मुनीन्द्र स्वामी के दर्शन करने को व्याकुल हो गयी ।

वह दासी को साथ लेकर स्वर्ण हीरा रत्न आदि लेकर विचित्र भाट के घर आयी । और उन्हें अर्पित करते हुये मेरे चरणों में शीश झुकाया । तब मैंने उसको आशीर्वाद दिया ।

मंदोदरी बोली - आपके दर्शन से मेरा दिन आज बहुत शुभ हुआ । मैंने ऐसा तपस्वी पहले कभी नहीं देखा कि जिनके सब अंग सफ़ेद और वस्त्र भी श्वेत (सन्तमत में गेरुआ के बजाय सफ़ेद वस्त्र धारण किये जाते हैं । पर मैं लापरवाह और मौजी टायप का होने के कारण.. क्योंकि सफ़ेद वस्त्र जल्दी गन्दे हो जाते हैं । इसलिये गेरुआ ही पहनता हूँ । वेश लिये मुझे 7 साल हो गये - राजीव) हैं ।

हे स्वामी जी ! मैं आपसे विनती करती हूँ । मेरे जीव (आत्मा) का कल्याण जिस तरह हो । वह उपाय मुझे कहो । मैं अपने जीवन के कल्याण के लिये अपने कुल और जाति का भी त्याग कर सकती हूँ ।

हे समर्थ स्वामी ! अपनी शरण में लेकर मुझ अनाथ को सनाथ करो । भवसागर में डूबती हुयी मुझको संभालो । अब आप मुझे बहुत दयालु और प्रिय लगते हो । अपके दर्शन मात्र से मेरे सभी भृम दूर हो गये ।

तब मैंने कहा - हे रावण की प्रिय पत्नी मंदोदरी सुनो । सत्यपुरुष के नाम प्रताप से यम की बेडी कट जाती है । तुम इसे ज्ञान दृष्टि से समझो । मैं तुम्हें खरा (सत्यपुरुष) और खोटा (काल निरंजन) समझाता हूँ ।

सत्यपुरुष असीम अजर अमर हैं । तथा तीन लोक से न्यारे हैं । अलग हैं । उन सत्यपुरुष का जो कोई ध्यान सुमरन करे । वह आवागमन से मुक्त हो जाता है ।

मेरे ये वचन सुनते ही मंदोदरी का सब भृम भय अज्ञान दूर हो गया । और उसने पवित्र मन से प्रेमपूर्वक नामदान लिया । तब मंदोदरी इस तरह गदगद हुयी । मानों किसी कंगाल को खजाना मिल गया हो । फ़िर रानी चरण स्पर्श कर महल को चली गयी । मंदोदरी ने विचित्र भाट की स्त्री को समझाकर हँसदीक्षा के लिये प्रेरित किया । तब उसने भी दीक्षा ली ।

हे धर्मदास ! फ़िर मैं रावण के महल से आया । और मैंने द्वारपाल से कहा - मैं तुमसे एक बात कहता हूँ । अपने राजा को मेरे पास लेकर आओ ।

तब द्वारपाल विनयपूर्वक बोला - राजा रावण बहुत भयंकर है । उसमें शिव का बल है । वह किसी का भय नहीं मानता । और किसी बात की चिंता नहीं करता । वह बडा अहंकारी और महान क्रोधी है । यदि मैं उससे जाकर आपकी बात कहूँगा । तो वह उल्टा मुझे ही मार डालेगा ।

तब मैंने कहा - तुम मेरा वचन सत्य मानों । तुम्हारा बाल बांका भी नहीं होगा । अतः निर्भीक होकर रावण से ऐसा जाकर कहो । और उसको शीघ्र बुलाकर लाओ ।

तब द्वारपाल ने ऐसा ही किया । वह रावण के पास जाकर बोला - हे महाराज ! हमारे पास एक सिद्ध (सन्त) आया है । उसने मुझसे कहा है कि अपने राजा को लेकर आओ ।

यह सुनकर रावण बेहद क्रोध से बोला - अरे द्वारपाल ! तू निरा बुद्धिहीन ही है । यह तेरी बुद्धि को किसने हर लिया है । जो यह सुनते ही तू मुझे बुलाने दौडा दौडा चला आया । मेरा दर्शन शिव के सुत.. गण आदि भी नहीं पाते । और तूने मुझे एक भिक्षुक को बुलाने पर जाने को कहा ।

हे द्वारपाल ! मेरी बात सुन । और उस सिद्ध का रूप वर्णन मुझे बता । वह कौन है ? कैसा है ? क्या वेश है ? यह सब बात बता ।

तब द्वारपाल बोला - हे राजन ! उनका श्वेत उज्जवल स्वरूप है । उनकी श्वेत ही माला तथा श्वेत तिलक अनुपम है । और श्वेत ही वस्त्र तथा श्वेत साज सामान है । चन्द्रमा के समान उसका स्वरूप प्रकाशवान है ।

तब मंदोदरी बोली - हे राजा रावण ! जैसा द्वारपाल ने बताया । वह सिद्ध सन्त परमात्मा के समान सुशोभित है । आप शीघ्र जाकर उनके चरणों में प्रणाम करो । तो आपका राज्य अटल हो जायेगा । हे राजन ! इस झूठी मान बडाई के अहम को त्याग कर आप ऐसा ही करें ।

मंदोदरी की बात सुनते ही रावण इस तरह भडका । मानों जलती हुयी आग में घी डाल दिया गया हो । रावण

तुरन्त हाथ में शस्त्र लेकर चला कि जाकर उस सिद्ध का माथा काटूँगा । जब उसका शीश गिर पड़े । तब देखें । वह भिक्षुक मेरा क्या कर लेगा ?

ऐसा सोचते हुये रावण बाहर मेरे पास आया । और उसने 70 बार पूरी शक्ति से मुझ पर शस्त्र चलाया । मैंने उसके शस्त्र प्रहार को हर बार एक तिनके की ओट पर रोका । अर्थात रावण वह तिनका भी नहीं काट सका । मैंने तिनके की ओट इस कारण की कि रावण बहुत अहंकारी है । इस कारण अपने शक्तिशाली प्रहारों से जब रावण तिनका भी न काट पायेगा । तो अत्यन्त लज्जित होगा । और उसका अहंकार नष्ट हो जायेगा ।

तब यह तमाशा देखती हुयी (मेरा बल प्रताप जानकर) मंदोदरी रावण से बोली - हे स्वामी ! आप झूठा अहंकार और लज्जा त्याग कर मुनीन्द्र स्वामी के चरण पकड़ लो । जिससे आपका राज्य अटल हो जायेगा ।

यह सुनकर खिसियाया हुआ रावण बोला - मैं जाकर शिव की सेवा पूजा करूँगा । जिन्होंने मुझे अटल राज्य दिया । मैं उनके ही आगे घुटने टेकूँगा । और हर पल उन्हीं को दण्डवत करूँगा ।

तब मैंने उसे पुकारकर कहा - हे रावण ! तुम बहुत अहंकार करने वाले हो । तुमने हमारा भेद नहीं समझा । इसलिये आगे की पहचान के रूप में तुम्हें एक भविष्यवाणी कहता हूँ । तुमको रामचन्द्र मारेंगे । और तुम्हारा माँस कुत्ता भी नहीं खायेगा । तुम इतने नीच भाव वाले हो ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! मुनीन्द्र स्वामी के रूप में मैंने अहंकारी रावण को अपमानित किया । और फ़िर अयोध्या नगरी की ओर प्रस्थान किया ।

तब रास्ते में मुझे मधुकर नाम का एक गरीब ब्राह्मण मिला । वह मुझे प्रेमपूर्वक अपने घर ले गया । और मेरी बहुत प्रकार से सेवा की । गरीब मधुकर ज्ञान भाव में स्थिर बुद्धि वाला था । उसका लोक और वेद का ज्ञान बहुत अच्छा था । तब मैंने उसे सत्यपुरुष और सत्यनाम के बारे में बताया । जिसे सुनकर उसका मन प्रसन्नता से भर गया ।

और वह बोला - हे परम सन्त स्वरूप स्वामी ! मैं भी उस अमृतमय सत्यलोक को देखना चाहता हूँ ।

तब उसके सेवा भाव से प्रसन्न होकर '" अच्छा " ऐसा कहते हुये मैं उसके शरीर को वहीं रहा छोड़कर उसके जीवात्मा को सत्यलोक ले गया । अमरलोक की अनुपम शोभा छटा देखकर वह बहुत प्रसन्न हुआ । और गदगद होकर मेरे चरणों में गिर पड़ा ।

और बोला - हे स्वामी ! आपने सत्यलोक देखने की मेरी प्यास बुझा दी । अब आप मुझे संसार में ले चलो । जिससे मैं अन्य जीवों को यहाँ लाने के लिये उपदेश (गवाही) करूँ । और जो जीव घर गृहस्थी के अंतर्गत आते हैं । उन्हें भी सत्य बताऊँ ।

हे धर्मदास ! जब मैं उसके जीवात्मा को लेकर संसार में आया । और जैसे ही मधुकर के जीवात्मा ने देह में प्रवेश किया । तो उसका शरीर जाग्रत हो गया । मधुकर के घर परिवार में 16 अन्य जीव थे । मधुकर ने उनसे सब बात कही ।

और मुझसे बोला - हे साहिब ! आप मेरी विनती सुनो । अब हम सबको सत्यलोक में निवास दीजिये । क्योंकि यह प्रथ्वी तो यम का देश है । इसमें बहुत दुख है । फ़िर भी माया से बँधा जीव अज्ञानवश अँधा हो रहा है । इस देश में काल निरंजन बहुत प्रबल है । वह सब जीवों को सताता है । और अनेक प्रकार के कष्ट देता हुआ जन्म मरण का नरक समान दुख देता है । काम क्रोध तृष्णा और माया बहुत बलबान है । जो इसी काल निरंजन की रचना है

। ये सब महाशत्रु देवता मुनि आदि सबको व्यापते हैं । और करोंङो जीवों को कुचलकर मसल देते हैं ।

ये तीनों लोक यम निरंजन का देश हैं । इसमें जीवों को क्षण भर के लिये वास्तविक सुख नहीं है । आप हमारा ये जन्म जन्म का कलेश मिटाओ । और अपने साथ ले चलो ।

तब मैंने उन सबको सत्यपुरुष के नाम का उपदेश देकर हँसदीक्षा से गुरु (की) आत्मा बनाया । और उनकी आयु पूरी हो जाने पर उनको सत्यलोक भेज दिया ।

उन 16 जीवों को सत्यलोक जाते हुये देखकर संसारी जीव के लिये विकराल भयंकर यमदूत उदास खङे देखते रहे । उन्हें ऊपर जाते देखकर वे सब विवश और बेहद उदास हो गये ।

वे सब जीव सत्यपुरुष के दरबार में पहुँच गये । जिन्हें देखकर सत्यपुरुष के अंश और अन्य मुक्त हँस जीव बहुत प्रसन्न हुये ।

सत्यपुरुष ने उन 16 हँस जीवों को अमर वस्त्र पहनाया । स्वर्ण के समान प्रकाशवान अपनी अमर देह के स्वरूप को देखकर उन हँस जीवों को बहुत सुख हुआ । सत्यलोक में हरेक हँस जीव का दिव्य प्रकाश 16 सूर्य के समान है । वहाँ उन्होंने अमृत (अमीरस) का भोजन किया । और अगर (चंदन) की सुगन्ध से उनका शरीर शीतल होकर महकने लगा ।

इस तरह त्रेता युग में मेरे (मुनीन्द्र स्वामी के नाम से) द्वारा ज्ञान उपदेश का प्रचार प्रसार हुआ । और सत्यपुरुष के नाम प्रभाव से हँस जीव मुक्त होकर सत्यलोक गये ।

कबीर और रानी इन्द्रमती

त्रेता युग समाप्त हुआ । और द्वापर युग आ गया । तब फ़िर काल निरंजन का प्रभाव हुआ । और फ़िर सत्यपुरुष ने ज्ञानी जी को बुलाकर कहा - हे ज्ञानी ! तुम शीघ्र संसार में जाओ । और काल निरंजन के बँधनों से जीवों का उद्धार करो । काल निरंजन जीवों को बहुत पीङा दे रहा है । जाकर उसकी फ़ाँस काटो ।

तब मैंने सत्यपुरुष की बात सुनकर उनसे कहा - आप प्रमाणित स्पष्ट शब्दों में आज्ञा करो । तो मैं काल निरंजन को मारकर सब जीवों को सत्यलोक ले आता हूँ । बारबार ऐसा करने संसार में क्या जाऊँ ।

सत्यपुरुष बोले - हे योग संतायन ! सुनो । सार शब्द का उपदेश सुनाकर जीव को मुक्त कराओ । जो अब जाकर काल निरंजन को मारोगे । तो हे सुत ! तुम मेरा वचन ही भंग करोगे ।

अब तो अज्ञानी जीव काल के जाल में फ़ँसे पङे हैं । और उसमें ही उन्हें मोहवश सुख भास रहा है । लेकिन जब तुम उन्हें जाग्रत करोगे । तब उन्हें आनन्द का अहसास होगा । जब तुम काल निरंजन का असली चरित्र बताओगे । तो सब जीव तुम्हारे चरण पकङेंगे ।

हे ज्ञानी ! जीवों का भाव स्वभाव तो देखो कि ये ज्ञान अज्ञान को पहचानते समझते नहीं हैं । तुम संसार में सहज भाव से जाकर प्रकट होओ । और जीवों को चेताओ ।

तब मैं फ़िर से संसार की तरफ़ चला । इधर आते ही चालाक और प्रपंची काल निरंजन ने मेरे चरणों में सिर झुका

दिया ।

तब वह काल निरंजन कातर भाव से बोला - अब किस कारण से संसार में आये हो ? मैं आपसे विनती करता हूँ । सारे संसार के जीवों को समझाओ । ऐसा मत करना । आप मेरे बङे भाई हो । मैं आपसे विनती करता हूँ । सभी जीवों को मेरा रहस्य न बताना ।

तब मैंने कहा - हे निरंजन सुन । कोई कोई जीव ही मुझे पहचान पाता है । और मेरी बात समझता है । क्योंकि तुमने जीवों को अपने जाल में बहुत मजबूती से फ़ँसाकर ठगा हुआ है ।

हे धर्मदास ! ऐसा कहकर मैंने सत्यलोक और सत्यलोक का शरीर छोङ दिया । और मनुष्य शरीर धारण कर मृत्युलोक में आया । उस युग में मेरा नाम करुणामय स्वामी था । तब मैं गिरनार गढ आया । जहाँ राजा चन्द्रविजय राज्य करते थे । उस राजा की स्त्री बहुत बुद्धिमान थी । और उसका नाम इन्द्रमती था । वह सन्त समागम करती थी । और ज्ञानी सन्तों की पूजा करती थी ।

रानी इन्द्रमती अपने स्वभाव के अनुसार महल की ऊँची अटारी पर चङकर रास्ता देखा करती थी । यदि रास्ते में उसे कोई साधु जाता नजर आता । तो तुरन्त उसको बुलबा लेती थी । इस प्रकार सन्तों के दर्शन हेतु वह अपने शरीर को कष्ट देती थी । वह किसी सच्चे सन्त की तलाश में थी ।

उसके ऐसे भाव से प्रसन्न हम उसी रास्ते पर पहुँच गये ।

जब रानी की दृष्टि हम पर पङी । तो उसने तुरन्त दासी को आदर पूर्वक बुलाने भेजा । दासी ने रानी का विनमृ संदेश मुझे सुनाया ।

तब मैंने दासी से कहा - हे दासी ! हम राजा के घर नहीं जायेंगे । क्योंकि राज्य के कार्य में झूठी मान बङाई होती है । और साधु का मान बङाई से कोई सम्बन्ध नहीं होता । अतः मैं नहीं जाऊँगा ।

दासी ने रानी से जाकर ऐसा ही कहा । तब रानी स्वयँ दौङी दौङी आयी । और मेरे चरणों में अपना शीश रख दिया ।

और बोली - हे साहिब ! हम पर दया कीजिये । और अपने पवित्र श्रीचरणों से हमारा घर धन्य कीजिये । आपके दर्शन पाकर मैं सुखी हो गयी ।

उसका ऐसा प्रेम भाव देखकर हम उसके घर चले गये । तब रानी भोजन के लिये मुझसे निवेदन करती हुयी बोली - हे प्रभु ! भोजन तैयार करने की आज्ञा देकर मेरा सौभाग्य बङायें । आपकी जूठन मेरे घर में पङे । और बचा भोजन शेष प्रसाद के रूप में मैं खाऊँ ।

तब मैंने कहा - हे रानी सुनो । पाँच तत्व (का शरीर) जिस भोजन को पाते हैं । उसकी भूख मुझे नहीं होती । मेरा भोजन अमृत है । मैं तुम्हें इसको समझाता हूँ ।

मेरा शरीर प्रकृति के पाँच तत्व और तीन गुण वाला नहीं है । बल्कि अलग है । पाँच तत्व । तीन गुण । पच्चीस प्रकृति से तो काल निरंजन ने मनुष्य शरीर की रचना की है । स्थान और क्रिया के भेद से काल निरंजन ने वायु के पिचासी भाग किये । इसलिये पिचासी पवन कहा जाता है । इसी वायु तथा चार अन्य तत्व प्रथ्वी जल आकाश अग्नि से ये मनुष्य शरीर बना है । परन्तु मैं इनसे एकदम अलग हूँ ।

इस पाँच तत्व की स्थूल देह में एक आदि पवन है । आदि का मतलब यहाँ जन्म मरण से रहित । नित्य । अविनाशी और शाश्वत है । वह चैतन्य जीव है । उसे "सोहंग" बोला जाता है ।

यह जीव सत्यपुरुष का अंश है । काल निरंजन ने इसी जीव को भ्रम में डालकर सत्यलोक जाने से रोक रखा है । यह काल निरंजन ऐसा करने के लिये नाना प्रकार के माया जाल रचता है । और सांसारिक विषयों का लोभ लालच देकर जीवों को उसमें फ़ँसाता है । और फ़िर खा जाता है । मैं उन्ही जीवों को काल निरंजन से उद्धार कराने आया हूँ । काल ने पानी पवन प्रथ्वी आदि तत्वों से जीव की बनाबटी देह की रचना की । और इस देह में वह जीवों को बहुत दुख देता है । मेरा शरीर काल निरंजन ने नहीं बनाया । मेरा शरीर शब्द स्वरूप है । जो खुद मेरी इच्छा से बना है ।

यह सब सुनकर रानी इन्द्रमती को बहुत आश्चर्य हुआ । और वह बोली - हे प्रभु ! जैसा आपने कहा । ऐसा कहने वाला दूसरा कोई नहीं मिला । हे दयानिधि ! आप मुझे और भी ज्ञान बताओ । मैंने सुना है कि विष्णु के समान दूसरा कोई बृह्मा शंकर मुनि आदि भी नहीं है । पाँच तत्वों के मिलने से यह शरीर बना है । और उन तत्वों के गुण भूख प्यास नींद के वश में सभी जीव हैं ।

हे प्रभु ! आप अगम अपार हो । आप मुझे बताओ कि बृह्मा विष्णु तथा शंकर से भी अलग आप कहाँ से उत्पन्न हुये हो ? ऐसा बताकर मेरी जिज्ञासा शान्त करो ।

तब मैंने कहा - हे इन्द्रमती ! मेरा देश नागलोक - पाताल । मृत्युलोक - प्रथ्वी । और देवलोक - स्वर्ग । इन सबसे अलग है । वहाँ काल निरंजन को घुसने के अनुमति नहीं है । इस प्रथ्वी पर चन्द्रमा सूर्य है । पर सत्यलोक में सत्यपुरुष के एक रोम का प्रकाश करोंडो चन्द्रमा के समान है । (वहाँ का उजाला चमकीला एकदम सफ़ेद होने से चन्द्रमा के जैसा कहा है । सूर्य के प्रकाश में पीला रंग होता है) तथा वहाँ के हँस जीव (मुक्त होकर गयी आत्मायें) का प्रकाश सोलह सूर्य के बराबर है । उन हँस जीवों में अगर (चन्दन) के समान सुगन्ध आती है । और वहाँ कभी रात नहीं होती ।

(इसके बाद कबीर साहब ने इन्द्रमती को आदि सृष्टि से लेकर पूरी कथा बतायी । जो इन ब्लाग में कबीर धर्मदास संवाद के रूप में प्रकाशित हो चुकी है)

तब रानी इन्द्रमती घबराकर बोली - हे प्रभु ! आप मुझे इस यम काल निरंजन से छुडा लो । मैं अपना समस्त राजपाट आप पर न्योछावर करती हूँ । मैं अपना सब धन संपत्ति का त्याग करती हूँ । हे बन्दीछोड ! मुझे अपनी शरण में लो ।

तब मैंने कहा - हे रानी ! मैं तुम्हें अवश्य यम काल निरंजन से छुडाऊँगा । मैं तुम्हें सत्यनाम का सुमरन दूँगा । पर मुझको तुम्हारी धन संपत्ति तथा राजपाट से कोई प्रयोजन नहीं है । जो धन संपत्ति तुम्हारे पास है । उससे पुण्य कार्य करो । सच्चे साधु सन्तों का आदर सत्कार करो । सत्यपुरुष के ही सभी जीव हैं । ऐसा जानकर उनसे व्यवहार करो । परन्तु वे मोहवश अज्ञान के अँधकार में पडे हुये हैं । सब शरीरों में सत्यपुरुष के अंश जीवात्मा का ही वास है । पर वह कहीं प्रकट और कहीं गुप्त है ।

हे रानी ! ये समस्त जीव सत्यपुरुष के हैं । परन्तु वे मोह के भ्रमजाल में फ़ँसे काल निरंजन के पक्ष में हो रहे हैं । यह सब चरित्र काल निरंजन का ही है कि सब जीव सत्यपुरुष को भुलाकर उसके फ़ैलाये खानी वाणी के जाल में फ़ँसे हुये हैं ।

और उसने यह जाल इतनी सूझबूझ से फ़ैलाया है कि मुझ जैसे उद्धारक से भी जीव कालवश होकर उसका पक्ष लेकर लडते हैं । और मुझे भी नहीं पहचानते । इस प्रकार ये भ्रमित जीव सत्यपुरुष रूपी अमृत को छोडकर विष

रूपी काल निरंजन से प्रेम करते हैं । असंख्य जीवों में से कोई कोई ही इस कपटी काल निरंजन की चालाकी को समझ पाता है । और सत्यनाम का उपदेश लेता है ।

तब इन्द्रमती बोली - हे प्रभु ! अब मैंने सब कुछ समझ लिया है । अब आप वही करो । जिससे मेरा उद्धार हो ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! तब मैंने रानी को सत्यनाम उपदेश किया । यानी दीक्षा दी । तब रानी ने ऐसी अनुभूति (दीक्षा के समय होने वाली) से प्रभावित होकर अपने पति से कहा - हे स्वामी ! यदि आप सुखदायी मोक्ष चाहते हो । तो करुणामय स्वामी की शरण में आओ । मेरी इतनी बात मानों ।

तब राजा बोला - हे रानी ! तुम मेरी अर्धांगिनी हो । इसलिये मैं तुम्हारी भक्ति में आधे का भागीदार हूँ । इसलिये हम तुम दोनों भक्त नहीं होंगे । मैं सिर्फ़ तुम्हारी भक्ति का प्रभाव देखूँगा कि किस प्रकार तुम मुझे मुक्त कराओगी । मैं तुम्हारी भक्ति का प्रताप देखूँगा । जिससे सब दुख कष्ट मिट जायेंगे । और हम सत्यलोक जायेंगे ।

रानी इन्द्रमती का सत्यलोक जाना

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! तब यह सब रानी ने मेरे पास आकर कहा । और मैंने उसे विघ्न डालकर बुद्धि फ़ेरने वाले काल निरंजन का चरित्र सुनाया । उसने राजा की बुद्धि किस तरह फ़ेर दी । और इसके बाद मैंने रानी को भविष्य के बारे में बताया ।

मैंने रानी से कहा - हे रानी सुनो । काल निरंजन अपनी कला से छल का रूप धारण करेगा । साँप बनकर कालदूत तुम्हारे पास आयेगा । और तुम्हें डसेगा । ऐसा मैं तुम्हें पहले ही बताये देता हूँ । इसलिये मैं तुमको बिरहुली मन्त्र बताता हूँ । जिससे काल रूपी सर्प का सब जहर दूर हो जायेगा । फ़िर यम तुमसे दूसरा धोखा करेगा । वह हँस वर्ण का सफ़ेद रूप बनाकर तुम्हारे पास आयेगा । और मेरे समान ज्ञान तुम्हें समझायेगा ।

वह तुमसे कहेगा - हे रानी ! मुझे पहचान । मैं काल निरंजन का मान मर्दन करने वाला हूँ । और मेरा नाम ज्ञानी करुणामय है । इस प्रकार काल तुम्हें ठगेगा । मैं उसका हुलिया भी तुम्हें बताता हूँ ।

कालदूत का मस्तक छोटा होगा । और उसकी आँखों का रंग बदरंग होगा । और उसके दूसरे सब अंग श्वेत रंग के होंगे । ये सब काल के लक्षण मैंने तुम्हें बता दिये ।

तब रानी ने घबराकर मेरे चरण पकङ लिये । और बोली - हे प्रभु ! मुझे सत्यलोक ले चलो । यह तो यम का देश है । जिससे मेरे सब दुख कष्ट मिट जायें ।

तब मैंने कहा - हे रानी ! सत्यनाम दीक्षा से यम से तुम्हारा सम्बन्ध टूट गया है । और तुम सत्यपुरुष की आत्मा हो गयी हो । अब तुम इस सत्यनाम का सुमरन करो । तब ये प्रपंची काल निरंजन तुम्हारा क्या बिगाङ लेगा । जब तक तुम्हारी आयु पूरी न हो । इसी नाम का सुमरन करो । जब तक आयु का ठेका पूरा न हो । जीव सत्यलोक नहीं जा सकता । इस काल निरंजन की कला बहुत भयंकर है । वह संसार में जीवों के पास हाथी रूप में आता है । परन्तु सिंह रूपी सत्यनाम का सुमरन करते ही सुमरने वाले का भय काल निरंजन मानता है । और सामने नहीं आता ।

तब रानी बोली - हे साहिब ! जब काल निरंजन सर्प बनकर मुझे सताये । और हँस रूप धारण कर भरमाये । तब फ़िर आप मेरे पास आ जाना । और मेरी हँस जीवात्मा को सत्यलोक ले जाना । यही मेरी विनती है ।

कबीर साहब बोले - हे रानी ! काल सर्प और मानव रूप की कला धरकर तुम्हारे पास आयेगा । तब मैं उसका मान मर्दन करूँगा । मुझे देखते ही काल भाग जायेगा । उसके पीछे मैं तुम्हारे पास आऊँगा । और तुम्हारे जीव को सत्यलोक ले जाऊँगा ।

हे धर्मदास ! इतना कहकर मैंने स्वयँ को छुपा लिया । और तब तक्षक सर्प बनकर कालदूत आया । जब आधी रात हो गयी थी । तब रानी अपने महल में आकर पलंग पर लेट गयी । और सो गयी । उसी समय तक्षक ने आकर रानी के माथे में डस लिया ।

तब रानी ने जल्दी ही राजा से कहा - तक्षक ने मुझे डस लिया है । इतना सुनते ही राजा व्याकुल हो गया । और विष उतारने वाले गारुडी (ओझा) को बुलाया ।

रानी इन्द्रमती ने साहिब में सुरति लगाकर उनका दिया बिरहुली मन्त्र जपा । और गारुडी से कहा । तुम दूर जाओ । तुम्हारी आवश्यकता नहीं है । रानी ने राजा से कहा । सदगुरु ने मुझे बिरहुली मन्त्र दिया है । जिससे मुझ पर विष का प्रभाव नहीं होगा ।

ऐसा कहते हुये जाप करती हुयी रानी उठकर खडी हो गयी । राजा चन्द्रविजय अपनी रानी को ठीक देखकर बहुत प्रसन्न हुआ ।

हे धर्मदास ! रानी के बिना किसी नुकसान के ठीक हो जाने पर वह कालदूत वहाँ गया । जहाँ बृह्मा विष्णु महेश थे । और बोला - मेरे विष का तेज भी इन्द्रमती को नहीं लगा । सत्यपुरुष के नाम प्रताप से सारा विष दूर हो गया ।

तब विष्णु ने कहा - हे यमदूत सुन । तुम अपने सब अंग सफ़ेद बना लो । मेरी बात मानों । और छल करके रानी को ले आओ ।

तब उस कालदूत ने ऐसा ही किया । और रानी के पास मेरे (कबीर साहब जैसा) वेश में आकर बोला - हे रानी ! तुम क्यों उदास हो । मैंने तुम्हें दीक्षा मन्त्र दिया है । तुम जान बूझ कर ऐसी अनजान क्यों हो रही हो । हे रानी ! मेरा नाम करुणामय है । मैं काल को मारकर उसकी ऐसी पिसाई कर दूँगा । जब काल ने तक्षक बनकर तुम्हें डसा । तब भी मैंने तुम्हें बचाया । तुम पलंग से उतरकर मेरे चरण स्पर्श करो । और अपनी मान बडाई छोडो । मैं तुम्हें प्रभु के दर्शन कराऊँगा ।

लेकिन मेरे द्वारा पहले ही बताये जाने से रानी ने उसको पहचान लिया । और उसकी आँख में तीन रेखायें देखीं । पीली सफ़ेद और लाल । फ़िर उसका छोटा मस्तक देखा । तब रानी मेरे वचनों को याद करती हुयी बोली - हे यमदूत ! तुम अपने घर जाओ । मैंने तुम्हें पहचान लिया है ।

कौवा जो बहुत सुन्दर वेश बनाये । परन्तु वह हँस की सुन्दरता नहीं पा सकता । वैसा ही मैंने तुम्हारा रूप देखा । मेरे समर्थ गुरु ने मुझे पहले ही सब बता दिया था ।

यह बात सुनकर यमदूत ने बहुत क्रोध किया । और बोला - मैंने कितना बारबार तुम्हें कहकर समझाया । फ़िर भी तुम नहीं मानी । तुम्हारी बुद्धि फ़िर गयी है । ऐसा कहकर वह रानी के पास आया । और उसने रानी को थप्पड मारा । जिससे रानी भूमि पर गिर गयी । और उसने मेरा (कबीर साहब) सुमरिन किया । और बोली - हे सदगुरु

! मेरी सहायता करो । मुझको ये क्रूर काल बहुत दुख दे रहा है ।

हे धर्मदास ! मेरा यह स्वभाव है कि भक्त की पुकार सुनते ही मुझसे नहीं रहा जाता । इसलिये मैं क्षण भर में इन्द्रमती के पास आ गया ।

मुझे देखते ही रानी को बहुत प्रसन्नता हुयी । मेरे आते ही काल वहाँ से चला गया । उसके थप्पड़ से जो अशुद्धि हुयी थी । मेरे दर्शन से दूर हो गयी ।

तब रानी बोली - हे साहिब ! मुझे यम की छाया की पहचान हो गयी । मेरी एक विनती सुनिये । अब मैं मृत्युलोक में नहीं रहना चाहती । हे साहिब ! मुझे अपने देश सत्यलोक ले चलिये । यहाँ तो बहुत काल कलेश है । यह कहकर वह उदास हो गयी ।

हे धर्मदास ! उसकी ऐसी विनती सुनकर मैंने उस पर से काल का कठिन प्रभाव समाप्त कर दिया । फ़िर उसकी आयु का ठीका (शेष आयु का अधिकार - समय से पहले पूरा करना) पूरा भर दिया । और रानी के हंस जीव को लेकर सत्यलोक चला गया ।

मैंने उसे लेकर मान सरोवर दीप पहुँचाया । जहाँ पर माया कामिनी किलोल क्रीड़ा कर रही थी । अमृत सरोवर से उसे अमृत चखाया । तथा कबीर सागर पर उसका पाँव रखवाया ।

उसके आगे सुरति सागर था । वहाँ पहुँचते ही रानी की जीवात्मा प्रकाशित हो गयी । तब उसे सत्यलोक के द्वार पर ले गया । जिसे देखकर रानी ने परम सुख अनुभव किया ।

सत्यलोक के द्वार पर रानी की हँस आत्मा को देखकर वहां के हँसो ने दौड़कर रानी को अपने से लिपटा लिया । और सबने स्वागत करते हुये कहा - तुम धन्य हो । जो करुणामय स्वामी को पहचान लिया । अब तुम्हारा काल निरंजन का फ़ंदा छूट गया । और तुम्हारे सब दुख द्वंद मिट गये । हे इन्द्रमती मेरे साथ आओ । तुम्हें सत्यपुरुष के दर्शन कराऊँ ।

ऐसा कहकर मैंने सत्यपुरुष ने विनती की - हे सत्यपुरुष ! अब हँसो के पास आओ । और एक नये हँस को दर्शन दो । हे बन्दीछोड़ आप महान कृपा करने वाले हो । हे दीन दयालु दर्शन दो ।

तब पुष्प दीप का पुष्प खिला । और वाणी हुयी - हे योग संतायन सुनो । अब हँसो को ले आओ । और दर्शन करो । तब ज्ञानी जी हँसो के पास आये । और उन्हें ले जाकर सत्यपुरुष का दर्शन कराया । सब हँसो ने सत्यपुरुष को दण्डवत प्रणाम किया । तब आदि पुरुष ने चार अमृत फ़ल दिये । जिसे सब हँसो ने मिलकर खाया ।

कबीर का सुदर्शन श्वपच को ज्ञान देना

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! रानी इन्द्रमती के हँस जीव को सत्यलोक पहुँचाकर उसे सत्यपुरुष के दर्शन कराने के बाद मैंने कहा - हे हँस ! अब अपनी बात बताओ । तुम्हारी जैसी दशा है । सो कहो । तुम्हारा सब दुख द्वंद । जन्म मरण का आवागमन सब मिट गया । और तुम्हारा तेज 16 सूर्य के बराबर हो गया । और तुम्हारे सब कलेश मिटकर तुम्हारा कल्याण हुआ ।

तब इन्द्रमती दोनों हाथ जोड़कर बोली - हे साहिब ! मेरी एक विनती है । बड़े भाग्य से मैंने आपके श्रीचरणों में स्थान पाया है । मेरे इस हँस शरीर का रूप बहुत सुन्दर है । परन्तु मेरे मन में एक संशय है । जिससे मुझे राजा

(अपने पति चन्द्रविजय) के प्रति मोह हुआ है । क्योंकि वह राजा मेरा पति रहा है । हे करुणामय स्वामी ! आप उसे भी सत्यलोक ले आईये । नहीं तो मेरा राजा काल के मुख में जायेगा ।

कबीर साहब बोले - तब मैंने कहा । हे बुद्धिमान हँस सुन । राजा ने नाम उपदेश नहीं लिया । उसने सत्यपुरुष की भक्ति नहीं पायी । और भक्तिहीन होकर तत्वज्ञान के बिना वह इस असार संसार में
84 लाख योनियों में ही भटकेगा ।

तब इन्द्रमती बोली - हे प्रभु ! मैं जब संसार में रहती थी । और अनेक प्रकार से आपकी भक्ति किया करती थी । तब सज्जन राजा ने मेरी भक्ति को समझा । और कभी भी भक्ति से नहीं रोका ।

संसार का स्वभाव बहुत कठोर है । यदि अपने पति को छोडकर उसकी स्त्री कहीं अलग रहे । तो सारा संसार उसे गाली देता है । और सुनते ही पति भी उसे मार डालता है ।

हे साहिब ! राज काज में तो मान । प्रसंशा । नास्तिकता । क्रोध । चतुराई होती ही है । परन्तु इन सबसे अलग मैं साधु संतो की सेवा ही करती थी । और राजा से भी नहीं डरती थी । तो जब मैं साधु सन्तों की सेवा करती थी । यह सुनकर राजा प्रसन्न ही होता था ।

हे साहिब ! इसके विपरीत राजा ऐसा करने के लिये मुझे रोकता । दुख देता । तो मैं किस तरह साधु सन्तों की सेवा कर पाती । और तब मेरी मुक्ति कैसे होती । अतः सेवा भक्ति को जानने वाला वह राजा धन्य है । उसके हँस (जीवात्मा) को भी ले आइये ।

हे हँसपति सदगुरु ! आप तो दया के सागर है । दया कीजिये । और राजा को सांसारिक बँधनों से छुडाईये ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! मैं उस हँस इन्द्रमती की ऐसी बातें सुनकर बहुत हँसा । और इन्द्रमती की इच्छा अनुसार उसके राज्य गिरनार गढ में प्रकट हो गया । उस समय राजा चन्द्रविजय की आयु पूरी होने के करीब ही आ गयी थी ।

राजा चन्द्रविजय के प्राण निकालने के लिये यमराज उन्हें घेरकर बहुत कष्ट दे रहा था । और संकट में पडा हुआ राजा भय से थरथर कांप रहा था । तब मैंने यमराज से उसे छोडने को कहा । यमराज उसे छोडता नहीं था ।

हे धर्मदास ! दुर्लभ मनुष्य शरीर में सत्यनाम भक्ति न करने की चूक का यही परिणाम होता है । सत्यपुरुष की भक्ति को भूलकर जो जीव संसार के मायाजाल में पडे रहते हैं । आयु पूरी होने पर यमराज उन्हें भयंकर दुख देता ही है ।

तब मैंने राजा चन्द्रविजय का हाथ पकड लिया । और उसी समय सत्यलोक ले आया । रानी इन्द्रमती यह देखकर बहुत प्रसन्न हुयी । और बोली - हे राजा ! सुनो । मुझे पहचानो । मैं तुम्हारी पत्नी हूँ ।

राजा उससे बोला - हे ज्ञानवान हँस ! तुम्हारा दिव्य रूप रंग तो 16 सूर्य जैसा दमक रहा है । तुम्हारे अंग अंग में विशेष अलौकिक चमक है । तब तुमको अपनी पत्नी कैसे कहूँ ?

हे श्रेष्ठ नारी ! यह तुमने बहुत अच्छी भक्ति की । जिससे अपना और मेरा दोनों का ही उद्धार किया । तुम्हारी भक्ति से ही मैंने अपना निज घर सत्यलोक पाया । मैंने करोंडो जन्मों तक धर्म पुण्य किया । तब ऐसी सतकर्म करने वाली भक्ति करने वाली स्त्री पायी । मैं तो राज काज ही करता हुआ भक्ति से विमुख रहा ।

हे रानी ! यदि तुम न होती । तो मैं निश्चय ही कठोर नरक में जाता । ऐसा मैंने मृत्युपूर्व ही अनुभव किया । अतः संसार में तुम्हारे समान पत्नी सबको मिले ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! तब मैंने राजा से ऐसा कहा - जो जीव सत्यपुरुष के सतनाम का ध्यान करता है

। वह दोबारा कष्टमय संसार में नहीं जाता ।

हे धर्मदास ! इसके बाद मैं फ़िर से संसार में आया । और काशी नगरी में गया । जहाँ भक्त सुदर्शन श्वपच रहता था । वह शब्द विवेकी ज्ञान को समझने वाला उत्तम सन्त था । उसने मेरे बताये आत्मज्ञान को शीघ्र ही समझा । और उसे अपनाया । उसका पक्का विश्वास देखकर मैंने उसे भव बँधन से मुक्त कर दिया । और विधिपूर्वक नाम उपदेश किया ।

हे धर्मदास ! सत्यपुरुष की ऐसी प्रत्यक्ष महिमा देखते हुये भी जो जीव उसको नहीं समझते । वे काल निरंजन के फ़ँदे में पङे हुये हैं । जैसे कुत्ता अपवित्र वस्तु को भी खा लेता है । वैसे ही संसारी लोग भी अमृत छोङकर विष खाते हैं । अर्थात सत्यपुरुष रूपी अमृत को छोङकर विषरूपी कालनिरंजन की ही भक्ति करते हैं ।

हे धर्मदास ! द्वापर युग में युधिष्ठर नाम का एक राजा हुआ । महाभारत युद्ध में अपने ही बन्धु बान्धवों को मारकर उनसे बहुत पाप हुआ था । अतः युद्ध के बाद बहुत हाहाकार मच गया । चारों ओर घोर अशान्ति और शोक दुख का माहौल था । खुद युधिष्ठर को बुरे स्वपन और अपशकुन होते थे । तब श्रीकृष्ण की सलाह पर उन्होंने इस पाप निवारण हेतु एक यज्ञ किया ।

इस यज्ञ की सभी विधिवत तैयारी आदि करके जब यज्ञ होने लगा । तब श्रीकृष्ण ने कहा - इस यज्ञ के सफ़लता पूर्वक होने की पहचान है कि आकाश में बजता हुआ घंटा स्वतः सुनायी देगा (आजकल लोग खुद बजा बजाकर सुन लेते हैं । और हो गया यज्ञ । ये लो प्रसाद)

उस यज्ञ में संयासी । योगी । ऋषि । मुनि । वैरागी । ब्राह्मण । बृह्मचारी आदि सभी आये । सभी को प्रेम से भोजन आदि कराया । पर घंटा नहीं बजा । (बल्कि घंटी बजने की हल्की टुन्न भी नहीं हुयी)

तब युधिष्ठर बहुत लज्जित हुये । और श्रीकृष्ण के पास इसका कारण पूछने गये ।

श्रीकृष्ण बोले - जितने भी लोगों ने भोजन किया । इनमें एक भी सच्चा सन्त नहीं था । वे दिखावे के लिये साधु । सन्यासी । योगी । वैरागी । ब्राह्मण । बृहमचारी अवश्य लग रहे हों । पर वे मन से अभिमानी ही थे । इसलिये घंटा नहीं बजा ।

युधिष्ठर को बङा आश्चर्य हुआ । इतने विशाल यज्ञ में करोङों साधुओं ने भोजन किया । और उनमें कोई सच्चा ही नहीं था (देख लो । भाई लोगो । ये द्वापर की बात है । जब कृष्ण धरती पर मौजूद थे । तब यह हाल था - राजीव) तब हम ऐसा सच्चा सन्त कहाँ से लायें ।

तब श्रीकृष्ण ने कहा - काशी नगरी से सुदर्शन श्वपच को लेकर आओ । वे ही सर्वोत्तम साधु हैं । उन जैसा साधु अभी कोई नहीं है । तब यज्ञ सफ़ल होगा ।

ऐसा ही किया गया । और घन्टा बजने लगा । श्वपच सुदर्शन के ग्रास उठाते ही घंटा सात बार बजा । यज्ञ सफ़ल हो गया ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! तब भी जो अज्ञानी जीव सदगुरु की वाणी का रहस्य नहीं पहचानते । ऐसे लोगों की बुद्धि नष्ट होकर यम के हाथों बिक गयी है ।

अपने ही भक्त जीव को ये काल दुख देता है । नरक में डालता है । काल के लिये अब क्या कहूँ । ये भक्त अभक्त सभी को दुख देता है । सबको मार खाता है । गौर से समझो । इस काल के द्वारा ही महाभारत युद्ध में श्रीकृष्ण ने पांडवों को युद्ध के लिय्र प्रेरित किया । और हत्या का पाप करवाया । फ़िर उन्हीं श्रीकृष्ण ने पांडवों को

दोष लगाया कि तुमसे हत्या का पाप हुआ । अतः यज्ञ करो । और तब (गीता देखें) कहा था कि तुम्हें इसके बदले स्वर्ग मिलेगा । तुम्हारा यश होगा ।

हे धर्मदास ! इसके बाद भी पांडवों को (श्रीकृष्ण ने) और अधिक दुख दिया । और जीवन के अंतिम समय में हिमालय यात्रा में भेजकर बर्फ़ में गलवा दिया । द्रोपदी और चारों पांडव भीम अर्जुन नकुल सहदेव हिमालय की बर्फ़ में गल गये । केवल सत्य को धारण करने वाले युधिष्ठर ही बचे ।

जब श्रीकृष्ण को अर्जुन बहुत प्रिय था । तो उसकी ये गति क्यों हुयी ?

राजा बलि । हरिश्चन्द्र । कर्ण बहुत बङे दानी थे । फ़िर भी काल ने उन्हें बहुत प्रकार से दुख दिया । अपमान कराया ।

अतः इस जीव को अज्ञानवश सत्य असत्य उचित अनुचित का ज्ञान नहीं है । इसलिये वह सदा हितैषी सत्यपुरुष को छोङकर इस कपटी धूर्त काल निरंजन की पूजा करते हुये मोहवश उसी की ओर भागता है ।

काल निरंजन जीव को अनेक कला दिखाकर भृमित करता है । जीव इससे मुक्ति की आशा लगाकर और उसी आशा की फ़ाँस में बँधकर काल के मुख में जाता है ।

इन दोनों काल निरंजन और माया ने सत्यपुरुष के समान ही बनाबटी नकली और वाणी के अनेक नाम मुक्ति के नाम पर संसार में फ़ैला दिये हैं । और जीव को भयंकर धोखे में डाल दिया है ।

काल कसाई जीव बकरा

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! द्वापर युग बीत गया । और कलियुग आया । तब मैं फ़िर सत्यपुरुष की आज्ञा से जीवों को चेताने हेतु प्रथ्वी पर आया । और मैंने काल निरंजन को अपनी ओर आते देखा ।

मुझे देखकर वह भय से मुरझा ही गया । और बोला - किसलिये मुझे दुखी करते हो । और मेरे भक्ष्य भोजन जीवों को सत्यलोक पहुँचाते हो । तीनों युग - त्रेता । द्वापर । सतयुग में आप संसार में गये । और जीवों का कल्याण कर मेरा संसार उजाङा ।

सत्यपुरुष ने जीवों पर शासन करने का वचन मुझे दिया हुआ है । मेरे अधिकार क्षेत्र से आप जीव को छुङा लेते हो । आपके अलावा यदि कोई दूसरा भाई इस प्रकार आता । तो मैं उसे मारकर खा जाता । लेकिन आप पर मेरा कोई वश नहीं चलता । आपके बल प्रताप से ही हँस जीव (मनुष्य) अपने वास्तविक घर अमरलोक को जाते हैं । अब आप फ़िर संसार में जा रहे हो । परन्तु आपके शब्द उपदेश को संसार में कोई नहीं सुनेगा ।

शुभ और अशुभ कर्मों के भरमजाल का मैंने ऐसा ठाट मोह सुख रचा है कि जिससे उसमें फ़ँसा जीव आपके बताये सत्यलोक के सद मार्ग को नहीं समझ पायेगा । धर्म के नाम पर मैंने घर घर में भृम का भूत पैदा कर दिया है । इसलिये सभी जीव असली पूजा को भूलकर भगवान । देवी । देवता । भूत । भैरव । पिशाच आदि की पूजा भक्ति में लगे हुये हैं । और इसी को सत्य समझकर खुद को धन्य मान रहे हैं । इस प्रकार धोखा देकर मैंने सब जीवों को अपनी कठपुतली बनाया हुआ है ।

संसार में जब जीवों को भृम और अज्ञान का भूत लगेगा । परन्तु जो आपको तथा आपके सद उपदेश को पहचानेगा । उसका भरम तत्काल दूर हो जायेगा । लेकिन मेरे भृम भूत से गृस्त मनुष्य मदिरा माँस खायेंगे पियेंगे । और

ऐसे नीच मनुष्यों को माँस खाना बहुत प्रिय होगा ।
मैं अपने ऐसे मत पँथ प्रकट करूँगा । जिसमें सब मनुष्य माँस मदिरा का सेवन करेंगे । तब मैं चंडी । योगिनी । भूत । प्रेत आदि को मनुष्य से पुजवाऊँगा । और इसी भृम से सारे संसार के जीवों को भटकाऊँगा ।
जीवों को अनेक प्रकार के मोह बँधनों में बाँधकर इस प्रकार के फ़ँदों में फ़ँसा दूँगा कि वे अपने अन्त समय तक मृत्यु को भूलकर पाप कर्मों में लिप्त और वास्तविक भक्ति से दूर रहेंगे । और इस प्रकार मोह बँधनों में बँधे वे जीव जन्म पुनर्जन्म और 84 लाख योनियों में बारम्बार भटकते ही रहेंगे ।
हे भाई ! आपके द्वारा बनी हुयी सत्यपुरुष की भक्ति तो बहुत कठिन है । आप समझाकर कहोगे । तब भी कोई नहीं मानेगा ।
तब कबीर साहब बोले - हे निरंजन ! तुमने जीवों के साथ बङा धोखा किया है । मैंने तुम्हारे धोखे को पहचान लिया है । सत्यपुरुष ने जो वचन कहा है । वह दूसरा नहीं हो सकता । उसी की वजह से तुम जीवों को सताते और मारते हो ।
सत्यपुरुष ने मुझे आज्ञा दी है । उसके अनुसार सब श्रद्धालु जीव सत्यनाम के प्रेमी होंगे । इसलिये मैं सरल स्वभाव से जीवों को समझाऊँगा । और सत्यज्ञान को गृहण करने वाले अंकुरी जीवों को भवसागर से छुङाऊँगा ।
तुमने मोह माया के जो करोंङो जाल रच रखे हैं । और वेद शास्त्र पुराण में जो अपनी महिमा बताकर जीव को भरमाया है । यदि मैं प्रत्यक्ष कला धारण करके संसार में आऊँ । तो तेरा जाल और ये झूठी महिमा समाप्त कर सब जीवों को संसार से मुक्त करा दूँ ।
लेकिन जो मैं ऐसा करता हूँ । तो सत्यपुरुष का वचन भंग होता है । उनका वचन तो सदा न टूटने वाला । न डोलने वाला और बिना मोह का अनमोल है । अतः मैं उसका पालन अवश्य ही करूँगा । जो श्रेष्ठ जीव होंगे । वे मेरे सार शब्द ज्ञान को मानेंगे ।
तेरी चालाकी समझ में आते ही शीघ्र सावधान होने वाले अंकुरी जीवों को मैं भवसागर से मुक्त कराऊँगा । और तुम्हारे सारे जाल को काटकर उन्हें सत्यलोक ले जाऊँगा । जो तुमने जीवों के लिये करोंङो भृम फ़ैला रखे हैं । वे तुम्हारे फ़ैलाये हुये भृम को नहीं मानेंगे । मैं सब जीवों का सत्य शब्द पक्का करके उनके सारे भृम छुङा दूँगा ।
तब निरंजन बोला - हे जीवों को सुख देने वाले । मुझे एक बात समझाकर कहो कि जो तुमको लगन लगाकर रहेगा । उसके पास मैं काल नहीं जाऊँगा । मेरा कालदूत आपके हँस को नहीं पायेगा । और यदि वह उस हँस जीव के पास (सत्यनाम दीक्षा वाले के पास) जायेगा । तो मेरा वह कालदूत मूर्छित हो जायेगा । और मेरे पास खाली हाथ लौट आयेगा ।
हे भाई ज्ञानी जी ! लेकिन आपके गुप्त ज्ञान की यह बात मुझे समझ नहीं आती । अतः उसका भेद समझाकर कहो । वह क्या है ?
तब मैंने कहा - हे निरंजन ! ध्यान से सुन । सत्य श्रेष्ठ पहचान है । और वह सत्य शब्द (निर्वाणी नाम) मोक्ष प्रदान कराने वाला है । सत्यपुरुष का नाम गुप्त प्रमाण है ।
यह सुनकर काल निरंजन बोला - हे अंतर्यामी स्वामी ! सुनो और मुझ पर कृपा करो । इस युग में आपका क्या नाम होगा ? मुझे बताओ ? और अपने नाम दान उपदेश को भी बताओ कि किस तरह और कौन सा नाम आप जीव को दोगे । वह सब मुझे बताओ ।
जिस कारण आप संसार में जा रहे हो । उसका सब भेद मुझसे कहो । तब मैं भी जीवों को उस नाम का उपदेश कर चेताऊँगा । और उन जीवों को सत्यपुरुष के सत्यलोक भेजूँगा । हे प्रभु ! आप मुझे अपना दास बना लीजिये । तथा ये सारा गुप्त ज्ञान मुझे भी समझा दीजिये ।
तब मैंने कहा - हे निरंजन सुन ! मैं जानता हूँ । आगे के समय में तुम कैसा छल करने वाले हो । दिखावे के लिये

तो तुम मेरे दास रहोगे । और गुप्त रूप से कपट करोगे । गुप्त सार शब्द का भेद ज्ञान मैं तुम्हें नहीं दूँगा । सत्यपुरुष ने ऐसा आदेश मुझे नहीं दिया है । इस कलियुग में मेरा नाम कबीर होगा । और यह इतना प्रभावी होगा कि " कबीर " कहने से यम अथवा उसका दूत उस श्रद्धालु जीव के पास नहीं जायेगा ।

तब काल निरंजन बोला - आप मुझसे द्वेष रखते हो । लेकिन एक खेल नैं फ़िर भी खेलूँगा । मैं ऐसी छलपूर्ण बुद्धि बनाऊँगा । जिससे अनेक नकली हँस जीवों को अपने साथ रखूँगा । और आपके समान रूप बनाऊँगा । तथा आपका नाम लेकर अपना मत चलाऊँगा । इस प्रकार बहुत से जीवों को धोखे में डाल दूँगा कि वे समझे । वे सत्यनाम का ही मार्ग अपनाये हुये हैं । इससे अल्पज्ञ जीव सत्य असत्य को नहीं समझ पायेंगे ।

तब कबीर साहब बोले - अरे काल निरंजन ! तू तो सत्यपुरुष का विरोधी है । उनके ही विरुद्ध षड्यंत्र रचता है । अपनी छलपूर्ण बुद्धि मुझे सुनाता है । परन्तु जो जीव सत्यनाम का प्रेमी होगा । वो इस धोखे में नहीं आयेगा । जो सच्चा हँस होगा । वह तुम्हारे द्वारा मेरे ज्ञान गृँथों में मिलायी गयी मिलावट और मेरी वाणी का सत्य साफ़ साफ़ पहचानेगा और समझेगा । जिस जीव को मैं दीक्षा दूँगा । उसे तुम्हारे धोखे की पहचान भी करा दूँगा । तब वह तुम्हारे धोखे में नहीं आयेगा ।

हे धर्मदास ! ये बात सुनकर काल निरंजन चुप हो गया । और अंतर्ध्यान होकर अपने भवन को चला गया । हे धर्मदास इस काल की गति बहुत निकृष्ट और कठिन है । यह धोखे से जीवों के मन बुद्धि को अपने फ़ँदे में फ़ाँस लेता है ।

******

कबीर साहब ने धर्मदास द्वारा काल के चरित्र के बारे में पूछने पर बताया कि - जैसे कसाई बकरा पालता है । उसके लिये चारे पानी की व्यवस्था करता है । गर्मी सर्दी से बचने के लिए भी प्रबन्ध करता है । जिसकी वजह से उन अबोध बकरों को लगता है कि - हमारा मालिक बहुत अच्छा और दयालु है ? हमारा कितना ध्यान रखता है । इसलिये जब वह कसाई उनके पास आता है । तो वे सीधे साधे बकरे उसे अपना सही मालिक जानकर अपना प्यार जताने के लिए आगे वाले पैर उठाकर कसाई के शरीर को स्पर्श करते हैं । कुछ उसके हाथ पैरों को भी चाटते हैं । तब कसाई जब उन बकरों को छूकर । कमर पर हाथ लगाकर । दबा दबाकर देखता है । तो बेचारे बकरे समझते हैं । मालिक प्यार दिखा रहा है । परन्तु कसाई देख रहा है कि - बकरे में कितना मांस हो गया ? और जब मांस खरीदने ग्राहक आता है । तो उस समय कसाई नहीं देखता कि किसका बाप मरेगा ? किसकी बेटी मरेगी ? किसका पुत्र मरेगा ? या परिवार मर रहा है ।

वो तो बस छुरी रखी । और कर दिया - मैं ssss

उनको सुविधा देने खिलाने पिलाने का उसका यही उद्देश्य था । ठीक इसी प्रकार सर्व प्राणी काल बृहम की पूजा साधना करके काल आहार ही बने हैं ।

समुद्र और राम की दुश्मनी का कबीर द्वारा निबटारा

तब धर्मदास बोले - हे साहिब ! इससे आगे क्या हुआ ? वह सब भी मुझे सुनाओ ।
कबीर साहब बोले - उस समय राजा इन्द्रदमन उड़ीसा का राजा था । राजा इन्द्रदमन अपने राज्य का कार्य न्यायपूर्ण तरीके से करता था ।
द्वापर युग के अंत में श्रीकृष्ण ने प्रभास क्षेत्र में शरीर त्यागा । तब उसके बाद राजा इन्द्रदमन को स्वपन हुआ । स्वपन में श्रीकृष्ण ने उससे कहा । तुम मेरा मंदिर बनबा दो । हे राजन ! तुम मेरा मंदिर बनबाकर मुझे स्थापित करो ।
जब राजा ने ऐसा स्वपन देखा । तो उसने तुरन्त मंदिर बनबाने का कार्य शुरू दिया । मंदिर बना । जैसे ही उसका सब कार्य पूरा हुआ । तुरन्त समुद्र ने वह मंदिर और वह स्थान ही नष्ट कर डुबो दिया ।
फ़िर जब दुबारा मंदिर बनबाने लगे । तो फ़िर से समुद्र क्रोधित होकर दौड़ा । और क्षण भर में सब डुबोकर जगन्नाथ का मंदिर तोड़ दिया ।
इस तरह राजा ने मंदिर को 6 बार बनबाया । परन्तु समुद्र ने हर बार उसे नष्ट कर दिया । राजा इन्द्रदमन मंदिर बनबाने के सब उपाय कर हार गया । परन्तु समुद्र ने मंदिर नहीं बनने दिया । मंदिर बनाने तथा टूटने की यह दशा देखकर मैंने विचार किया ।
क्योंकि अन्यायी काल निरंजन ने पहले मुझसे यह मंदिर बनबाने की प्रार्थना की थी । और मैंने उसे वरदान दिया था । अतः मेरे मन में बात संभालने का विचार आया । और वचन से बँधा होने के कारण मैं वहाँ गया ।
मैंने समुद्र के किनारे आसन लगाया । परन्तु उस समय किसी जीव ने मुझे वहाँ देखा नहीं । उसके बाद मैं फ़िर समुद्र के किनारे आया । और वहाँ मैंने अपना चौरा (निवास) बनाया ।
फ़िर मैंने राजा इन्द्रदमन को स्वपन दिखाया । और कहा - अरे राजा ! तुम मंदिर बनबाओ । और अब ये शंका मत करो कि समुद्र उसे गिरा देगा । मैं यहाँ इसी काम के लिये आया हूँ ।
राजा ने ऐसा ही किया । और मंदिर बनबाने लगा । मंदिर बनने का काम होते देखकर समुद्र फ़िर चलकर आया । उस समय फ़िर सागर में लहरें उठी । और उन लहरों ने चित्त में क्रोध धारण किया । इस प्रकार वह लहराता हुआ समुद्र उमड़ उमड़ कर आता था कि मंदिर बनने न पाये । उसकी बेहद ऊँची लहरें आकाश तक जाती थी । फ़िर समुद्र मेरे चौरे के पास आया । और मेरा दर्शन पाकर भय मानता हुआ वहीं रुक गया । और आगे नहीं बढ़ा ।
कबीर साहब बोले - तब समुद्र ब्राह्मण का रूप बनाकर मेरे पास आया । और चरण स्पर्श कर प्रणाम किया । फ़िर वह बोला - मैं आपका रहस्य समझा नहीं । हे स्वामी ! मेरा जगन्नाथ से पुराना वैर है । श्रीकृष्ण जिनका द्वापर युग में अवतार हुआ था । और त्रेता में जिनका राम रूप में अवतार हुआ था । उनके द्वारा समुद्र पर जबरन पुल बनाने से मेरा उनसे पुराना वैर है । इसीलिये मैं यहाँ तक आया हूँ । आप मेरा अपराध क्षमा करें । मैंने आपका रहस्य पाया । आप समर्थ पुरुष हैं ।
हे प्रभु ! आप दीनों पर दया करने वाले हैं । आप इस जगन्नाथ @ श्रीराम से मेरा बदला दिलवाईये । मैं आपसे हाथ जोड़कर विनती करता हूँ । मैं उसका पालन करूँगा । जब श्रीराम ने लंका देश के लिये गमन किया था । तब वे सब मुझ पर सेतु बाँधकर पार उतरे । जब कोई बलबान किसी दुर्बल पर ताकत दिखाकर बलपूर्वक कुछ करता है । तो समर्थ प्रभु उसका बदला अवश्य दिलवाते हैं ।
हे समर्थ स्वामी ! आप मुझ पर दया करो । मैं उससे बदला अवश्य लूँगा ।
तब कबीर साहब बोले - हे समुद्र ! जगन्नाथ से तुम्हारे वैर को मैंने समझा । इसके लिये मैंने तुम्हें द्वारिका दिया । तुम जाकर श्रीकृष्ण के द्वारिका नगर को डुबो दो । यह सुनकर समुद्र ने मेरे चरण स्पर्श किये । और वह प्रसन्न होकर उमड़ पड़ा । तथा उसने द्वारिका नगर डुबो दिया । इस प्रकार समुद्र अपना बदला लेकर शान्त हो गया । इस तरह मंदिर का काम पूरा हुआ ।
तब जगन्नाथ ने पंडित को स्वपन में बताया कि सत्य कबीर मेरे पास आये हैं । उन्होंने स्मुद्र के तट पर अपना

चौरा बनाया है । समुद्र के उमड़ने से पानी वहाँ तक आया । और सत्य कबीर के दर्शन कर पीछे हट गया । इस प्रकार मेरा मंदिर डूबने से उन्होंने बचाया ।

तब वह पंडा पुजारी समुद्र तट पर आया । और स्नान कर मंदिर में चला गया । परन्तु उस पंडित ने ऐसा पाखंड मन में विचारा । कि पहले तो उसे म्लेच्छ का ही दर्शन करना पड़ा है । क्योंकि मैं पहले कबीर चौरा तक आया । परन्तु जगन्नाथ प्रभु का दर्शन नहीं पाया (पंडा म्लेच्छ कबीर साहब को समझ रहा है)

हे धर्मदास ! तब मैंने उस पंडे की बुद्धि दुरुस्त करने के लिये एक लीला की । वह मैं तुमसे छिपाऊँगा नहीं । जब पंडित पूजा के लिये मंदिर में गया । तो वहाँ एक चरित्र हुआ । मंदिर में जो मूर्ति लगी थी । उसने कबीर का रूप धारण कर लिया । और पंडित ने जगन्नाथ की मूर्ति को वहाँ नहीं देखा । क्योंकि वह बदलकर कबीर रूप हो गयी ।

पूजा के लिये अक्षत पुष्प लेकर पंडित भूल में पड़ गया कि यहाँ ठाकुर जी तो हैं ही नहीं । फ़िर भाई किसे पूजूँ । यहाँ तो कबीर ही कबीर है । तब ऐसा चरित्र देखकर उस पंडा ने सिर झुकाया ।

और बोला - हे स्वामी ! मैं आपका रहस्य नहीं समझ पाया । आप में मैंने मन नहीं लगाया । मैंने आपको नहीं जाना । उसके लिये आपने यह चरित्र दिखाया । हे प्रभु ! मेरे अपराध को क्षमा कर दो ।

तब कबीर साहब बोले - हे ब्राह्मण ! मैं तुमसे एक बात कहता हूँ । जिसे तू कान लगाकर सुन । मैं तुझे आज्ञा देता हूँ कि तू ठाकुर जगन्नाथ की पूजा कर । और दुविधा का भाव छोड़ दे । वर्ण । जाति । छूत । अछूत । ऊँच । नीच । अमीर । गरीब का भाव त्याग दे । क्योंकि सभी मनुष्य एक समान हैं । इस जगन्नाथ मंदिर में आकर जो मनुष्य में भेदभाव मानता हुआ भोजन करेगा । वह मनुष्य अंगहीन होगा । भोजन करने में जो छूत अछूत रखेगा । उसका शीश उल्टा (चमगादड़) होगा ।

हे धर्मदास ! इस तरह पंडित को पक्का उपदेश करते हुये मैंने वहाँ से प्रस्थान किया ।

धर्मदास के पूर्वजन्म की कहानी

तब धर्मदास बोला - हे साहिब ! आपके द्वारा जगन्नाथ मंदिर का बनबाना मैंने सुना । इसके बाद आप कहाँ गये ? कौन से जीव को मुक्त कराया ? तथा कलियुग का प्रभाव भी कहिये ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! राजस्थल देश के राजा का नाम बंकेज था । मैंने उसे नाम उपदेश दिया । और जीवों के उद्धार के लिये कर्णधार केवट बनाया । राजस्थल देश से मैं शाल्मलि दीप आया । और वहाँ मैंने एक संत सहते जी को चेताया । और उसे जीवों का उद्धार करने के लिये समस्त गुरु ज्ञान दीक्षा प्रदान की ।

फ़िर मैं वहाँ से दरभंगा आया । जहाँ राजा चतुर्भुज स्वामी का निवास था । उसको भी पात्र जानकर मैंने जीवों को चेताने हेतु गुरुवाई (जीवों को चेताने और नाम उपदेश देने वाला) बनाया । उसने जरा भी माया मोह नहीं किया । तब मैंने उसे सत्यनाम देकर गुरुवाई दी ।

हे धर्मदास ! मैंने हँस का निर्मल ज्ञान रहनी गहनी सुमरन आदि इन कड़िहार गुरुओं को अच्छी तरह बताया । वे सब कुल मर्यादा काम मोह आदि विषयों का त्याग कर सार गुणों को जानने वाले हुये । चतुर्भुज । बंकेज । सहते जी और चौथे धर्मदास तुम । ये चारों जीव के कड़िहार हैं । अर्थात जीव को सत्यज्ञान बताकर भवसागर से पार लगाने वाले हैं । यह मैंने तुमसे अटल सत्य कहा है ।

हे धर्मदास ! अब तुम्हारे हाथ से मुझको जम्बू दीप (भारत) के जीव मिलेंगे । जो मेरे उपदेश को गृहण करेगा । काल निरंजन उससे दूर ही रहेगा ।

तब धर्मदास बोले - हे साहिब ! मैं पाप कर्म करने वाला । दुष्ट और निर्दयी था । और मेरा जीवात्मा सदा भृम से अचेत रहा । तब मेरे किस पुण्य से आपने मुझे अज्ञान निद्रा से जगाया । और कौन से तप से मैंने आपका दर्शन पाया । वह मुझे आप बतायें ।

कबीर साहब बोले - तुम्हें समझाने और दर्शन देने के पीछे क्या कारण था ? अब वह तुम मुझसे सुनो । तुम अपने पिछले जन्मों की बात सुनो । जिस कारण मैं तुम्हारे पास आया ।

संत सुदर्शन जो द्वापर में हुये । वह कथा मैंने तुम्हें सुनाई । जब मैं उसके हँस जीव को सत्यलोक ले गया । तब उसने मुझसे विनती की । और बोला - हे सदगुरु ! मेरी विनती सुने । और मेरे माता पिता को मुक्ति दिलायें । हे बन्दीछोड़ ! उनका आवागमन मेटकर छुड़ाने की कृपा करें । यम के देश में उन्होंने बहुत दुख पाया है ।

मैंने बहुत तरीके से उनको समझाया । परन्तु तब उन्होंने मेरी बात नहीं मानी । और विश्वास ही नहीं किया । लेकिन उन्होंने भक्ति करने से मुझे कभी नहीं रोका । जब मैं आपकी भक्ति करता । तो कभी उनके मन में वैरभाव नहीं होता । बल्कि प्रसन्नता ही होती । इसी से हे प्रभु ! मेरी विनती है कि आप बन्दीछोड़ उनके जीव को मुक्त करायें ।

जब सुदर्शन श्वपच ने बारबार ऐसी विनती की । तो मैंने उसको मान लिया । और संसार में कबीर नाम से आया । मैं निरंजन के एक वचन से बँधा था । फ़िर भी सुदर्शन श्वपच की विनती पर मैं भारत आया । मैं वहाँ गया । जहाँ संत श्वपच के माता पिता लक्ष्मी और नरहर नाम से रहते थे । हे भाई ! उन्होंने श्वपच के साथ वाली देह छोड़ दी थी । और सुदर्शन के पुण्य से उसके माता पिता 84 में न जाकर पुनः मनुष्य देह में ब्राह्मण होकर उत्पन्न हुये थे । जब दोनों का जन्म हो गया । तब फ़िर विधाता ने समय अनुसार उन्हें पति पत्नी के रूप में मिला दिया ।

तब उस ब्राह्मण का नाम कुलपति और उसकी पत्नी का नाम महेश्वरी था । बहुत समय बीत जाने पर भी महेश्वरी के संतान नहीं हुयी थी । तब पुत्र प्राप्ति हेतु उसने स्नान कर सूर्यदेव का वृत रखा । वह आंचल फ़ैलाकर दोनों हाथ जोड़कर सूर्य से प्रार्थना करती । उसका मन बहुत रोता था ।

तब उसी समय मैं (कबीर साहब) उसके आंचल में बालक रूप धरकर प्रकट हो गया । मुझे देखकर महेश्वरी बहुत प्रसन्न हुयी । और मुझे घर ले गयी । और अपने पति से बोली - प्रभु ने मुझ पर कृपा की । और मेरे सूर्य वृत करने का फ़ल यह बालक मुझको दिया ।

मैं बहुत दिनों तक वहाँ रहा । वे दोनों स्त्री पुरुष मिलकर मेरी बहुत सेवा करते । पर वे निर्धन होने से बहुत दुखी थे । तब मैंने ऐसा विचार किया । पहले मैं इनकी गरीबी दूर करूँ । फ़िर इनको भक्ति मुक्ति का उपदेश करूँ । इसके लिये मैंने एक लीला की । जब ब्राहमण स्त्री ने मेरा पालना हिलाया । तो उसे उसमें एक तौला सोना मिला । फ़िर मेरे बिछौने से उन्हें रोज एक तौला सोना मिलता था । उससे वे बहुत सुखी हो गये । तब मैंने उनको सत्य शब्द का उपदेश किया । और उन दोनों को बहुत तरह से समझाया । परन्तु उनके ह्रदय में मेरा उपदेश नहीं समाया । बालक जानकर उन्हें मेरी बात पर विश्वास नहीं आया । उस देह में उन्होंने मुझे नहीं पहचाना । तब मैं वह शरीर त्याग कर गुप्त हो गया ।

तब कुछ समय बाद उस ब्राह्मण कुलपति और उसकी स्त्री महेश्वरी दोनों ने शरीर छोड़ा । और मेरे दर्शन के प्रभाव से उन्हें फ़िर से मनुष्य शरीर मिला । फ़िर दोनों समय अनुसार पति पत्नी हुये । और वह चंदनवारे नगर में जाकर रहने लगे । इस जन्म में उस औरत का नाम ऊदा और पुरुष का नाम चंदन था । तब मैं सत्यलोक से आकर पुनः चंदवारे नगर में प्रगट हुआ ।

उस स्थान पर मैंने बालक रूप बनाया । और वहाँ तालाब में विश्राम किया । तालाब में मैंने कमल पत्र पर आसन लगाया । और आठ पहर वहाँ रहा ।

तब उस तालाब में ऊदा स्नान करने आयी । और सुन्दर बालक देखकर मोहित हो गयी । और मुझे अपने घर ले गयी । उसने अपने पति चंदन साहू को बताया कि ये बालक किस प्रकार मुझे मिला ।

तब चंदन साहू बोला - अरे ऊदा ! तू मूर्ख स्त्री है । शीघ्र जाओ । और इस बालक को वहीं डाल आओ । वरना हमारी जाति कुटुम्ब के लोग हम पर हँसेगे । और उनके हँसने से हमें दुख ही होगा । जब चंदन साहू क्रोधित हुआ । तो ऊदा बहुत डर गयी ।

तब चंदन साहू अपनी दासी से बोला - इस बालक को ले जा । और तालाब के जल में डाल दे ।

कबीर साहब बोले - दासी उस बालक को लेकर चल दी । और तालाब में डालने का मन बनाया । उसी समय मैं अंतर्ध्यान हो गया । यह देखकर वह बिलख बिलखकर रोने लगी । वह मन से बहुत परेशान थी । और ये चमत्कार देखकर मुग्ध होती हुयी बालक को खोजती थी । पर मुँह से कुछ न बोलती थी ।

इस प्रकार आयु पूरी होने पर चंदन साहू और ऊदा ने भी शरीर छोङ दिया । और फ़िर दोनों ने मनुष्य जन्म पाया । अबकी बार उन दोनों को जुलाहा कुल में मनुष्य शरीर मिला । फ़िर से विधाता का संयोग हुआ । और फ़िर से समय आने पर वे पति पत्नी बन गये ।

इस जन्म में उन दोनों का नाम नीरू नीमा हुआ । नीरू नाम का वह जुलाहा काशी में रहता था । तब एक दिन जेठ का महीना । और शुक्ल पक्ष । तथा बरसाइत पूर्णिमा की तिथि थी । जब नीरू अपनी पत्नी नीमा के साथ लहरतारा तालाब मार्ग से जा रहा था । तब गर्मी से व्याकुल उसकी पत्नी को जल पीने की इच्छा हुयी । और तभी मैं उस तालाब के कमलपत्र पर शिशु रूप में प्रकट हो गया । और बाल क्रीङा करने लगा ।

जल पीने आयी नीमा मुझे देखकर हैरान रह गयी । और उसने दौङकर मुझे उठा लिया । और अपने पति के पास ले आयी ।

तब नीमा ने मुझे देखकर बहुत क्रोध किया । और कहा - इस बालक को वहीं डाल दो ।

इस पर नीमा सोच में पङ गयी । तब मैंने उससे कहा - हे नीमा सुनो । मैं तुम्हें समझाकर कहता हूँ । पिछले (जन्म के) प्रेम के कारण मैंने तुम्हें दर्शन दिया । क्योंकि पिछले जन्म में तुम दोनों सुदर्शन के माता पिता थे । और मैंने उसे वचन दिया था कि तुम्हारे माता पिता का अवश्य उद्धार करूँगा । इसलिये मैं तुम्हारे पास आया हूँ । अब तुम मुझे घर ले चलो । और मुझे पहचान कर अपना गुरु बनाओ । तब मैं तुम्हें सत्यनाम उपदेश दूँगा । जिससे तुम काल निरंजन के फ़ँदे से छूट जाओगे ।

तब नीमा ने नीरू की बात का भय नहीं माना । और मुझे अपने घर ले गयी । इस प्रकार मैं काशी नगर में आ गया । और बहुत दिनों तक उनके साथ रहा । पर उन्हें मुझ पर विश्वास नहीं आया । वे मुझे अपना बालक ही समझते रहे । और मेरे शब्द उपदेश पर ध्यान नहीं दिया ।

हे धर्मदास ! बिना विश्वास और समर्पण के जीवन मुक्ति का कार्य नहीं होता । अतः ऐसा निर्णय करके गुरु के वचनों पर दृणतापूर्वक विश्वास करना चाहिये । अतः उस शरीर में नीरू नीमा ने मुझे नहीं पहचाना । और मुझे अपना बालक जानकर सतसंग नहीं किया ।

हे धर्मदास ! जब जुलाहा कुल में भी नीरू नीमा की आयु पूरी हुयी । और उन्होंने फ़िर से शरीर त्याग कर दुबारा

मनुष्य रूप में मथुरा में जन्म लिया ।

तब मैंने वहाँ मथुरा में जाकर उनको दर्शन दिया । अबकी बार उन्होंने मेरा शब्द उपदेश मान लिया । और उस औरत का रतना नाम हुआ । वह मन लगाकर भक्ति करती थी । मैंने उन दोनों स्त्री पुरुषों को शब्द नाम उपदेश दिया । इस तरह वे मुक्त हो गये । और सत्यलोक में जाकर हँस शरीर प्राप्त किया । उन हँसो को देखकर स्त्यपुरुष बहुत प्रसन्न हुये । और उन्हें सुकृत नाम दिया ।

जब सत्यलोक में रहते हुये मुझे बहुत दिन बीत गये । तब तक काल निरंजन ने बहुत जीवों को सताया । हे भाई ! जब काल निरंजन जीवों को बहुत दुख देने लगा । तब सत्यपुरुष ने सुकृत को पुकारा ।

और कहा - हे सुकृत ! तुम संसार में जाओ । वहाँ अपार बलबान काल निरंजन जीवों को बहुत दुख दे रहा है । तुम जीवों को सत्यनाम संदेश सुनाओ । और हँसदीक्षा देकर काल के जाल से मुक्त कराओ ।

ये सुनकर सुकृत बहुत प्रसन्न हुये । और वे सत्यलोक से भवसागर में आ गये ।

इस बार सुकृत को संसार में आया देखकर काल निरंजन बहुत प्रसन्न हुआ कि इसको तो मैं अपने फ़ँदे में फ़ँसा ही लूँगा । तब काल निरंजन ने बहुत से उपाय अपनाकर सुकृत को फ़ँसाकर अपने जाल में डाल लिया । जब बहुत दिन बीत गये । और काल ने एक भी जीव को जब सुरक्षित नहीं छोड़ा । और सबको सताता मारता खाता रहा । तब जीवों ने फ़िर दुखी होकर सत्यपुरुष को पुकारा । और तब सत्यपुरुष ने मुझे पुकारा ।

सत्यपुरुष ने कहा - हे ज्ञानी जी ! शीघ्र ही संसार में जाओ । मैंने जीवों के उद्धार के लिये सुकृत अंश भेजा था । वह संसार में प्रकट हो गया । हमने उसे सार शब्द का रहस्य समझाकर भेजा था । परन्तु वह वापस सत्यलोक लौटकर नहीं आया । और काल निरंजन के जाल में फ़ँसकर सुधि बुधि (स्मृति - अपनी पहचान) भूल गया । हे ज्ञानी जी ! तुम जाकर उसे अचेत निद्रा से जगाओ । जिससे मुक्ति पँथ चले । वंश 42 हमारा अंश है । जो सुकृत के घर अवतार लेगा । ज्ञानी जी तुम शीघ्र सुकृत के पास जाओ । और उसकी काल फ़ाँस मिटा दो ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! तब सत्यपुरुष की आज्ञा से मैं तुम्हारे पास आया हूँ । हे धर्मदास ! तुम सोचो विचारो कि तुम जैसे नीरू से होकर जन्मे हो । और तुम्हारी स्त्री आमिन नीमा से होकर जन्मी है । वैसे ही मैं तुम्हारे घर आया हूँ । तुम तो मेरे सबसे अधिक प्रिय अंश हो । इसलिये मैंने तुम्हें दर्शन दिया । अबकी बार तुम मुझे पहचानो । तब मैं तुम्हें सत्यपुरुष का उपदेश कहूँगा । यह वचन सुनते ही धर्मदास दौड़कर कबीर साहब के चरणों में गिर गये । और रोने लगे ।

कालदूत नारायण दास की कहानी

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! सुनो । मैंने तुम्हारे सामने सत्य का भेद प्रकाशित किया है । और तुम्हारे सभी काल जाल को मिटा दिया है । अब रहनी गहनी की बात सुनो । जिसको जाने बिना मनुष्य यूँ ही भूलकर सदा भटकता रहता है । सदा मन लगाकर भक्ति साधना करो । और मान प्रसंशा को त्यागकर सच्चे सन्तों की सेवा

करो । पहले जाति वर्ण और कुल की मर्यादा नष्ट करो । (अभिमान मत करो । और ये मत मानों कि " मैं " ये हूँ । या वो हूँ । ये 84 में फ़ँसने का सबसे बङा कारण होता है ।

तथा दूसरे अन्य मत पत्थर (मूर्ति) पानी (गंगा यमुना कुम्भ आदि) देवी देवता की पूजा छोङकर निष्काम गुरु की भक्ति करो ।

जो जीव गुरु से कपट चतुराई करता है । वह जीव संसार में भटकता भरमता है । इसलिये गुरु से कभी कपट परदा नहीं रखना चाहिये । गुरु से कपट मित्र की चोरी । के होय अँधा के होय कोङी । जो गुरु से भेद कपट रखता है । उसका उद्धार नहीं होता । वह 84 में ही रहता है ।

हे धर्मदास ! सुनो । केवल 1 सत्यपुरुष के सत्यनाम की आशा और विश्वास करो । इस संसार का बहुत बङा जंजाल है । इसी में छिपा हुआ काल निरंजन अपनी फ़ाँस (फ़ँदा) लगाये हुये है । जिससे कि जीव उसमें फ़ँसते रहें । परिवार के सब नर नारी मिलकर यदि सत्यनाम का सुमरन करें । तो भयंकर काल कुछ नहीं बिगाङ सकता ।

हे धर्मदास ! तुम्हारे घर जितने जीव हैं । उन सबको बुलाओ । सब (हँस) नाम दीक्षा लें । फ़िर तुम अन्यायी और क्रूर काल निरंजन से सदा सुरक्षित रहोगे ।

तब धर्मदास बोले - हे प्रभु ! आप जीवों के मूल (आधार) हो । आपने मेरा समस्त अज्ञान मिटा दिया । मेरा एक पुत्र नारायण दास है । आप उसे भी उपदेश करें ।

यह सुनकर कबीर साहब मुस्करा दिये । पर अपने अन्दर के भावों को प्रकट नहीं किया । और बोले - हे धर्मदास ! जिसको तुम शुद्ध अंतकरण वाला समझते हो । उनको तुरन्त बुलाओ ।

तब धर्मदास ने सबको बुलाया । और बोले - हे भाई ! ये समर्थ सदगुरुदेव स्वामी हैं । इनके श्रीचरणों में गिरकर समर्पित हो जाओ । जिससे कि 84 से मुक्त होओ । और संसार में फ़िर से न जन्मों ।

इतना सुनते ही सभी जीव आये । और कबीर साहब के चरणों में दंडवत प्रणाम कर समर्पित हो गये । परन्तु नारायण दास नहीं आया ।

तब धर्मदास सोचने लगे कि नारायण दास तो बहुत चतुर है । फ़िर वह क्यों नहीं आया ?

धर्मदास ने अपने सेवक से कहा - मेरे उस पुत्र ने गुरु रूपदास पर विश्वास किया है । और उसकी शिक्षा अनुसार वह जिस स्थान पर श्रीमदभगवद गीता पढता रहता है । वहाँ जाकर उससे कहो । तुम्हारे पिता ने समर्थ गुरु पाया है ।

तब सेवक धर्मदास के पास जाकर बोला - हे नारायण दास ! तुम शीघ्र चलो । आपके पिता के पास समर्थ गुरु कबीर साहब आये हैं । उनसे उपदेश लो ।

यह सुनकर नारायण दास बोला - मैं पिता के पास नहीं जाऊँगा । वे बूढे हो गये हैं । और उनकी बुद्धि का नाश हो गया है । विष्णु के समान और कौन है ? हम जिसको जपें । मेरे पिता बूढे हो गये हैं । और उनको जुलाहा गुरु भा गया है । मेरे मन को तो विठ्ठलेश्वर गुरु ही पाया है । अब और क्या कहूँ । मेरे पिता तो बस पागल ही हो गये हैं ।

उस संदेशी ने यह सब बात धर्मदास को आकर बतायी । तब धर्मदास स्वयँ अपने पुत्र नारायण दास के पास पहुँचे । और बोले - हे पुत्र नारायण दास ! अपने घर चलो । वहाँ सदगुरु कबीर साहब आये हुये हैं । उनके श्री चरणों में माथा टेको । और अपने सब कर्म बँधनो को कटाओ । जल्दी करो । ऐसा अवसर फ़िर नहीं मिलेगा । हठ छोङो । बन्दीछोङ गुरु बारबार नहीं मिलते ।

तब नारायण दास बोला- हे पिताजी ! लगता है । आप पगला गये हो । इसलिये तीसरेपन की अवस्था में जिंदा गुरु पाया है ।

अरे ! जिसका नाम राम है । उसके समान और कोई देवता नहीं है । जिसकी ऋषि मुनि आदि सभी पूजा करते हैं । आपने गुरु विठ्ठलेश्वर का प्रेम छोङकर अब बुढापे में वह जिन्दा गुरु किया है ।

तब धर्मदास ने नारायण को बाँह पकड़कर उठा लिया । और कबीर साहब के सामने ले आये । और बोले - इनके चरण पकड़ो । ये यम के फ़ँदे से छुड़ाने वाले हैं ।

तब नारायण दास मुँह फ़ेरकर कटु शब्दों में बोला - यह कहाँ हमारे घर में मलेच्छ ने प्रवेश किया है । कहाँ से यह जिन्दा ठग आया । जिसने मेरे पिता को पागल कर दिया । वेद शास्त्र को इसने उठाकर रख दिया । और अपनी महिमा बनाकर कहता है । यदि यह जिन्दा आपके पास रहेगा । तो मैंने आपके घर आने की आशा छोड़ दी है ।

नारायण दास की यह बात सुनते ही धर्मदास परेशान हो गये । और बोले - मेरा यह पुत्र जाने क्या मत ठाने हुये है । फ़िर माता आमिन ने भी नारायण को बहुत समझाया । परन्तु नारायण दास के मन में उनकी एक भी बात सही न लगी । (और वह बाहर चला गया)

तब धर्मदास कबीर साहब से विनती करते हुये बोले - हे साहिब ! मुझे वह कारण बताओ । जिससे मेरा पुत्र इस प्रकार आपको कटु वचन कहता है । और दुर्बुद्धि को प्राप्त होकर भटका हुआ है ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! मैंने तो तुम्हें नारायण दास के बारे में पहले ही बता दिया था । पर तुम उसे भूल गये हो । अतः फ़िर से सुनो । जब मैं सत्यपुरुष की आज्ञा से जीवों को चेताने मृत्युलोक की तरफ़ आया । तब काल निरंजन ने मुझे देखकर विकराल रूप बनाया ।

और बोला - सत्यपुरुष की सेवा के बदले मैंने यह झांझरी दीप प्राप्त किया है । हे ज्ञानी ! तुम भवसागर में कैसे (क्यों) आये । मैं तुमसे सत्य कहता हूँ । मैं तुम्हें मार दूँगा । तुम मेरा यह रहस्य नहीं जानते ।

तब कबीर साहब ने कहा - हे अन्यायी निरंजन सुन । मैं तुझसे नहीं डरता । जो तुम अहंकार की वाणी बोलते हो । मैं इसी क्षण तुम्हें मार डालूँगा ।

तब काल निरंजन सहम गया । और विनती करता हुआ बोला - हे ज्ञानी जी ! आप संसार में जाओगे । बहुत से जीवों का उद्धार कर मुक्त करोगे । तो मेरी भूख कैसे मिटेगी ? जब जीव नहीं होंगे । तब मैं क्या खाऊँगा । मैंने 1 लाख जीव रात दिन खाये । और सवा लाख उत्पन्न किये । मेरी सेवा से सत्यपुरुष ने मुझको तीन लोक का राज्य दिया । आप संसार में जाकर जीवों को चेताओगे । उसके लिये मैंने ऐसा इंतजाम किया है । मैं धर्म कर्म का ऐसा मायाजाल फ़ैलाऊँगा कि आपका सत्य उपदेश कोई नहीं मानेगा ।

मैं घर घर में अज्ञान भृम का भूत उत्पन्न करूँगा । तथा धोखा दे देकर जीवों को भृम में डालूँगा । तब सभी मनुष्य शराब पीयेंगे । माँस खायेंगे । इसलिये कोई आपकी बात नहीं मानेगा । और आपका संसार में जाना बेकार है ।

तब मैंने कहा - काल निरंजन मैं तेरा छल बल सब जानता हूँ । मैं सत्यनाम से तेरे द्वारा फ़ैलाये गये सब भृम मिटा दूँगा । और तेरा धोखा सबको बताऊँगा ।

तब काल निरंजन घबरा गया । और बोला - मैं जीवों को अधिक से अधिक भरमाने के लिये 12 पँथ चलाऊँगा । और आपका नाम लेकर अपना धोखे का पँथ चलाऊँगा । मृतु अँधा मेरा अंश है । वह धर्मदास के घर जन्म लेगा । पहले मेरा कालदूत धर्मदास के घर जन्म लेगा । पीछे से आपका अंश जन्म लेगा । हे भाई ! मेरी इतनी विनती तो मान ही लो ।

हे धर्मदास ! तब मैंने निरंजन को कहा । सुनो निरंजन । तुमने इस प्रकार कहकर जीवों के उद्धार कार्य में विघ्न डाल दिया है । फ़िर भी मैंने तुमको वचन दिया ।

इसलिये हे धर्मदास ! अब वह मृतु अँधा नाम का कालदूत तुम्हारा पुत्र बनकर आया है । और अपना नाम नारायण दास रखवाया है । यह नारायण तो काल निरंजन का अंश है । जो जीवों के उद्धार में विघ्न का कार्य करेगा । यह

मेरा नाम लेकर पँथ को प्रकट करेगा । और जीव को धोखे में डालेगा । और नरक में डलवायेगा । जैसे शिकारी नाद को बजाकर हिरन को अपने वश में कर लेता है । और पकडकर उसे मार डालता है । वैसे ही शिकारी की भांति यम काल अपना जाल लगाता है । और इस चाल को हँस जीव ही समझ पायेगा ।

तब कालदूत नारायण दास की चाल समझ में आते ही धर्मदास ने उसे त्याग दिया । और कबीर के चरणों में गिर पडे ।

चूडामणि का जन्म

तब धर्मदास बोले - हे प्रभु ज्ञानी जी ! अब आप मुझ पर कृपा करो । जिससे संसार में वचन वंश प्रकट हो । और आगे पँथ चले ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! सुनो । दस महीने में तुम्हारे जीव रूप में वंश प्रकट होगा । और अवतारी होकर जीवों के उद्धार के लिये ही संसार में आयेगा । ये तुम्हारा पुत्र ही मेरा अंश होगा ।

धर्मदास ने कहा - हे साहिब ! मैंने तो अपनी कामेंद्री को वश में कर लिया है । फ़िर कैसे पुरुष के अंश नौतम सुरति चूडामणि संसार में जन्म लेंगे ।

कबीर साहब बोले - तुम दोनों स्त्री पुरुष काम विषय की आसक्ति से दूर रहकर सिर्फ़ मन से रति करो । सत्यपुरुष का नाम पारस है । उसे पान पर लिखकर अपनी पत्नी आमिन को दो । जिससे सत्यपुरुष का अंश नौतम जन्म लेगा ।

तब धर्मदास की यह शंका दूर हो गयी कि बिना मैथुन के यह कैसे संभव होगा । फ़िर कबीर साहब के बताये अनुसार दोनों पति पत्नी ने मन से रति की । और पान दिया ।

जब दस मास पूरे हुये । तब मुक्तामणि का जन्म हुआ । इस पर धर्मदास ने बहुत दान किया ।

कबीर साहिब को पता चला कि मुक्तामणि का जन्म हो गया है । तो वे तुरन्त धर्मदास के घर पहुँचे ।

और मुक्तामणि को देखकर बोले - यह मुक्तामणि मुक्ति का स्वरूप है । यह काल निरंजन से जीवों को मुक्त करायेगा ।

फ़िर कबीर साहिब मुक्तामणि की दीक्षा करते हुये बोले - मैंने तुमको वंश 42 का राज्य दिया । तुमसे 42 वंश होंगे । जो श्रद्धालु जीवों को तारेंगे । तुम्हारे उन वंश 42 से 60 शाखायें होंगी । और फ़िर उन शाखाओं से प्रशाखायें होंगी । तुम्हारी 10 000 तक प्रशाखायें होंगी । वंशो के साथ मिलकर उनका गुजारा होगा । लेकिन यदि तुम्हारे वंश उनसे संसारी सम्बन्ध मानकर नाता मानेंगे । तो उनको सत्यलोक प्राप्त नहीं होगा । इसलिये तुम्हारे वंश को मोह माया से दूर रहना चाहिये ।

और हे धर्मदास सुनो । पहले मैंने तुमको जो ज्ञान वाणी का भंडार सौंपा था । वह सब चूडामणि को बता दो । तब बुद्धिमान चूडामणि ज्ञान से पूर्ण होंगे । जिसे देखकर काल भी चकनाचूर हो जायेगा ।

तब धर्मदास ने कबीर साहब की आज्ञा का पालन किया । और दोनों ने कबीर के चरण स्पर्श किये । यह सब देखकर काल निरंजन भय से काँपने लगा ।

तब प्रसन्न होकर कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! जो सत्यपुरुष के इस नाम उपदेश को गृहण करेगा । उसका सत्यलोक जाने का रास्ता काल निरंजन नहीं रोक सकता । चाहे वह 88 करोड घाट ढूँढे ।

कोई मुख से करोंङो ज्ञान की बातें कहता हो । और दिखावे के लिये बिना विधान के (कायदे से दीक्षा आदि के) कबीर कबीर का नाम जपता हो । व्यर्थ में कितना ही असार कथन कहता हो । परन्तु सत्यनाम को जाने बिना सब बेकार ही है ।

जो स्वयँ को ज्ञानी समझकर ज्ञान के नाम पर बकबास करता हो । उसके ज्ञान रूपी व्यंजन के स्वाद को पूछो । करोंङो यत्न से भी यदि भोजन तैयार हो । परन्तु नमक बिना सब फ़ीका ही रहता है । जैसे भोजन की बात है । वैसे ही ज्ञान की बात है । हमारा ज्ञान का विस्तार 14 करोङ है । फ़िर भी सार शब्द (असली नाम) इनसे अलग और श्रेष्ठ है ।

हे धर्मदास ! जिस तरह आकाश में 9 लाख तारा गण निकलते हैं । जिन्हें देखकर सब प्रसन्न होते हैं । परन्तु एक सूर्य के निकलते ही सब तारों की चमक खत्म हो जाती है । और वे दिखायी नहीं देते । इसी तरह 9 लाख तार गण संसार के करोंङो ज्ञान को समझो । और 1 सूर्य आत्मज्ञानी सन्त को जानों ।

हे धर्मदास ! जैसे विशाल समुद्र को पार कराने वाला जहाज होता है । उसी प्रकार अथाह भवसागर को पार करवाने वाला एकमात्र सार शब्द ही है । मेरे सार शब्द को समझकर जो जीव कौवे की चाल (विषय वासना में रुचि) छोङ देंगे । तो वह सार शब्द ग्राही हँस हो जायेंगे ।

तब धर्मदास बोले - हे साहिब ! मेरे मन में एक संशय है । कृपया उसे सुने । मुझे समर्थ सतपुरुष ने संसार में भेजा था । परन्तु यहाँ आने पर काल निरंजन ने मुझे फ़ँसा लिया । आप कहते हो । मैं सत सुकृत का अंश हूँ । तब भी भयंकर काल निरंजन ने मुझे डस लिया । ऐसा ही आगे वंशो के साथ हुआ । तो संसार के सभी जीव नष्ट हो जायेंगे । इसलिये साहिब ऐसी कृपा करें कि काल निरंजन वंशो को न छले ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! तुमने सत्य कहा । और ठीक सोचा । और तुम्हारा यह संशय होना भी सत्य है । आगे धर्मराय निरंजन एक खेल तमाशा करेगा । उसे मैं तुमसे छिपाऊँगा नहीं । काल निरंजन ने मुझसे सिर्फ़ 12 पँथ चलाने की बात कही थी । और अपने 4 पँथो को गुप्त रखा था । जब मैंने 4 गुरुओं का निर्माण किया । तो उसने भी अपने 4 अंश प्रकट किये । और उन्हें जीवों को फ़ँसाने के लिये बहुत प्रकार से समझाया ।

हे भाई ! अब आगे जैसा होगा । वह सुनो । जब तक तुम इस शरीर में रहोगे । तब तक काल निरंजन प्रकट नहीं होगा । जब तुम शरीर छोङोगे । तभी काल आकर प्रकट होगा । काल आकर तुम्हारे वंश को छेदेगा । और धोखे में डालकर मोहित करेगा ।

वंश के बहुत नाद संत महंत कर्णधार होंगे । काल के प्रभाव से वे पारस वंश को विष के स्वाद जैसा करेंगे । बिंद मूल और टकसार वंश के अन्दर मिश्रित होंगे । वंश में एक बहुत बङा धोखा होगा । काल स्वरूप हंग दूत उसकी देह में समायेगा । वह आपस में झगङा करायेगा । बिंद वंश के स्वभाव को हंग दूत नहीं छोङेगा । वह मन के द्वारा बिंद वंश को अपनी तरफ़ मोङेगा ।

मेरा अंश जो सत्य पंथ चलायेगा । उसे देखकर वह झगङा करेगा । उसके चिहन अथवा चाल को वह नहीं देख सकेगा । और अपना रास्ता वंश में देखेगा । वंश अपने अनुभव गृंथ कथकर (कहकर) रखेगा । परन्तु नाद पुत्र की निंदा करेगा ।

तब उन अनुभव गृंथों को वंश के कर्णधार संत महंत पढेंगे । जिससे उनको बहुत अहंकार होगा । वे स्वार्थ और अहंकार को समझ नहीं पायेंगे । और ज्ञान कल्याण के नाम पर जीवों को भटकायेंगे । इसी से मैं तुम्हें समझाकर कहता हूँ । अपने वंश को सावधान कर दो । नाद पुत्र जो प्रकट होगा । उससे सब प्रेम से मिलें । हे धर्मदास ! इसी मन से समझो । तुम सर्वथा विषय विकारों से रहित मेरे नाद पुत्र (शब्द से उत्पन्न हुआ) हो । कमाल पुत्र

जो मैंने मृतक से जीवित किया था । उसके घट (शरीर) के भीतर भी कालदूत समा गया ।

उसने मुझे पिता जानकर अहंकार किया । तब मैंने अपना ज्ञान धन तुमको दिया । मैं तो प्रेम भाव का भूखा हूँ । हाथी घोडे धन दौलत की चाह मुझे नहीं है । अनन्य प्रेम और भक्ति से जो मुझे अपनायेगा । वह हँस भक्त ही मेरे हृदय समायेगा । यदि मैं अहंकार से ही प्रसन्न होने वाला होता । तो मैं सब ज्ञान ध्यान आध्यात्म पंडित काजी को न सौंप देता । जब मैंने तुम्हें प्रेम में लगन लगाये अपने अधीन देखा । तो अपनी सब अलौकिक ज्ञान संपदा ही सौंप दी । ऐसे ही धर्मदास आगे सुपात्र लोगों को तुम यह ज्ञान देना ।

हे धर्मदास ! अच्छी तरह जान लो । जहाँ अहंकार होता है । वहाँ मैं नहीं होता । जहाँ अहंकार होता है । वहाँ सब कालस्वरूप ही होता है । अतः अहंकारी मुक्ति के अनोखे सत्यलोक को नहीं पा सकता ।

*** मुक्तामणि और चूड़ामणि एक ही अंश के दो नाम हैं ।

सात 7 पाँच 5 के मायाजाल में फ़ँसा जीव

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! सदगुरु सर्वोपरि हैं । अतः शिष्य को चाहिये कि गुरु से अधिक किसी को न माने । और गुरु के सिखाये हुये को सत्य करके जाने । एक समय ऐसा भी आयेगा । जब तुम्हारा बिंद वंश उल्टा काम करेगा । वह बिना गुरु के भवसागर से पार होना चाहेगा । जो निगुरा होकर जगत को समझाता है । अर्थात ज्ञान बताता है । वह खुद तो डूबेगा ही । तथा संसार के जीवों को भी डुबायेगा । बिना गुरु के कल्याण नहीं होता । जो गुरु के शरणागत होता है । वह संसार सागर से पार हो जाता है ।

यह काल निरंजन अनेक प्रकार से जीवों को धोखे में डालता है । अतः बिना गुरु के जीवों को अहंकार वश ज्ञान कहते देखकर काल बहुत खुश होता है ।

तब धर्मदास बोले - हे साहिब ! आप कृपा करके नाद बिंद ज्ञान को समझाने की कृपा करें ।

कबीर साहब बोले - बिंद एक और नाद बहुत से होते हैं । जो बिंद की भांति मिले । वह बिंद कहाता है । वचन वंश सत्यपुरुष का अंश है । उसके ज्ञान से जीव संसार से छूट जाता है । नाद और बिंद वंश एक साथ होंगे । तब उनसे काल मुँह छुपाकर रहेगा । जैसे मैंने तुम्हें बताया । वैसे नाद बिंद योग (योग का एक तरीका । प्रकार) एक करना । क्योंकि बिना नाद तो बिंद का भी विस्तार नहीं होता । और बिना बिंद नाद नहीं उबरेगा । हे भाई ! इस कलियुग में काल बहुत प्रबल है । जो अहंकार रूप धर सबको खाता है ।

नाद अहंकार त्याग कर होगा । और बिंद का अहंकार बिंद सजायेगा । इसी से सत्यपुरुष ने इन दोनों को अनुशासित करने के लिये मर्यादा (नियम) में बाँधा । और नाद बिंद दो रूप बनाये ।

जो अहंकार छोडकर सत्य स्वरूप परमात्मा को भजेगा । उसका ध्यान सुमरन करेगा । वह हँस स्वरूप हो जायेगा । हे भाई ! नाद बिंद दोनों कोई हों । अहंकार सबके लिये हानिकारक ही है । इसलिये यह निश्चित है । जो अहंकार करेगा । वह भवसागर में डूबेगा ।

तब धर्मदास बोले - हे साहिब ! आपने नाद बिंद के बारे में बताया । अब मेरे मन में एक बात आ रही है । आपके विरोधी मेरे पुत्र नारायण दास का क्या होगा ? वह संसार के नाते मेरा पुत्र है । इसलिये चिंता होती है । सत्यनाम को गृहण करने वाले जीव सत्यलोक को जायेंगे । और नारायण दास काल के मुँह में जायेगा । यह तो अच्छी बात न होगी ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! मैंने तुमको बारबार समझाया । पर तुम्हारी समझ में नहीं आया । अगर 14 यमदूत ही मुक्त होकर सत्यलोक चले जायेंगे । तो फ़िर जीवों को फ़ँसाने के लिये फ़ँदा कौन लगायेगा ?

अब मैंने तुम्हारा ज्ञान समझा । तुम मेरी बातों की परवाह न करके मोह माया द्वारा सत्यपुरुष की आज्ञा को मिटाने में लगे हुये हो ।

जब मनुष्य के मन में मोह अँधकार छा जाता है । तब सारा ज्ञान भूलकर वह अपना परमार्थ कर्म नष्ट करता है । बिना विश्वास के भक्ति नहीं होती । और बिना भक्ति के कोई जीव भवसागर से नहीं तर सकता । फ़िर से तुम्हें काल फ़ँदा लगा है । तुमने प्रत्यक्ष देखा कि नारायण दास कालदूत है । फ़िर भी तुमने उसे पुत्र मानने का हठ किया ।

जब तुम्हें ही मेरे वचनों पर विश्वास नहीं आता । तो संसारी लोग गुरुओं पर क्या विश्वास करेंगे ? जो अहंकार को छोङकर गुरु की शरण में आता है । वही सदगति पाता है । जो त्रिगुणी माया को पकङते हैं । उनमें मोह मद जाग जाता है । और वे अभागे भक्ति ज्ञान सब त्याग देते हैं ।

जब तुम ही गुरु का विश्वास त्याग दोगे । जो जीवों का उद्धार करने वाले हो । तब सामान्य जीवों का क्या ठिकाना । इस प्रकार भ्रमित करने की यही तो काल निरंजन की सही पहचान है ।

हे धर्मदास ! सुनो । जैसा तुम कह रहे हो । वैसा ही तुम्हारा वंश भी प्रकाशित करेगा । मोह की आग में वह सदा जलेगा । और इसी से तुम्हारे वंश में विरोध पङेगा । जिससे दुख होगा । पुत्र । धन । घर । स्त्री । परिवार और कुल का अभिमान यह सब काल ही का तो विस्तार है । वह इन्हीं को माध्यम बनाकर जीव को बँधन में डालता है । इनसे तुम्हारा वंश भूल में पङ जायेगा । और सत्यनाम की राह नहीं पायेगा ।

संसार के अन्य वंश की देखा देखी तुम्हारे वंश के लोग भी पुत्र धन घर परिवार आदि के मोह में पङ जायेंगे । और यह देखकर कालदूत बहुत प्रसन्न होंगे । तब कालदूत प्रबल हो जायेंगे । और जीवों को नरक भेजेंगे ।

काल निरंजन अपने जाल में जीव को जब फ़ँसाता है । तो उसे काम । क्रोध । मद । लोभ । मोह विषयों में भुला देता है । फ़िर उसे गुरु के वचनों पर विश्वास नहीं रहता । तब सत्यनाम की बात सुनते ही वह जीव चिङने लगता है । गुरु पर विश्वास न करने का यही लक्षण है ।

हे धर्मदास ! जिसके घट (शरीर) में सत्यनाम समा गया है । उसकी पहचान कहता हूँ । ध्यान से सुनो । उस भक्त को काल का वाण नहीं लगता । और उसे काम क्रोध मद लोभ नहीं सताते । वह झूठी मोह तृष्णा तथा सांसारिक वस्तुओं की आशा त्यागकर सदगुरु के सत्य वचनों में मन लगाता है । जैसे सर्प मणि को धारण कर प्रकाशित होता है । ऐसे ही शिष्य सदगुरु की आज्ञा को अपने ह्रदय में धारण करे । तथा समस्त विषयों को भुलाकर विवेकी हँस बनकर अबिनाशी निज मुक्त स्वरूप सत्यपद प्राप्त करे । सदगुरु के वचन पर अटल और अभिमान रहित कोई बिरला ही शूरवीर संत प्राप्त करता है । और उसके लिये मुक्ति दूर नहीं होती ।

इस प्रकार जीवित ही मुक्ति स्थिति का अनुभव और मुक्ति प्रदान कराना सदगुरु का ही प्रताप है । अतः सदगुरु के चरणों में ही प्रेम करो । और सब पाप कर्म अज्ञान एवं सांसारिक विषय विकारों को त्याग दो । अपने नाशवान शरीर को धूल के समान समझो ।

यह सुनकर धर्मदास सकपका गये । और कबीर साहब के चरणों में गिर पङे । और दुखी स्वर में बोले - हे प्रभु मैं अज्ञान से अचेत हो गया था । मुझ पर कृपा करें । कृपा करें । हे स्वामी ! मेरी भूल चूक क्षमा करें । जो नारायण दास के लिये मैंने जिद की थी । वह अज्ञान में खुद को पिता जानकर की थी । अतः मेरी इस भूल को क्षमा करें ।

तब कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! तुम सत्यपुरुष के अंश हो । परन्तु वंश नारायण दास काल का दूत है । उसे त्याग दो । और जीवों का कल्याण करने के लिये भवसागर में सत्यपँथ चलाओ ।

यह सुनकर धर्मदास कबीर साहब के पैरों पर गिर पङे । और बोले - आज से मैंने अपने उस पुत्र रूप कालदूत को त्याग दिया । अब आपको छोङकर किसी और की आशा करूँ । तो मैं सत्य संकल्प के साथ कहता हूँ । मेरा नरक

में वास हो ।

यह सुनकर कबीर साहब प्रसन्नता से बोले - हे धर्मदास ! तुम धन्य हो । जो मुझको पहचान लिया । और नारायण दास को त्याग दिया । जब शिष्य के ह्रदय रूपी दर्पण में मैल नहीं होगा । गुरु का स्वरूप तब ही दिखायी देगा । जब शिष्य अपने पवित्र ह्रदय में सदगुरु के श्रीचरणों को रखता है । तो काल की सब शाखाओं के समस्त बँधनों को मिटाता है । परन्तु जब तक वह सात 7 पाँच 5 (सात स्वर्ग - काल तथा माया (के) तीनों पुत्र - बृह्मा विष्णु महेश - ये पाँच) की आशा लगी रहेगी । तब तक वह शिष्य गुरु पद की महिमा नहीं समझ पायेगा ।

गुरु शिष्य विचार - रहनी

तब धर्मदास बोले - हे साहिब ! आप गुरु हो । मैं आपका दास हूँ । अब आप मुझे गुरु और शिष्य की रहनी समझाकर कहो ।

कबीर साहब बोले - गुरु का वृत धारण करने वाले शिष्य को समझना चाहिये कि निर्गुण और सगुण के बीच गुरु ही आधार होता है । गुरु के बिना आचार । अन्दर बाहर की पवित्रता नहीं होती । और गुरु के बिना कोई भवसागर से पार नहीं होता । शिष्य को सीप के समान और गुरु को स्वाति की बूँद के समान समझना चाहिये । गुरु के सम्पर्क से तुच्छ जीव (सीप) मोती के समान अनमोल हो जाता है । गुरु पारस के और शिष्य लोहे के समान है । जैसे पारस लोहे को सोना बना देता है । गुरु मलयागिरि चंदन के समान है । तो शिष्य विषैले सर्प की तरह होता है । इस प्रकार वह गुरु की कृपा से शीतल होता है ।

गुरु समुद्र है । तो शिष्य उसमें उठने वाली तरंग है । गुरु दीपक है । तो शिष्य उसमें समर्पित हुआ पतंगा है । गुरु चन्द्रमा है । तो शिष्य चकोर है । गुरु सूर्य हैं । जो कमल रूपी शिष्य को विकसित करते हैं ।

इस प्रकार गुरु प्रेम को शिष्य विश्वास पूर्वक प्राप्त करे । गुरु के चरणों का स्पर्श और दर्शन प्राप्त करे । जब इस तरह कोई शिष्य गुरु का विशेष ध्यान करता है । तब वह भी गुरु के समान होता है ।

हे धर्मदास ! गुरु एवं गुरुओं में भी भेद है । यूँ तो सभी संसार ही गुरु गुरु कहता है । परन्तु वास्तव में गुरु वही है । जो सत्य शब्द या सार शब्द का ज्ञान कराने वाला है । उसका जगाने वाला या दिखाने वाला है । और सत्य ज्ञान के अनुसार आवागमन से मुक्ति दिलाकर आत्मा को उसके निज घर सत्यलोक पहुँचाये । गुरु जो मृत्यु से हमेशा के लिये छुड़ाकर अमृत शब्द (सार शब्द) दिखाते हैं । जिसकी शक्ति से हँस जीव अपने घर सत्यलोक को जाता है । उस गुरु में कुछ छल भेद नहीं है । अर्थात वह सच्चा ही है । ऐसे गुरु तथा उनके शिष्य का मत एक ही होता है । जबकि दूसरे गुरु शिष्यं में मतभेद होता है ।

संसार के लोगों के मन में अनेक प्रकार के कर्म करने की भावना है । यह सारा संसार उसी से लिपटा पड़ा है । काल निरंजन ने जीव को भृम जाल में डाल दिया है । जिससे उबर कर वह अपने ही इस सत्य को नहीं जान पाता कि वह नित्य अविनाशी और चैतन्य ज्ञान स्वरूप है ।

इस संसार में गुरु बहुत हैं । परन्तु वे सभी झूठी मान्यताओं और अँधविश्वास के बनाबटी जाल में फ़ँसे हुये हैं । और दूसरे जीवों को भी फ़ँसाते है । लेकिन समर्थ सदगुरु के बिना जीव का भृम कभी नहीं मिटेगा । क्योंकि काल

निरंजन भी बहुत बलबान और भयंकर है । अतः ऐसी झूठी मान्यताओं अँधविश्वासों एवं परम्पराओं के फ़ंदे से छुड़ाने वाले सदगुरु की बलिहारी है । जो सत्यज्ञान का अजर अमर संदेश बताते हैं ।

अतः रात दिन शिष्य अपनी सुरति सदगुरु से लगाये । और पवित्र सेवा भावना से सच्चे साधु सन्तों के ह्रदय में स्थान बनाये । जिन सेवक भक्त शिष्यों पर सदगुरु दया करते हैं । उनके सब अशुभ कर्म बंधन आदि जलकर भस्म हो जाते हैं । शिष्य गुरु की सेवा के बदले किसी फ़ल की मन में आशा न रखे । तो सदगुरु उसके सब दुख बंधन काट देते हैं ।

जो सदगुरु के श्री चरणों में ध्यान लगाता है । वह जीव अमरलोक जाता है ।

कोई योगी योग साधना करता है । जिसमें खेचरी भूचरी चाचरी अगोचरी नाद चक्र भेदन आदि बहुत सी क्रियायें हैं । तब इन्हीं में उलझा हुआ वह योगी भी सत्य ज्ञान को नहीं जान पाता । और बिना सदगुरु के वह भी भवसागर से नहीं तरता ।

हे धर्मदास ! सच्चे गुरु को ही मानना चाहिये । ऐसे साधु और गुरु में अंतर नहीं होता । परन्तु जो संसारी किस्म के गुरु हैं । वह अपने ही स्वार्थ में लगे रहते हैं । न तो वह गुरु है । न शिष्य । न साधु । और न ही आचार मानने वाला ।

खुद को गुरु कहने वाले ऐसे स्वार्थी जीव को तुम काल का फ़ँदा समझो । और काल निरंजन का दूत ही जानो । उससे जीव की हानि होती है । यह स्वार्थ भावना काल निरंजन की ही पहचान है ।

जो गुरु शाश्वत प्रेम के आत्मिक प्रेम के भेद को जानता है । और सार शब्द की पहचान मार्ग जानता है । और परम पुरुष की स्थिर भक्ति कराता है । तथा सुरति को शब्द में लीन कराने की क्रिया समझाता है । ऐसे सदगुरु से मन लगाकर प्रेम करे । और दुष्ट बुद्धि एवं कपट चालाकी छोङ दे । तब ही वह निज घर को प्राप्त होता है । और इस भवसागर से तर के फ़िर लौटकर नहीं आता ।

तीनों काल के बंधन से मुक्त सदा अविनाशी सत्यपुरुष का नाम अमृत है । अनमोल है । स्थिर है । शाश्वत सत्य से मिलाने वाला है । अतः मनुष्य को चाहिये कि वह अपनी वर्तमान कौवे की चाल छोङकर हँस स्वभाव अपनाये । और बहुत सारे पँथ जो कुमार्ग की ओर ले जाते हैं । उनमें बिलकुल भी मन न लगाये । और बहुत सारे कर्म भ्रम के जंजाल को त्याग कर सत्य को जाने । तथा अपने शरीर को मिट्टी ही जाने । और सदगुरु के वचनों पर पूर्ण विश्वास करे ।

कबीर साहब के ऐसे वचन सुनकर धर्मदास बहुत प्रसन्न हुये । और दौङकर कबीर के चरणों से लिपट गये । वे प्रेम में गदगद हो गये । और उनके खुशी से आँसू बहने लगे ।

फ़िर वह बोले - हे साहिब ! आप मुझे ज्ञान पाने के अधिकारी और अनाधिकारी जीवों के लक्षण भी कहें ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! जिसको तुम विनमृ देखो । जिस पुरुष में ज्ञान की ललक । परमार्थ और सेवा भावना हो । तथा जो मुक्ति के लिये बहुत अधीर हो । जिसके मन में दया शील क्षमा आदि सदगुण हों । हे धर्मदास ! उसको नाम (हँसदीक्षा) और सत्यज्ञान का उपदेश करो ।

और हे धर्मदास ! जो दयाहीन हो । सार शब्द का उपदेश न माने । और काल का पक्ष लेकर व्यर्थ वाद विवाद तर्क वितर्क करे । और जिसकी दृष्टि चंचल हो । उसको ज्ञान प्राप्त नहीं हो सकता । होठों के बाहर जिसके दाँत दिखाई पङें । उसको जानो कि कालदूत वेश धरकर आया है । जिसकी आँख के मध्य तिल हो । वह काल का ही रूप है ।

जिसका सिर छोटा हो । परन्तु शरीर विशाल हो । उनके ह्रदय में अक्सर कपट होता है । उसको भी सार शब्द ज्ञान मत दो । क्योंकि वह सत्य पंथ की हानि ही करेगा ।

तब धर्मदास ने कबीर साहब को श्रद्धा से दंडवत प्रणाम किया

शरीर ज्ञान परिचय

तब धर्मदास बोले - हे साहिब ! मैं बङ भागी हूँ । जो आपने मुझे ज्ञान दिया । अब आप मुझे शरीर का निर्णय विचार भी कहिये । इसमें कौन सा देवता कहाँ रहता है ? और उसका क्या कार्य है ? नाङी रोम कितने हैं ? और शरीर में खून किसलिये है ? तथा स्वांस कौन से मार्ग से चलती है ? आँते । पित्त । फ़ेफ़ङा और आमाशय इनके बारे में भी बताओ । शरीर में स्थिति कौन से कमल पर कितना जप होता है ? और रात दिन में कितनी स्वांस चलती है ? कहाँ से शब्द उठकर आता है ? तथा कहाँ जाकर वह समाता है ? अगर कोई जीव झिलमिल ज्योति को देखता है । तो मुझे उसका भी ज्ञान विवेक कहो कि उसने कौन से देवता का दर्शन पाया ?

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! अब तुम शरीर विचार सुनो ।

सत्यपुरुष का नाम सबसे न्यारा और शरीर से अलग है । क्योंकि वह आदिपुरुष कृमशः - स्थूल । सूक्ष्म । कारण । महाकारण तथा कैवल्य शरीरों से अलग है । इसलिये उसका नाम भी अलग ही है ।

पहला मूलाधार चक्र गुदा स्थान है । यहाँ 4 दल का कमल है । इसका देवता गणेश है । यहाँ 1600 अजपा जाप है मूलाधार के ऊपर स्वाधिष्ठान चक्र है । यह 6 दल का कमल है । यहाँ बृह्मा सावित्री का स्थान है । यहाँ 6000 अजपा जाप है । 8 दल (पत्ते) का कमल नाभि स्थान पर है । यह विष्णु लक्ष्मी का स्थान है । यहाँ 6000 अजपा जाप है ।

इसके ऊपर ह्रदय स्थान पर 12 दल का कमल है । यह शिव पार्वती का स्थान है । यहाँ 6000 अजपा जाप है । विशुद्ध चक्र का स्थान कंठ (गला) है । यह 16 दल का कमल है । इसमें सरस्वती का स्थान है । इसके लिये 1000 अजपा जाप है ।

भंवर गुफ़ा 2 दल का कमल है । वहाँ मन राजा का थाना (चौकी - मुक्त होते जीव को भरमाने के लिये) है ।इसके लिये भी 1000 अजपा जाप है । इस कमल के ऊपर शून्य 0 स्थान है । वहाँ होती झिलमिल ज्योति को काल निरंजन जानो । सबसे ऊपर सुरति कमल में सदगुरु का वास है । वहाँ अनन्त अजपा जाप है ।

हे धर्मदास ! सबसे नीचे मूलाधार चक्र से ऊपर तक 21600 स्वांस दिन रात चलती है ।

(इस बारे में मैं कई लेखों में बता चुका हूँ । सामान्य स्वांस लेने और छोङने में 4 सेकेंड का समय लगता है । इस हिसाब से 24 घंटे में 21600 स्वांस दिन रात आती जाती है - राजीव)

हे धर्मदास ! अब शरीर के बारे में जानो । 5 तत्व से बना ये कुम्भ (घङा या घट रूपी) रूपी शरीर है । तथा शरीर में 7 धातुयें - रक्त । माँस । मेद । मज्जा । रस । शुक्र । और अस्थि हैं । इनमें रस बना खून सारे शरीर में दौङता हुआ शरीर का पोषण करता है । जैसे प्रथ्वी पर असंख्य पेङ पौधे हैं । वैसे ही प्रथ्वी रूपी इस शरीर पर

करोंड़ो रोम (रोंये) होते है । इस शरीर की संरचना में 72 कोठे हैं । जहाँ 72000 नाड़ियों की गाँठ बँधी हुयी है । इस तरह शरीर में धमनी और शिरा प्रधान नाड़ियाँ हैं । 72 नाड़ियों में 9 पुहुखा । गंधारी । कुहू । वारणी । गणेशनी । पयस्विनी । हस्तिनी । अलंवुषा । शंखिनी हैं । इन 9 में भी इड़ा । पिंगला । सुषमना ये 3 प्रधान हैं । इन तीन नाड़ियों में भी सुषमना खास है । इस नाड़ी के द्वारा ही योगी सत्य यात्रा करते हैं ।

नीचे मूलाधार चक्र से लेकर ऊपर बृहमरंध्र तक जितने भी कमल दल चक्र आते हैं । उनसे शब्द उठता है । और उनका गुण प्रकट करता है । तब वहाँ से फ़िर उठकर वह शब्द शून्य 0 में समा जाता है । आँत का 21 हाथ होने का प्रमाण है । और आमाशय सवा हाथ अनुमान है । नभ क्षेत्र का सवा हाथ प्रमाण है । और इसमें सात खिड़की - दो कान । दो आँख । दो नाक छिद । एक मुँह है ।

इस तरह इस शरीर में स्थित प्राण वायु के रहस्य को जो योगी जान लेता है । और निरंतर ये योग करता है । परन्तु सदगुरु की भक्ति के बिना वह भी लख 84 में ही जाता है ।

हर तरह से ज्ञान योग कर्म योग से श्रेष्ठ है । अतः इन विभिन्न योगों के चक्कर में न पड़कर नाम की सहज भक्ति से अपना उद्धार करे । और शरीर में रहने वाले अत्यन्त बलबान शत्रु काम । क्रोध । मद । लोभ आदि को ज्ञान द्वारा नष्ट करके जीवन मुक्त होकर रहे ।

हे धर्मदास ! ये सब कर्मकांड मन के व्यवहार हैं । अतः तुम सदगुरु के मत से ज्ञान को समझो । काल निरंजन या मन शून्य 0 में ज्योति दिखाता है । जिसे देखकर जीव उसे ही ईश्वर मानकर धोखे में पड़ जाता है । इस प्रकार ये मन रूपी काल निरंजन अनेक प्रकार के भृम उत्पन्न करता है ।

हे धर्मदास ! योग साधना में मस्तक में प्राण रोकने से जो ज्योति उत्पन्न होती है । वह आकार रहित निराकार मन ही है । मन में ही जीवों को भरमाने उन्हें पाप कर्मों में विषयों में प्रवृत करने की शक्ति है । उसी शक्ति से वह सब जीवों को कुचलता है । उसकी यह शक्ति तीनों लोक में फ़ैली हुयी है । इस तरह मन द्वारा भृमित यह मनुष्य खुद को पहचान कर असंख्य जन्मों से धोखा खा रहा है । और ये भी नहीं सोच पाता कि काल निरंजन के कपट से जिन तुच्छ देवी देवताओं के आगे वह सिर झुकाता है । वे सब उसके (आत्मा - मनुष्य) के ही आश्रित हैं । हे धर्मदास ! यह सव निरंजन का जाल है । जो मनुष्य देवी देवताओं को पूजता हुआ कल्याण की आशा करता है । परन्तु सत्यनाम के बिना यह यम की फ़ाँस कभी नहीं कटेगी ।

कौवा और कोयल से भी सीखो ?

कबीर साहब बोले- हे धर्मदास ! कोयल के बच्चे का स्वभाव सुनो । और उसके गुणों को जानकर विचार करो । कोयल मन से चतुर तथा मीठी वाणी बोलने वाली होती है । जबकि उसका वैरी कौवा पाप की खान होता है । कोयल कौवे के घर (घोंसले) में अपना अण्डा रख देती है ।

विपरीत गुण वाले दुष्ट मित्र कौवे के प्रति कोयल ने अपना मन एक समान किया । तब सखा मित्र सहायक

समझकर कौवे ने उस अण्डे को पाला । और वह काल बुद्धि कागा (कौवा) उस अण्डे की रक्षा करता रहा ।

समय के साथ कोयल का अण्डा बडकर पक्का हुआ । और समय आने पर फ़ूट गया । तब उससे बच्चा निकला । कुछ दिन बीत जाने पर कोयल के बच्चे की आँखे ठीक से खुल गयी । और वह समझदार होकर जानने समझने लगा । फ़िर कुछ ही दिनों में उसके पँख भी मजबूत हो गये । तब कोयल समय समय पर आ आकर उसको शब्द सुनाने लगी ।

वह अपना निज शब्द सुनते ही कोयल का बच्चा जाग गया । यानी सचेत हो गया । और सच का बोध होते ही उसे अपने वास्तविक कुल का वचन वाणी प्यारी लगी । फ़िर जब भी कागा कोयल के बच्चे को दाना खिलाने घुमाने ले जाये । तब तब कोयल अपने उस बच्चे को वह मीठा मनोहर शब्द सुनाये ।

कोयल के बच्चे में जब उस शब्द द्वारा अपना अंश अंकुरित हुआ । यानी उसे अपनी असली पहचान का बोध हुआ । तो उस बच्चे का हृदय कौवे की ओर से हट गया । और एक दिन कौवे को अंगूठा दिखलाकर वह कोयल का बच्चा उससे पराया होकर उङ चला ।

कोयल का बच्चा अपनी वाणी बोलता हुआ चला । और तब घबराकर उसके पीछे पीछे कागा व्याकुल बेहाल होकर दौङा । उसके पीछे पीछे भागता हुआ कागा थक गया । परन्तु उसे नहीं पा सका । फ़िर वह बेहोश हो गया । और बाद में होश आने पर निराश होकर अपने घर लौट आया ।

कोयल का बच्चा जाकर अपने परिवार से मिलकर सुखी हो गया । और निराश कागा झक मारकर रह गया ।

हे धर्मदास ! जिस प्रकार कोयल का बच्चा होता है कि वह कौवे के पास रहकर भी अपना शब्द सुनते ही उसका साथ छोङकर अपने परिवार से मिल जाता है ।

इसी विधि से जब कोई भी समझदार जीव मनुष्य अपने निज नाम और निज आत्मा की पहचान के लिये सचेत हो जाता है । तो वह मुझसे (सदगुरु से) स्वयँ ही मिल जाता है । और अपने असली घर परिवार सत्यलोक में पहुँच जाता है । तब मैं उसके 101 वंश तार देता हूँ ।

कोयल सुत जस शूरा होई । यह विधि धाय मिले मोहि कोई ।

निज घर सुरत करे जो हँसा । तारों ताहि एकोत्तर वंशा ।

हे धर्मदास ! इसी तरह कोयल के बच्चे की भांति कोई शूरवीर मनुष्य काल निरंजन की असलियत को जानकर सदगुरु के प्रति शब्द (नाम उपदेश) के लिये मेरी तरफ़ दौङता है । और निज घर सत्यलोक की तरफ़ अपनी सुरति (पूरी एकाग्रता) रखता है । मैं उसके 101 वंश तार देता हूँ ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! कौवे की नीच चाल चलन नीच बुद्धि को छोङकर हँस की रहनी सत्य आचरण सदगुण प्रेम शील स्वभाव शुभ कार्य जैसे उत्तम लक्षणों को अपनाने से मनुष्य जीव सत्यलोक जाता है । जिस प्रकार कागा की कर्कश वाणी कांव कांव किसी को अच्छी नहीं लगती । परन्तु कोयल की मधुर वाणी कुहु कुहु सबके मन को भाती है । इसी प्रकार कोयल की तरह हँस जीव विचार पूर्वक उत्तम वाणी बोले ।

जो कोई अग्नि की तरह जलता हुआ क्रोध में भरकर भी सामने आये । तो हँस जीव को शीतल जल के समान उसकी तपन बुझानी चाहिये । ज्ञान अज्ञान की यही सही पहचान है । जो अज्ञानी होता है । वही कपटी उग्र तथा दुष्ट बुधि वाला होता है । गुरु का ज्ञानी शिष्य शीतल और प्रेम भाव से पूर्ण होता है । उसमें सत्य विवेक संतोष आदि सदगुण समाये होते हैं ।

ज्ञानी वही है । जो झूठ पाप अनाचार दुष्टता कपट आदि दुर्गुणों से युक्त दुष्ट बुद्धि को नष्ट कर दे । और काल

निरंजन रूपी मन को पहचान कर उसे भुला दे । उसके कहने में न आये । जो ज्ञानी होकर कटु वाणी बोलता है । वह ज्ञानी अज्ञान ही बताता है । उसे अज्ञानी ही समझना चाहिये ।

जो मनुष्य शूरवीर की तरह धोती खोंसकर मैदान में लड़ने के लिये तैयार होता है । और युद्ध भूमि में आमने सामने जाकर मरता है । तब उसका बहुत यश होता है । और वह सच्चा वीर कहलाता है । इसी प्रकार जीवन में अज्ञान से उत्पन्न समस्त पाप दुर्गुण और बुराईयों को परास्त करके जो ज्ञान बिज्ञान उत्पन्न होता है । उसी को ज्ञान कहते हैं ।

मूर्ख अज्ञानी के हृदय में शुभ सतकर्म नहीं सूझता । और वह सदगुरु का सार शब्द और सदगुरु के महत्व को नहीं समझता । मूर्ख इंसान से अधिकतर कोई कुछ कहता नहीं है । यदि किसी नेत्रहीन का पैर यदि विष्ठा (मल) पर पड़ जाये । तो उसकी हँसी कोई नहीं करता । लेकिन यदि आँख होते हुये भी किसी का पैर विष्ठा से सन जाये । तो सभी लोग उसको ही दोष देते हैं ।

हे धर्मदास ! यही ज्ञान और अज्ञान है । ज्ञान और अज्ञान विपरीत स्वभाव वाले ही होते हैं । अतः ज्ञानी पुरुष हमेशा सदगुरु का ध्यान करे । और सदगुरु के सत्य शब्द (नाम या महामंत्र) को समझे । सबके अन्दर सदगुरु का वास है । पर वह कहीं गुप्त तो कहीं प्रकट है । इसलिये सबको अपना मानकर जैसा मैं अविनाशी आत्मा हूँ । वैसे ही सभी जीवात्माओं को समझे । और ऐसा समझकर समान भाव से सबसे नमन करे । और ऐसी गुरु भक्ति की निशानी लेकर रहे ।

रंग कच्चा होने के कारण । इस देह को कभी भी नाशवान होने वाली जानकर भक्त प्रहलाद की तरह अपने सत्य संकल्प में दृण मजबूत होकर रहे । यधपि उसके पिता हिरण्यकश्यप ने उसको बहुत कष्ट दिये । लेकिन फ़िर भी प्रहलाद ने अडिग होकर हरि गुण वाली प्रभु भक्ति को ही स्वीकार किया । ऐसी ही प्रहलाद कैसी पक्की भक्ति करता हुआ । सदगुरु से लगन लगाये रहे । और 84 में डालने वाली मोह माया को त्याग कर भक्ति साधना करे । तब वह अनमोल हुआ हँस जीव अमरलोक सत्यलोक में निवास पाता है । और अटल होकर स्थिर होकर जन्म मरण के आवागमन से मुक्त हो जाता है ।

मन की कपट करामात

तब कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! जिस प्रकार कोई नट बंदर को नाच नचाता है । और उसे बंधन में रखता हुआ अनेक दुख देता है । इसी प्रकार ये मन रूपी काल निरंजन जीव को नचाता है । और उसे बहुत दुख देता है । यह मन जीव को भृमित कर पाप कर्मों में प्रवृत करता है । तथा सांसारिक बंधन में मजबूती से बाँधता है । मुक्ति उपदेश की तरफ़ जाते हुये किसी जीव को देखकर मन उसे रोक देता है ।

इसी प्रकार मनुष्य की कल्याणकारी कार्यों की इच्छा होने पर भी यह मन रोक देता है । मन की इस चाल को कोई बिरला पुरुष ही जान पाता है ।

यदि कहीं सत्यपुरुष का ज्ञान हो रहा हो । तो ये मन जलने लगता है । और जीव को अपनी तरफ़ मोड़कर विपरीत

बहा ले जाता है । इस शरीर के भीतर और कोई नहीं है । केवल मन और जीव ये दो ही रहते हैं । पाँच तत्व और पाँच तत्वों की पच्चीस प्रकृतियाँ । सत रज तम ये तीन गुण और दस इन्द्रियाँ ये सब मन निरंजन के ही चेले हैं ।
सत्यपुरुष का अंश जीव आकर शरीर में समाया है । और शरीर में आकर जीव अपने घर की पहचान भूल गया है । पाँच तत्व । पच्चीस प्रकृति तीन गुण और मन इन्द्रियों ने मिलकर जीव को घेर लिया है । जीव को इन सबका ज्ञान नहीं है । और अपना ये भी पता नहीं कि मैं कौन हूँ ? इस प्रकार से बिना परिचय के अविनाशी जीव काल निरंजन का दास बना हुआ है ।
जीव अज्ञानवश खुद को और इस बंधन को नहीं जानता । जैसे तोता लकडी के नलनी यंत्र में फ़ँसकर कैद हो जाता है । यही स्थिति मनुष्य की है ।
जैसे शेर ने अपनी परछाईं कुँए के जल में देखी । और अपनी छाया को दूसरा शेर जानकर कूद पडा । और मर गया । ठीक ऐसे ही जीव काल माया का धोखा समझ नहीं पाता । और बंधन में फ़ँसा रहता है । जैसे काँच के महल के पास गया कुत्ता दर्पण में अपना प्रतिबिम्ब देखकर भौंकता है । और अपनी ही आवाज और प्रतिबिम्ब से धोखा खाकर दूसरा कुत्ता समझकर उसकी तरफ़ भागता है । ऐसे ही काल निरंजन ने जीव को फ़ँसाने के लिये माया मोह का जाल बना रखा है ।
काल निरंजन और उसकी शाखाओं (कर्मचारी देवताओं आदि ने) ने जो नाम रखे हैं । वे बनाबटी हैं । जो देखने सुनने में शुद्ध माया रहित और महान लगते हैं । परबृह्म पराशक्ति आदि आदि । परन्तु सच्चा और मोक्षदायी केवल आदि पुरुष का आदिनाम ही है ।
अतः हे धर्मदास ! जीव इस काल की बनायी भूल भूलैया में पडकर सत्यपुरुष से बेगाना हो गये । और अपना भला बुरा भी नहीं विचार सकते । जितना भी पाप कर्म और मिथ्या विषय आचरण है । ये इसी मन निरंजन का ही है । यदि जीव इस दुष्ट मन निरंजन को पहचान कर इससे अलग हो जाये । तो निश्चित ही जीव का कल्याण हो जाय ।
यह मैंने मन और जीव की भिन्नता तुम्हें समझाई । जो जीव सावधान सचेत होकर ज्ञान दृष्टि से मन को देखेगा । समझेगा । तो वह इस काल निरंजन के धोखे में नहीं आयेगा । जैसे जब तक घर का मालिक सोता रहता है । तब तक चोर उसके घर में सेंध लगाकर चोरी करने की कोशिश करते रहते हैं । और उसका धन लूट ले जाते हैं । ऐसे ही जब तक शरीर रूपी घर का स्वामी ये जीव अज्ञानवश मन की चालों के प्रति सावधान नहीं रहता । तब तक मन रूपी चोर उसका भक्ति और ज्ञान रूपी धन चुराता रहता है । और जीव को नीच कर्मों की ओर प्रेरित करता रहता है । परन्तु जब जीव इसकी चाल को समझकर सावधान हो जाता है । तब इसकी नहीं चलती ।
जो जीव मन को जानने लगता है । उसकी जागृत कला (योग स्थिति) अनुपम होती है । जीव के लिये अज्ञान अँधकार बहुत भयंकर अँधकूप के समान है । इसलिये ये मन ही भयंकर काल है । जो जीव को बेहाल करता है ।
स्त्री पुरुष मन द्वारा ही एक दूसरे के प्रति आकर्षित होते हैं । और मन उमडने से ही शरीर में कामदेव जीव को बहुत सताता है । इस प्रकार स्त्री पुरुष विषय भोग में आसक्त हो जाते है । इस विषय भोग का आनन्द रस काम इन्द्री और मन ने लिया । और उसका पाप जीव के ऊपर लगा दिया । इस प्रकार पाप कर्म और सब अनाचार कराने वाला ये मन होता है । और उसके फ़लस्वरूप अनेक नरक आदि कठोर दंड जीव भोगता है ।
दूसरों की निंदा करना । दूसरों का धन हडपना । यह सब मन की फ़ाँसी है । सन्तों से वैर मानना । गुरु की निन्दा करना यह सब मन बुद्धि का कर्म काल जाल है । जिसमें भोला जीव फ़ँस जाता है ।
पर स्त्री पुरुष से कभी व्यभिचार न करे । अपने मन पर सयंम रखे । यह मन तो अँधा है । विषय विष रूपी कर्मों को बोता है । और प्रत्येक इन्द्री को उसके विषय में प्रवृत करता है । मन जीव को उमंग देकर मनुष्य से तरह

तरह की जीव हत्या कराता है । और फ़िर जीव से नरक भुगतवाता है ।

यह मन जीव को अनेकानेक कामनाओं की पूर्ति का लालच देकर तीर्थ वृत तुच्छ देवी देवताओं की जङ मूर्तियों की सेवा पूजा में लगाकर धोखे में डालता है । लोगों को द्वारिकापुरी में यह मन दाग (छाप) लगवाता है । मुक्ति आदि की झूठी आशा देकर मन ही जीव को दाग देकर बिगाङता है ।

अपने पुण्य कर्म से यदि किसी का राजा का जन्म होता है । तो पुण्य फ़ल भोग लेने पर वही नरक भुगतता है । और राजा जीवन में विषय विकारी होने से नरक भुगतने के बाद फ़िर उसका सांड का जन्म होता है । और वह बहुत गायों का पति होता है ।

पाप और पुण्य दो अलग अलग प्रकार के कर्म होते हैं । उनमें पाप से नरक और पुण्य से स्वर्ग प्राप्त होता है । पुण्य कर्म क्षीण हो जाने से फ़िर नरक भुगतना होता है । ऐसा विधान है । अतः कामना वश किये गये यह पुण्य का यह कर्म योग भी मन का जाल है । निष्काम भक्ति ही सर्वश्रेष्ठ है । जिससे जीव का सब दुख द्वंद मिट जाता है ।

हे धर्मदास ! इस मन की कपट करामात कहाँ तक कहूँ । बृहमा विष्णु महेश तीनों प्रधान देवता शेषनाग तथा तैतीस करोङ देवता सब इसके फ़ँदे में फ़ँसे और हार कर रहे । मन को वश में न कर सके । सदगुरु के बिना कोई मन को वश में नहीं कर पाता । सभी मन माया के बनाबटी जाल में फ़ँसे पङे हैं ।

कपटी काल निरंजन का चरित्र

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! अब इस कपटी काल निरंजन का चरित्र सुनो । किस प्रकार वह जीवों की छल बुद्धि कर अपने जाल में फ़ँसाता है । इसने कृष्ण अवतार धरकर गीता की कथा कही । परन्तु अज्ञानी जीव इसके चाल रहस्य को नहीं समझ पाता ।

अर्जुन श्रीकृष्ण का सच्चा सेवक था । और श्रीकृष्ण की भक्ति में लगन लगाये रहता था । श्रीकृष्ण ने उसे सव सूक्ष्म ज्ञान कहा । सांसारिक विषयों से लगाव और सांसारिक विषयों से परे आत्म मोक्ष सब कुछ सुनाया । परन्तु बाद में काल अनुसार उसे मोक्ष मार्ग से हटाकर सांसारिक कर्म कर्तव्य में लगने को प्रेरित किया । जिसके परिणाम स्वरूप भयंकर महाभारत युद्ध हुआ ।

श्रीकृष्ण ने गीता के ज्ञान उपदेश में पहले दया क्षमा आदि गुण उपदेश के बारे में बताया । और ज्ञान बिज्ञान कर्म योग आदि कल्याण देने वाले उपदेशों का वर्णन किया । जबकि अर्जुन सत्य भक्ति में लगन लगाये था । तथा वह श्रीकृष्ण को बहुत मानता था ।

पहले श्रीकृष्ण ने अर्जुन को मुक्ति की आशा दी । परन्तु बाद में उसे नरक में डाल दिया । कल्याणदायक ज्ञान योग का त्याग कराकर उसे सांसारिक कर्म कर्तव्य की ओर घुमा दिया । जिससे कर्म के वश हुये अर्जुन ने बाद में बहुत दुख पाया । मीठा अमृत दिखाकर उसका लालच देकर धोखे से विष समान दुख दे दिया । इस प्रकार काल जीवों को बहला फ़ुसलाकर सन्तों की छवि बिगाङता है । और उन्हें मुक्ति से दूर रखता है । जीवों में सन्तों के प्रति अविश्वास और संदेह उत्पन्न करता है ।

इस काल निरंजन की छल बुद्धि कहाँ कहाँ तक गिनाऊँ । उसे कोई कोई विवेकी सन्त ही पहचानता है । जब कोई ज्ञान मार्ग में पक्का रहता है । तभी उसे सत्य मार्ग सूझता है । तब वह यम के छल कपट को समझता है । और उसे पहचानता हुआ उससे अलग हो जाता है । सदगुरु की शरण में जाने पर यम का नाश हो जाता है । तथा अटल अक्षय सुख प्राप्त होता है ।

तब धर्मदास बोले - हे प्रभु ! इस काल निरंजन का चरित्र मैंने समझ लिया । अब आप सत्य पँथ की डोरी कहो । जिसको पकङकर जीव यम निरंजन से अलग हो जाता है ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! मैं तुमको सत्यपुरुष की डोरी की पहचान कराता हूँ । सत्यपुरुष की शक्ति को जब यह जीव जान लेता है । तब काल कसाई उसका रास्ता नहीं रोक पाता ।

सत्यपुरुष की शक्ति उनके एक ही नाल से उत्पन्न 16 सुत है । उन शक्तियों के साथ ही जीव सत्यलोक को जाता है । बिना शक्ति के पँथ नहीं चल सकता । शक्तिहीन जीव तो भवसागर में ही उलझा रहता है । ये शक्तियाँ सदगुणों के रूप में बतायी गयी हैं ।

ज्ञान । विवेक । सत्य । संतोष । प्रेमभाव । धीरज । मौन । दया । क्षमा । शील । निहकर्म । त्याग । वैराग्य । शांति । निज धर्म ।

दूसरों का दुख दूर करने के लिये ही तो करुणा की जाती है । परन्तु अपने आप भी करुणा करके अपने जीव का उद्धार करे । और सबको मित्र समान समझकर अपने मन में धारण करे । इन शक्ति स्वरूप सदगुणों को ही धारण कर जीव सत्यलोक में विश्राम पाता है । अतः मनुष्य जिस भी स्थान पर रहे । अच्छी तरह से समझ बूझ कर सत्य रास्ते पर चले । और मोह ममता काम क्रोध आदि दुर्गुणों पर नियंत्रण रखे । इस तरह इस डोर के साथ जो सत्यनाम को पकङता है । वह जीव सत्यलोक जाता है ।

तब धर्मदास बोले - हे प्रभु ! आप मुझे पँथ का वर्णन करो । और पँथ के अंतर्गत विरक्ति और गृहस्थ की रहनी पर भी प्रकाश डालो । कौन सी रहनी से वैरागी वैराग्य करे । और कौन सी रहनी से गृहस्थ आपको प्राप्त करे ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! सुनो । अब मैं वैरागी के लिये आचरण बताता हूँ । वह पहले अभक्ष्य पदार्थ माँस मदिरा आदि का त्याग करे । तभी हँस कहायेगा । वैरागी सन्त सत्यपुरुष की अनन्य भक्ति अपने ह्रदय में धारण करे । किसी से भी द्वेष और वैर न करे । ऐसे पाप कर्मों की तरफ़ देखे भी नहीं । सब जीवों के प्रति ह्रदय में दया भाव रखे । मन वचन कर्म से भी किसी जीव को न मारे । सत्य ज्ञान का उपदेश और नाम ले । जो मुक्ति की निशानी है । जिससे पाप कर्म अज्ञान तथा अहंकार का समूल नाश हो जायेगा । वैरागी बृह्मचर्य वृत का पूर्ण रूप से पालन करे । काम भावना की दृष्टि से स्त्री को स्पर्श न करे । तथा वीर्य को नष्ट न करे । काम क्रोध आदि विषय और छल कपट को ह्रदय से पूर्णतया धो दे । और एक मन एक चित्त होकर नाम का सुमरण करे ।

हे धर्मदास ! अब गृहस्थ की भक्ति सुनो । जिसको धारण करने से गृहस्थ काल फ़ाँस में नहीं पङेगा । वह काग दशा (कौवा स्वभाव) पाप कर्म दुर्गुण और नीच स्वभाव से पूरी तरह दूर रहे । और ह्रदय में सभी जीवों के प्रति दया भाव बनाये रखे ।

मछली । किसी भी पशु का माँस । अंडे न खाये । और न ही शराब पिये । इनको खाना पीना तो दूर इनके पास भी न जाये । क्योंकि ये सब अभक्ष्य पदार्थ हैं । वनस्पति अंकुर से उत्पन्न अनाज फ़ल शाक सब्जी आदि का आहार करे । सदगुरु से नाम ले । जो मुक्ति की पहचान है । तब काल कसाई उसको रोक नहीं पाता है ।

हे भाई ! जो गृहस्थ जीव ऐसा नहीं करता । वह कहीं भी नहीं बचता । वह घोर दुख के अग्निकुन्ड में जल जलकर नाचता है । और पागल हुआ सा इधर उधर को भटकता ही है । उसे अनेकानेक कष्ट होते हैं । और वह जन्म

जन्म बारबार कठोर नरक में जाता है । वह करोंडो जन्म जहरीले साँप के पाता है । तथा अपनी ही विष ज्वाला का दुख सहता हुआ यूँ ही जन्म गँवाता है ।

वह विष्ठा (मल टट्टी) में कीङा कीट का शरीर पाता है । और इस प्रकार 84 की योनियों के करोंङो जन्म तक नरक में पङा रहता है । और तुमसे जीव के घोर दुख को क्या कहूँ । मनुष्य चाहे करोङो योग आराधना करे । किन्तु बिना सदगुरु के जीव को हानि ही होती है । सदगुरु मन बुद्धि पहुँच के परे का अगम ज्ञान देने वाले हैं । जिसकी जानकारी वेद भी नहीं बता सकते ।

वेद इसका उसका यानी कर्म योग उपासना और बृहम का ही वर्णन करता है । वेद सत्यपुरुष का भेद नहीं जानता । अतः करोंङो में कोई ऐसा विवेकी संत होता है । जो मेरी वाणी को पहचान कर गृहण करता है । काल निरंजन ने खानी वाणी के बंधन में सबको फ़ँसाया हुआ है । मंद बुद्ध अल्पज्ञ जीव उस चाल को नहीं पहचानता । और अपने

घर आनन्द धाम सत्यलोक नहीं पहुँच पाता । तथा जन्म मरण और नरक के भयानक कष्टों में ही फ़ँसा रहता है ।

अनुरागी के लक्षण

कबीर साहब बोले - जो शब्द की जाँच करता है । और गुणों को भली भांति परखता है । ऐसा ही कोई श्रद्धा रखने वाला जिज्ञासु ही सत्यज्ञान को पायेगा । सदगुरु के सद उपदेश को सच्चे ज्ञान का अधिकारी मन लगाकर ध्यानपूर्वक सुनता है । जब चमकते हुये सूर्य के समान सदगुरु का सत्यज्ञान ह्रदय में प्रकाशित होता है । तब मोह माया रूपी अँधकार नष्ट होकर सब कुछ अपने वास्तविक रूप में दिखाई देने लगता है । और सब भृम मिट जाते हैं ।

लाखों करोंङो में से कोई एक ज्ञानवान संत सज्जन होता है । जो सार शब्द को गम्भीरता से विचार करके अपने ह्रदय में धरता है । जिनके ह्रदय में परम पिता परमात्मा के प्रति सच्चा भक्ति प्रेम निवास करता है । वही ज्ञानी जन सभी बंधनों से मुक्त होकर मोक्ष पद प्राप्त करता है ।

तब धर्मदास बोले - हे साहिब ! अनुरागी मनुष्य के लक्षण और उसकी वास्तविक पहचान क्या है ? आपके कहने के अनुसार बिना अनुराग के जीव इस संसार रूपी भवसागर से पार जा नहीं सकता । अतः हे प्रभु ! वह अनुराग कैसा है ? यह आप मुझे उदाहरण से समझाकर कहें ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! अनुरागी के लक्षण सुनो ।

जैसे हिरन नाद शब्द को सुनकर दौङता हुआ । उसमें पूर्णतया मगन होकर शिकारी के पास दौङा चला आता है । और पकङा जाता है । उस मनोहारी शब्द की मधुरता में हिरन के मन में अपने पकङे जाने या मरने का भी डर नहीं होता । और उस स्वर में इतना लीन हो जाता है कि शिकारी द्वारा पकङे जाने पर भी अपना सिर कटाते हुये

भी नहीं डरता । जिस प्रकार नाद शब्द के प्रेमी हिरन ने शिकारी को अपना सिर दे दिया । ऐसे ही सच्चे प्रेमी को भी पहचानो ।

इसी तरह हे धर्मदास ! जिस प्रकार पतंगा का स्वभाव दीपक से प्रेम करते हुये जलकर मरना होता है । वैसे ही सच्चे भक्त प्रेमी का भाव परमात्मा के लिये होता है ।

हे धर्मदास ! इसके अलावा भी अनुरागी के लक्षण सुनो ।

जिस प्रकार अपने पति के अगाध प्रेम में डूबी सती नारी अपने पति के साथ जलकर मर जाती है । और जलते समय अपने अंगो को जरा भी मोङती सिकोङती नहीं । और न ही जरा भी विचलित होकर घबराती है । सुन्दर घर धन परिवार संसार तथा सखी सहेलियों को विरक्त भाव से छोङकर वह अपने पति की प्रिय सती नारी पति के मृतक शरीर के साथ स्वयँ ही उठकर चल देती है ।

तब उस नारी को सती होने से रोकने के लिये उसके प्रियजन नाते रिश्तेदार पङोसी आदि उसके बच्चों को उसके सामने लाकर उसके प्रति उसके मोह ममता कर्तव्य आदि का बारबार बोध कराते हुये उसे समझाते हैं कि - देख ये तेरा अबोध बालक बहुत कमजोर है । जो तेरे प्यार ममता के बिना ऐसे ही मर जायेगा । अब तो तेरा घर भी सूना हो गया । फ़िर कैसे क्या उपाय होगा ?

देख तेरे घर परिवार में बहुत धन संपत्ति है । ऐसे निराश न होकर घर वापस लौट चल । परन्तु उन लोगों के बारबार कहने सुनने का उस पर कोई प्रभाव नहीं पङता । उसके ह्रदय में तो केवल अपने प्राण से प्रिय पति का अद्वितीय प्रेम ही बसता है । और उसे इसके अतिरिक्त कुछ भी दिखायी नहीं देता ।

सभी ने उसको अलग अलग अपने अपने ढंग से बहुत समझाया । परन्तु पति प्रेम में आकंठ डूबी वह वियोगिनी सती नारी किसी की कोई बात न समझ सकी ।

और स्थिर अविचल भाव से उत्तर देती है - अपने प्राणों से प्रिय पति के बिछुङने से मैं ऐसी दीवानी हुयी हूँ कि अब मुझे कुछ भी नहीं सुहाता । धन घर परिवार आदि की अब मुझे जरा भी कामना नहीं है । इस संसार में चार दिन का ही जीवन जीना है । फ़िर अंत समय में मृत्यु के समय सब यहीं छूट जाता है । तब अकेले ही जाना पङता है । इस प्रकार हे सखी ! मैंने सब कुछ अच्छी तरह से सोच समझकर देखा है । और उसके बाद ही पति के साथ सती होने का निश्चय किया है । ऐसा कहकर वह पति प्रेम अनुरागी नारी सती अपने मृतक पति का शरीर हाथों में उठाकर चिता पर चढ जाती है । और प्राणप्रिय पति के मृत शरीर को गोद में रखकर परम पिता परमात्मा अंतर्यामी प्रभु का नाम लेते हुये जल जाती है ।

हे धर्मदास ! भक्त अनुरागी के लक्षण इस प्रकार मैंने तुम्हें कहे ।

परन्तु काल वास्तव में है क्या ?

कबीर साहब बोले - ऐसे जो कल्याण मोक्ष चाहने वाले सच्चे अनुरागी हैं । वह प्रभु के सत्यनाम ज्ञान से सच्ची लगन लगाये । और भक्ति भाव में कुल परिवार सभी को भुला दे । पुत्र और स्त्री आदि का मोह मन में कभी न आने दे । और जन्म से लेकर मृत्यु तक सम्पूर्ण जीवन को स्वपन के समान समझे ।

हे धर्मदास ! इस संसार में जीवन बहुत थोङा है । और अंत में मृत्यु समय कोई मददगार कोई सहायक नहीं होता । इसलिये व्यर्थ की मोह ममता में नहीं पङना चाहिये । क्योंकि अंत में तो सभी साथ छोङ देते हैं । और जीव अपने कर्म के अनुसार अपनी गति को प्राप्त होता है । इस संसार में प्राय सभी को स्त्री बहुत प्यारी होती है । जन्म देने वाले और पालन पोषण करने वाले माता पिता भी उसके समान प्यारे नहीं लगते ।

उस पत्नी के लिये यदि उसका पति अपना सिर भी कटा दे । तो भी वह जीवन के अंत में मृत्यु के समय प्रेम करने वाली सहायक सिद्‌ध नहीं होती । केवल अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिये ही रोना धोना करती है । स्वार्थ पूरा न होने पर वह शीघ्र ही अपने पति को भूलकर पीहर जाने का मन बना लेती है ।

हे धर्मदास ! जैसे सपने में राज्य । मान सम्मान । धन संपदा । प्रेम करने वाला परिवार । एवं सहायक मित्र आदि सभी मिल जाते हैं । परन्तु सपना समाप्त हो जाने पर नींद से जागने पर वास्तविकता का पता चलता है कि ये सब जो देखा था । वह सब केवल एक सपना ही था । ठीक वैसे ही स्त्री पुत्र परिवार के लोग धन संपत्ति आदि सपने के प्रेमी दिखाई पङते हैं । अंततः ये सब सपने की तरह ही खो जायेंगे ।

ऐसी स्थिति में उचित यही है कि इन सब सम्बन्धों को केवल कर्तव्य समझकर निबाहता हुआ परमात्मा के सत्यनाम ज्ञान को स्वीकार करके इंसान अपना उद्‌धार करे । ये दुर्लभ नाम भक्ति ही इस लोक और परलोक में सदैव ही सहायक है ।

इस असार संसार में अपने शरीर के समान प्रिय और कोई दूसरा नहीं होता । परन्तु अंत समय में यह शरीर भी अपना साथ नहीं देता । तब ये भी साथ छोङ देता है ।

हे धर्मदास ! इस संसार में ऐसा कोई भी सामर्थ्यवान दिखाई नहीं देता । जो जीव को अंत समय में मृत्यु के मुँह में जाने से बचा ले । उस समय मनुष्य के सभी नाते रिश्तेदार यार दोस्त प्रियजन आदि सभी वेवश और असमर्थ होते हैं ।

हाँ सिर्फ़ एक हस्ती ऐसी अवश्य होती है । जिसको मैं निश्चय से कहता हूँ । लेकिन जिसके ह्रदय में उनके प्रति सच्ची प्रेम भक्ति होगी । वही उनसे लाभ प्राप्त कर पायेगा । और वह एक सदगुरु ही होते हैं । जो इस जीव को समस्त सांसारिक काल बंधनों से और काल माया जाल से मुक्त कराते हैं । मेरी यह बात तुम बिना किसी संशय के निश्चय पूर्वक मानो ।

काल यानी मृत्यु प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में घटित होने वाला एक सत्य है । लेकिन काल काल सभी कहते तो फ़िरते हैं । परन्तु काल वास्तव में है क्या ? यह कोई नहीं जानता । सिर्फ़ इस शरीर का छूटना मरना ही काल नहीं है । वास्तव में जीव के मन में जितनी भी कल्पना है । वह सब काल ही कहलाती है ।

इन्हीं कल्पनाओं के बंधन में पङा हुआ जीव काल को प्राप्त होता है । इस संसार में जीव जिस शरीर के साथ उत्पन्न होता है । उसकी मृत्यु अवश्य होती है । लेकिन जिसका जन्म ही न हुआ हो । उसकी मृत्यु कैसे हो सकती है ?

यह सत्य है । जो पैदा होता है । केवल वही मरता है । इसलिये काल से बचने का उपाय है । जीव का पुनर्जन्म ही न हो । इसके लिये वह जिन कारण संस्कारों से यहाँ पङा हुआ है । उसे ही समूल नष्ट कर दिया जाय ।

सांसारिक मोह माया और विषय वासनाओं के बंधन में पङा हुआ अज्ञानी जीव बारबार शरीर को धारण करके पैदा होता है । और मरता है । इस प्रकार वह मोहवश आवागमन के चक्र में पङा हुआ अनन्त काल से अनन्त दुखों को

भोग रहा है ।

जीव की इस अज्ञानता को किसी भी अस्त्र शस्त्र से काटा नहीं जा सकता । दूर नहीं किया जा सकता है । इसे केवल ज्ञान युक्ति से ही काटा जा सकता है । परन्तु वह अति विलक्षण ज्ञान युक्ति सिर्फ़ पूर्ण सदगुरु देव से ही प्राप्त होती है । जिस जिज्ञासु इंसान के हृदय में मोक्ष कामना के लिये सत्य अनुराग होता है । उसे ही सदगुरु दयाभाव से सत्यज्ञान प्रदान करते हैं । उस ज्ञान की सच्ची भक्ति साधना से जीव आवागमन के चक्र से छूट जाता है ।

परमार्थ के उपदेश

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! अब मैं तुमसे परमार्थ वर्णन करता हूँ । ज्ञान को प्राप्त हुआ । ज्ञान के शरणागति हुआ कोई जीव समस्त अज्ञान और काल जाल को छोडे । तथा लगन लगाकर सत्यनाम का सुमरन करे । असत्य को छोडकर सत्य की चाल चले । और मन लगाकर परमार्थ मार्ग को अपनाये ।

हे धर्मदास ! एक गाय को परमार्थ गुणों की खान जानो । हे ज्ञानी धर्मदास ! गाय की चाल और गुणों को समझो । गाय खेत बाग आदि में घास चरती है । जल पीती है । और अंत में दूध देती है । उसके दूध घी से देवता और मनुष्य दोनों ही तृप्त होते हैं । गाय के बच्चे दूसरों का पालन करने वाले होते हैं । उसका गोबर भी मनुष्य के बहुत काम आता है । परन्तु पाप कर्म करने वाला मनुष्य अपना जन्म यूँ ही गँवाता है ।

बाद में आयु पूरी होने पर गाय का शरीर नष्ट हो जाता है । तब उसे राक्षस के समान मनुष्य उसका शरीर का माँस लेकर खाते हैं । मरने पर भी उसके शरीर का चमढा मनुष्य के लिये बहुत सुख देने वाला होता है । हे भाई ! जन्म से लेकर मृत्यु तक गाय के शरीर में इतने गुण होते हैं ।

इसलिये गाय के समान गुण वाला होने का यह वाणी उपदेश सज्जन पुरुष गृहण करे । तो काल निरंजन जीव की कभी हानि नहीं कर सकता । मनुष्य शरीर पाकर जिसकी बुद्धि ऐसी शुद्ध हो । और उसे सदगुरु मिले । तो वह हमेशा को अमर हो जाये ।

हे धर्मदास ! परमार्थ की वाणी परमार्थ के उपदेश सुनने से कभी हानि नहीं होती । इसलिये सज्जन परमार्थ का सहारा आधार लेकर भवसागर से पार हो । दुर्लभ मनुष्य जीवन के रहते मनुष्य सार शब्द के उपदेश का परिचय और ज्ञान प्राप्त करे । फ़िर परमार्थ पद को प्राप्त हो । तो वह सत्यलोक को जाये । अहंकार को मिटा दे । और निष्काम सेवा की भावना हृदय में लाये । जो अपने कुल बल धन ज्ञान आदि का अहंकार रखता है । वह सदा दुख ही पाता है ।

यह मनुष्य ऐसा चतुर बुद्धिमान बनता है कि सदगुण और शुभ कर्म होने पर कहता है कि मैंने ऐसा किया है । और उसका पूरा श्रेय अपने ऊपर लेता है । और अवगुण द्वारा उल्टा विपरीत परिणाम हो जाने पर कहता है कि भगवान ने ऐसा कर दिया ।

यह नर अस चातुर बुधिमाना । गुण शुभ कर्म कहे हम ठाना ।
ऊँच क्रिया आपन सिर लीन्हा । औगण को बोले हरि कीन्हा ।

तब ऐसा सोचने से उसके शुभ कर्मों का नाश हो जाता है । हे धर्मदास ! सब आशाओं को छोड्कर तुम निराश (

उदास विरक्त वैरागी भाव) भाव जीवन में अपनाओ । और केवल एक सत्यनाम कमाई की ही आशा करो । और अपने किये शुभ कर्म को किसी को बताओ नहीं ।
सभी देवी देवताओं भगवान से ऊँचा सर्वोपरि गुरु पद है । उसमें सदा लगन लगाये रहो । जैसे जल में अभिन्न रूप से मछली घूमती है । वैसे ही सदगुरु के श्रीचरणों में मगन रहे । सदगुर द्वारा दिये शब्द नाम में सदा मन लगाता हुआ उसका सुमरन करे ।
जैसे मछली कभी जल को नहीं भूलती । और उससे दूर होकर तङपने लगती है । ऐसे ही चतुर शिष्य गुरु से उपदेश कर उन्हें भूले नहीं । सत्यपुरुष के सत्यनाम का प्रभाव ऐसा है कि हँस जीव फ़िर से संसार में नहीं आता ।
तुम कछुए के बच्चे की कला गुण समझो । कछवी जल से बाहर आकर रेत मिट्टी में गढ्ढा खोदकर अण्डे देती है । और अण्डो को मिट्टी से ढककर फ़िर पानी में चले जाती है । परन्तु पानी में रहते हुये भी कछवी का ध्यान निरंतर अण्डों की ओर ही लगा रहता है । वह ध्यान से ही अण्डों को सेती है । समय पूरा होने पर अण्डे पुष्ट होते हैं । और उनमें से बच्चे बाहर निकल आते हैं । तब उनकी माँ कछवी उन बच्चों को लेने पानी से बाहर नहीं आती । बच्चे स्वयँ चलकर पानी में चले जाते हैं । और अपने परिवार से मिल जाते हैं ।
हे धर्मदास ! जैसे कछुये के बच्चे अपने स्वभाव से अपने परिवार से जाकर मिल जाते हैं । वैसे ही मेरे हँस जीव अपने निज स्वभाव से अपने घर सत्यलोक की तरफ़ दौडें । उनको सत्यलोक जाते देखकर काल निरंजन के यमदूत बलहीन हो जायेंगे । तथा वे उनके पास नहीं जायेंगे । वे हँस जीव निर्भय निडर होकर गरजते और प्रसन्न होते हुये नाम का सुमरन करते हुये आनन्द पूर्वक अपने घर जाते हैं । और यमदूत निराश होकर झक मारकर रह जाते हैं । सत्यलोक आनन्द का धाम अनमोल और अनुपम है । वहाँ जाकर हँस परमसुख भोगते हैं । हँस से हँस मिलकर आपस में क्रीङा करते हैं । और सत्यपुरुष का दर्शन पाते हैं ।
जैसे भंवरा कमल पर बसता है । वैसे ही अपने मन को सदगुरु के श्रीचरणों में बसाओ । तब सदा अचल सत्यलोक मिलता है । अविनाशी शब्द और सुरति का मेल करो । यह बूँद और सागर के मिलने के खेल जैसा है । इसी प्रकार जीव सत्यनाम से मिलकर उसी जैसा सत्यस्वरूप हो जाता है ।

अनल पक्षी का रहस्य

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! गुरु की महान कृपा से मनुष्य साधु कहलाता है । संसार से विरक्त मनुष्य के लिये गुरुकृपा से बढकर कुछ भी नहीं है । फ़िर ऐसा साधु अनल पक्षी के समान होकर सत्यलोक को जाता है ।
हे धर्मदास ! तुम इस अनल पक्षी के रहस्य उपदेश को सुनो । अनल पक्षी निरंतर आकाश में ही विचरण करता रहता है । और उसका अण्डे से उत्पन्न बच्चा भी स्वतः जन्म लेकर वापस अपने घर को लौट जाता है । प्रथ्वी पर बिलकुल नहीं उतरता ।
अनल पक्षी जो सदैव आकाश में ही रहता है । और केवल दिन रात पवन यानी हवा की ही आशा करता है । अनल पक्षी की रति क्रिया या मैथुन केवल दृष्टि से होता है । यानी वे जब एक दूसरे से मिलते हैं । तो प्रेमपूर्वक एक

दूसरे को रति भावना की गहन दृष्टि से देखते हैं । उनकी इस रति क्रिया विधि से मादा पक्षी को गर्भ ठहर जाता है ।

हे धर्मदास ! फ़िर कुछ समय बाद वह मादा अनल पक्षी अण्डा देती है । पर उनके निरन्तर उडने के कारण अण्डा के ठहरने का कोई आधार तो होता नहीं ।

वहाँ तो बस केवल निराधार शून्य 0 ही शून्य 0 है । तब आधारहीन होने के कारण उसका अण्डा धरती की ओर गिरने लगता है । और नीचे रास्ते में आते आते ही पूरी तरह पककर तैयार हो जाता है । और रास्ते में ही वह अण्डा फ़ूटकर शिशु बाहर निकल आता है । और नीचे गिरते ही गिरते रास्ते में वह अनल पक्षी आँखे खोल लेता है । तथा कुछ ही देर में उसके पंख उडने लायक हो जाते हैं ।

नीचे गिरते हुये जब वह प्रथ्वी के निकट आता है । तब उसे स्वतः पता लग जाता है कि यह प्रथ्वी मेरे रहने का स्थान नहीं है । तब वह अनल पक्षी अपनी सुरति के सहारे वापस अंतरिक्ष की ओर लौटने लगता है । जहाँ पर उसके माता पिता का निवास है । अनल पक्षी कभी भी अपने बच्चे को लेने प्रथ्वी की ओर नहीं आते । बल्कि उनका बच्चा स्वयँ ही पहचान लेता है कि यह प्रथ्वी मेरा घर नहीं है । और वापस पलटकर अपने असली घर की ओर चला जाता है ।

हे धर्मदास ! इस संसार में बहुत से पक्षी रहते हैं । परन्तु वे अनल पक्षी के समान गुणवान नहीं होते । ऐसे ही कुछ ही विरले जीव है । जो सदगुरु के ज्ञान अमृत को पहचानते हैं ।

निर्धनियाँ सब संसार है । धनवन्ता नहिं कोय । धनवन्ता ताही कहो । जा ते नाम रतन धन होय ।

हे धर्मदास ! इसी अनल पक्षी की तरह जो जीव ज्ञान युक्त होकर होश में आ जाता है । तो वह इस काल कल्पना लोक को पार करके सत्यलोक मुक्तिधाम में चला जाता है ।

हे धर्मदास ! जो मनुष्य जीव इस संसार के सभी आधारों को त्यागकर एक सदगुरु का आधार और उनके नाम से विश्वासपूर्वक लगन लगाये रहता है । और सब प्रकार का अभिमान त्यागकर रात दिन गुरु चरणों के अधीन रहता हुआ दास भाव से उनकी सेवा में लगा रहता है । तथा धन घर और परिवार आदि का मोह नहीं करता ।

पुत्र स्त्री तथा समस्त विषयों को संसार का ही सम्बन्ध मानकर गुरु चरणों को ह्रदय से पकडे रहता है । ताकि चाहकर भी अलग न हो । इस प्रकार जो मनुष्य साधु संत गुरु भक्ति के आचरण में लीन रहता है । सदगुरु की कृपा से उसके जन्म मरण रूपी अत्यन्त दुखदायी कष्ट का नाश हो जाता है । और वह साधु सत्यलोक को प्राप्त होता है ।

साधक या भक्त मनुष्य मन वचन कर्म से पवित्र होकर सदगुरु का ध्यान करे । और सदगुरु की आज्ञानुसार सावधान होकर चले । तब सदगुरु उसे इस जड देह से परे नाम विदेह जो शाश्वत सत्य है । उसका साक्षात्कार करा के सहज मुक्ति प्रदान करते हैं ।

कबीर साहब बोले - सत्यज्ञान बल से सदगुरु काल पर विजय प्राप्त कर अपनी शरण में आये हुये हँस जीव को सत्यलोक ले जाते हैं । जहाँ पर हँस जीव मनुष्य सत्यपुरुष के दर्शन पाता है । और अति आनन्द को प्राप्त करता है । फ़िर वह वहाँ से लौटकर कभी भी इस कष्टदायक दुखदायी संसार में वापस नहीं आता । यानी उसका मोक्ष हो जाता है ।

हे धर्मदास ! मेरे वचन उपदेश को भली प्रकार से गृहण करो । जिज्ञासु इंसान को सत्यलोक जाने के लिये सत्य के मार्ग पर ही चलना चाहिये । जैसे शूरवीर योद्धा एक बार युद्ध के मैदान में घुसकर पीछे मुढकर नहीं देखता । बल्कि निर्भय होकर आगे बढ जाता है । ठीक वैसे ही कल्याण की इच्छा रखने वाले जिज्ञासु साधक को भी सत्य की राह पर चलने के बाद पीछे नहीं हटना चाहिये ।

अपने पति के साथ सती होने वाली नारी और युद्ध भूमि में सिर कटाने वाले वीर के महान आदर्श को देख समझकर जिस प्रकार मनुष्य दया संतोष धैर्य क्षमा वैराग विवेक आदि सदगुणों को गृहण कर अपने जीवन में आगे बढते हैं । उसी अनुसार दृण संकल्प के साथ सत्य सन्तमत स्वीकार करके जीवन की राह में आगे बढना चाहिये । जीवित रहते हुये भी मृतक भाव अर्थात मान अपमान हानि लाभ मोह माया से रहित होकर सत्यगुरु के बताये सत्यज्ञान से इस घोर काल कष्ट पीङा का निवारण करना चाहिये ।

हे धर्मदास ! लाखो करोंङो में कोई एक विरला मनुष्य ही ऐसा होता है । जो सती शूरवीर और संत के बताये हुये उदाहरण के अनुसार आचरण करता है । और तब उसे परमात्मा के दर्शन साक्षात्कार प्राप्त होता है ।

तब धर्मदास बोले - हे साहिब ! मुझे मृतक भाव क्या होता है ? इसे पूर्ण रूप से स्पष्ट बताने की कृपा करें ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! जीवित रहते हुये जीवन में मृतक दशा की कहानी बहुत ही कठिन है । इस सदगुरु के सत्यज्ञान से कोई बिरला ही जान सकता है । सदगुरु के उपदेश से ही यह जाना जाता है ।

धर्मदास यह कठिन कहानी । गुरुमत ते कोई बिरले जानी ।

जीवन में मृतक भाव को प्राप्त हुआ सच्चा मनुष्य अपने परम लक्ष्य मोक्ष को ही खोजता है । वह सदगुरु के शब्द विचार को अच्छी तरह से प्राप्त करके उनके द्वारा बताये गये सत्य मार्ग का अनुसरण करता है । उदाहरण स्वरूप जैसे भृंगी (पंख वाला चींटा जो दीवाल खिङकी आदि पर मिट्टी का घर बनाता है ।) किसी मामूली से कीट के पास जाकर उसे अपना तेज शब्द घूँ घूँ घूँ सुनाता है । तब वह कीट उसके गुरु ज्ञान रूपी शब्द उपदेश को गृहण करता है । गुंजार करता हुआ भृंगी अपने ही तेज शब्द स्वर की गुंजार सुना सुनाकर कीट को प्रथ्वी पर डाल देता है । और जो कीट उस भृंगी शब्द को धारण करे । तब भृंगी उसे अपने घर ले जाता है । तथा गुंजार गुंजार कर उसे अपना स्वाति शब्द सुनाकर उसके शरीर को अपने समान बना लेता है । भृंगी के महान शब्द रूपी स्वर गुंजार को यदि कीट अच्छी तरह से स्वीकार कर ले । तो वह मामूली कीट से भृंगी के समान शक्तिशाली हो जाता है । फ़िर दोनों में कोई अंतर नहीं रहता । समान हो जाता है ।

असंख्य झींगुर कीटों में से कोई कोई बिरला कीट ही उपयुक्त और अनुकूल सुख प्रदान कराने वाला होता है । जो भृंगी के प्रथम शब्द गुंजार को हृदय से स्वीकारता है । अन्यथा कोई दूसरे और तीसरे शब्द को ही शब्द स्वर मानकर स्वीकार कर लेता है । तन मन से रहित भृंगी के उस महान शब्द रूपी गुंजार को स्वीकार करने में ही झींगुर कीट अपना भला मानते हैं ।

भृंगी के शब्द स्वर गुंजार को जो कीट स्वीकार नहीं करता । तो फ़िर वह कीट योनि के आश्रय में ही पङा रहता है । यानी वह मामूली कीट से शक्तिशाली भृंगी नहीं बन सकता ।

हे धर्मदास ! यह मामूली कीट का भृंगी में बदलने का अदभुत रहस्य है । जो कि महान शिक्षा प्रदान करने वाला है । इसी प्रकार जङ बुद्धि शिष्य जो सदगुरु के उपदेश को हृदय से स्वीकार करके गृहण करता है । उससे वह विषय विकारों से मुक्त होकर अज्ञान रूपी बंधनों से मुक्त होकर कल्याणदायी मोक्ष को प्राप्त होता है ।

हे धर्मदास ! भृंगी भाव का महत्व और श्रेष्ठता को जानों । भृंगी की तरह यदि कोई मनुष्य निश्चय पूर्ण बुद्धि से गुरु के उपदेश को स्वीकार करे । तो गुरु उसे अपने समान ही बना लेते हैं । जिसके ह्रदय में गुरु के अलावा दूसरा कोई भाव नहीं होता । और वह सदगुरु को समर्पित होता है । वह मोक्ष को प्राप्त होता है । इस तरह वह नीच योनि में बसने वाले कौवे से बदलकर उत्तम योनि को प्राप्त हो हँस कहलाता है ।

साधु का मार्ग बहुत ही कठिन है ।

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! इस मनुष्य को कौवे की चाल स्वभाव (जो साधारण मनुष्य की होती है) आदि दुर्गुणों को त्यागकर हँस स्वभाव को अपनाना चाहिये । सदगुरु के शब्द उपदेश को गृहण कर मन वचन वाणी कर्म से सदाचार आदि सदगुणों से हँस के समान होना चाहिये ।

हे धर्मदास ! जीवित रहते हुये यह मृतक स्वभाव का अनुपम ज्ञान तुम ध्यान से सुनो । इसे गृहण करके ही कोई बिरला मनुष्य जीव ही परमात्मा की कृपा को प्राप्त कर साधना मार्ग पर चल सकता है । तुम मुझसे उस मृतक भाव का गहन रहस्य सुनो । शिष्य मृतक भाव होकर सत्यज्ञान का उपदेश करने वाले सदगुरु के श्रीचरणों की पूरे भाव से सेवा करे । मृतक भाव को प्राप्त होने वाला कल्याण की इच्छा रखने वाला जिज्ञासु अपने ह्रदय में क्षमा दया प्रेम आदि गुणों को अच्छी प्रकार से गृहण करे । और जीवन में इन गुणों के वृत नियम का निर्वाह करते हुये स्वयँ को संसार के इस आवागमन के चक्र से मुक्त करे ।

जैसे प्रथ्वी को तोङा खोदा जाने पर भी वह विचलित नहीं होती । क्रोधित नहीं होती । बल्कि और अधिक फ़ल फ़ूल अन्न आदि प्रदान करती है । अपने अपने स्वभाव के अनुसार कोई मनुष्य चन्दन के समान प्रथ्वी पर फ़ूल फ़ुलवारी आदि लगाता हुआ सुन्दर बनाता है । तो कोई विष्ठा मल आदि डालकर गन्दा करता है । कोई कोई उस पर कृषि खेती आदि करने के लिये जुताई खुदाई आदि करता है । लेकिन प्रथ्वी उससे कभी विचलित न होकर शांत भाव से सभी दुख सहन करती हुयी सभी के गुण अवगुण को समान मानती है । और इस तरह के कष्ट को और अच्छा मानते हुये अच्छी फ़सल आदि देती है ।

हे धर्मदास ! अब और भी मृतक भाव सुनो । ये अत्यन्त दुरूह कठिन बात है । मृतक भाव में स्थित संत गन्ने की भांति होता है । जैसे किसान गन्ने को पहले काट छाँटकर खेत में बोकर उगाता है । फ़िर नये सिरे से पैदा हुआ गन्ना किसान के हाथ में पङकर पोरी पोरी से छिलकर स्वयँ को कटवाता है । ऐसे ही मृतक भाव का संत सभी दुख सहन करता है ।

फ़िर वह कटा छिला हुआ गन्ना अपने आपको कोल्हू में पिरवाता है । जिसमें वह पूरी तरह से कुचल दिया जाता है । और फ़िर उसमें से सारा रस निकल जाने के बाद उसका शेष भाग खो बन जाता है । फ़िर आप स्वरूप उस रस को कङाहे में उबाला जाता है । उसके अपने शरीर के रस को आग पर तपाने से गुङ बनता है । और फ़िर उसे और अधिक आँच देकर तपा तपाकर रगङ रगङकर खाँङ बनायी जाती है ।

खाँङ बन जाने पर फ़िर से उसमें ताप दिया जाता है । और फ़िर तव उसमें से जो दाना बनता है । उसे चीनी कहते हैं । चीनी हो जाने पर फ़िर से उसे तपाकर कष्ट देकर मिश्री बनाते हैं ।

हे धर्मदास ! मिश्री से पककर कंद कहलाया । तो सबके मन को अच्छा लगा । इस विधि से गन्ने की भांति जो

शिष्य गुरु की आज्ञा अनुसार आचरण व्यवहार करता हुआ सभी प्रकार के कष्ट दुख सहन करता है । वह सदगुरु की कृपा से सहज ही भवसागर को पार कर लेता है ।

हे धर्मदास ! जीवित रहते हुये मृतक भाव अपनाना बेहद कठिन है । इसे लाखों करोंडो में कोई सूरमा संत ही अपना पाता है । जबकि इसे सुनकर ही सांसारिक विषय विकारों में डूबा कायर व्यक्ति तो भय के मारे तन मन से जलने लगता है । स्वीकारना अपनाना तो बहुत दूर की बात है । और वह डर के मारे भागा हुआ इस ओर (भक्ति की तरफ़) मुड़कर भी नहीं देखता ।

जैसे गन्ना सभी प्रकार के दुख सहन करता है । ठीक ऐसे ही शरण में आया हुआ शिष्य गुरु की कसौटी पर दुख सहन करता हुआ सबको संवारे । और सदा सबको सुख प्रदान करने वाले सर्वहित के कार्य करे । वह मृतक भाव को प्राप्त गुरु के ज्ञान भेद को जानने वाला मर्मज्ञ साधक शिष्य निश्चय ही सत्यलोक को जाता है ।

वह साधु सांसारिक कलेशों और निज मन इन्द्रियों के विषय विकारों को समाप्त कर देता है । ऐसी उत्तम वैराग्य स्थिति को प्राप्त अविचल साधु से सामान्य मनुष्य तो क्या देवता तक अपने कल्याण की आशा करते हैं ।

हे धर्मदास ! साधु का मार्ग बहुत ही कठिन है । जो साधुता की उत्तम सत्यता पवित्रता निष्काम भाव में स्थित होकर साधना करता है । वही सच्चा साधु है । वही सच्चे अर्थों में साधु है । जो अपनी पाँचों इन्द्रियों आँख कान नाक जीभ कामेंद्री को वश में रखता है । और सदगुरु द्वारा दिये सत्यनाम अमृत के दिन रात चखता है ।

लुटेरा कामदेव

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! साधना करते समय सबसे पहले साधु को चक्षु (आँख) इन्द्रिय को साधना चाहिये । यानी आँखों पर नियंत्रण रखे । वह किसी विषय पर इधर उधर न भटके । उसे भली प्रकार नियंत्रण में करे । और गुरु के बताये ज्ञान मार्ग पर चलता हुआ सदैव उनके द्वारा दिया हुआ नाम भाव पूर्ण होकर सुमरन करे ।

5 तत्वों से बने इस शरीर में ज्ञान इन्द्रिय आँख का संबंध अग्नि तत्व से है । आँख का विषय रूप है । उससे ही हम संसार को विभिन्न रूपों में देखते हैं । जैसा रूप आँख को दिखायी देता है । वैसा ही भाव मन में उत्पन्न होता है । आँख द्वारा अच्छा बुरा दोनों देखने से राग द्वेष भाव उत्पन्न होते हैं । इस मायारचित संसार में अनेकानेक विषय पदार्थ हैं । जिन्हें देखते ही उन्हें प्राप्त करने की तीव्र इच्छा से तन और मन व्याकुल हो जाते हैं । और जीव ये नहीं जानता कि ये विषय पदार्थ उसका पतन करने वाले हैं । इसलिये एक सच्चे साधु को आँख पर नियंत्रण करना होता है ।

सुन्दर रूप आँखों को देखने में अच्छा लगता है । इसी कारण सुन्दर रूप को आँख की पूजा कहा गया है । और जो दूसरा रूप कुरूप है । वह देखने में अच्छा नहीं लगता । इसलिये उसे कोई नहीं देखना चाहता । असली साधु को चाहिये कि वह इस नाशवान शरीर के रूप कुरूप को एक ही करके माने । और स्थूल देह के प्रति ऐसे भाव से उठकर इसी शरीर के अन्दर जो शाश्वत अविनाशी चेतन आत्मा है । उसके दर्शन को ही सुख माने । जो ज्ञान द्वारा विदेह स्थिति में प्राप्त होता है ।

हे धर्मदास ! कान इन्द्रिय का संबंध आकाश तत्व से है । और इसका विषय शव्द सुनना है । कान सदा ही अपने अनुकूल मधुर शुभ शब्द को ही सुनना चाहते हैं । कानों द्वारा कठोर अप्रिय शब्द सुनने पर चित्त क्रोध की आग में जलने लगता है । जिससे बहुत अशांति होकर बैचैनी होती है । सच्चे साधु को चाहिये कि वह बोल कुबोल (अच्छे

- खराब वचन) दोनों को समान रूप से सहन करे । सदगुरु के उपदेश को ध्यान में रखते हुये हृदय को शीतल और शांत ही रखे ।

हे धर्मदास ! अब नासिका यानी नाक के वशीकरण के बारे में भी सुनो । नाक का विषय गंध होता है । इसका संबंध प्रथ्वी तत्व से है । अतः नाक को हमेशा सुगंध की चाह रहती है । दुर्गंध इसे बिल्कुल अच्छी नहीं लगती । लेकिन किसी भी स्थिर भाव साधक साधु को चाहिये कि वह तत्व विचार करता हुआ इसे वश में रखे । यानी सुगंध दुर्गंध में सम भाव रहे ।

हे धर्मदास ! अब जिभ्या यानी जीभ इन्द्रिय के बारे में जानो । जीभ का संबंध जल तत्व से है । और इसका विषय रस है । यह सदा विभिन्न प्रकार के अच्छे अच्छे स्वाद वाले व्यंजनों को पाना चाहती हैं । इस संसार में 6 रस मीठा कङवा खट्टा नमकीन चरपरा कसैला हैं । जीभ सदा ऐसे मधुर स्वाद की तलाश में रहती है । साधु को चाहिये कि वह स्वाद के प्रति भी सम भाव रहे । और मधुर अमधुर स्वाद की आसक्ति में न पङे । रूखे सूखे भोजन को भी आनन्द से गृहण करे ।

जो कोई पंचामृत (दूध दही शहद घी और मिश्री से बना पदार्थ) को भी खाने को लेकर आये । तो उसे देखकर मन में प्रसन्नता आदि का विशेष अनुभव न करे । और रूखे सूखे भोजन के प्रति भी अरुचि न दिखाये ।

हे धर्मदास ! विभिन्न प्रकार की स्वाद लोलुपता भी व्यक्ति के पतन का कारण बनती है । जीभ के स्वाद के फ़ेर में पङा हुआ व्यक्ति सही रूप से भक्ति नहीं कर पाता । और अपना कल्याण नहीं कर पाता ।

हे धर्मदास ! जब तक जीभ स्वाद रूपी कुँए में लटकी है । और तीक्ष्ण विष रूपी विषयों का पान कर रही है । तब तक हृदय में राग द्वेष मोह आदि बना ही रहेगा । और जीव सत्यनाम का ज्ञान प्राप्त नहीं कर पायेगा ।

हे धर्मदास ! अब मैं पाँचवी काम इन्द्रिय यानी जननेन्द्रिय के बारे में समझाता हूँ । इसका संबंध जल तत्व से है । जिसका कार्य मूत्र वीर्य का त्याग और मैथुन करना होता है । यह मैथुन रूपी कुटिल विषय भोग के पाप कर्म में लगाने वाली महान अपराधी इन्द्री है । जो अक्सर इंसान को घोर नरकों में डलवाती है । इस इन्द्री के द्वारा जिस दुष्ट काम की उत्पत्ति होती है । उस दुष्ट प्रबल कामदेव को कोई बिरला साधु ही वश में कर पाता है ।

काम वासना में प्रवृत करने वाली कामिनी का मोहिनी रूप भयंकर काल की खानि है । जिसका गृस्त जीव ऐसे ही मर जाता है । और कोई मोक्ष साधन नहीं कर पाता । अतः गुरु के उपदेश से काम भावना का दमन करने के बजाय भक्ति उपचार से शमन करना चाहिये ।

स्पष्टीकरण - यहाँ बात सिर्फ़ औरत की न होकर स्त्री पुरुष में एक दूसरे के प्रति होने वाली काम भावना के लिये है । क्योंकि मोक्ष और उद्धार का अधिकार स्त्री पुरुष दोनों को ही समान रूप से है । अतः जहाँ कामिनी स्त्री पुरुष के कल्याण में बाधक है । वहीं कामी पुरुष भी स्त्री के मोक्ष में बाधा समान ही है । काम विषय बहुत ही कठिन विकार है । और संसार के सभी स्त्री पुरुष कहीं न कहीं काम भावना से गृसित रहते हैं । काम अग्नि देह में उत्पन्न होने पर शरीर का रोम रोम जलने लगता है । काम भावना उत्पन्न होते ही व्यक्ति की मन बुद्धि से नियंत्रण समाप्त हो जाता है । जिसके कारण व्यक्ति का शारीरिक मानसिक और आध्यात्मिक पतन होता है ।

हे धर्मदास ! कामी क्रोधी लालची व्यक्ति कभी भक्ति नहीं कर पाते । सच्ची भक्ति तो कोई शूरवीर संत ही करता है । जो जाति वर्ण और कुल की मर्यादा को भी छोङ देता है ।

कामी क्रोधी लालची इनसे भक्ति न होय । भक्ति करे कोई सूरमा जाति वर्ण कुल खोय ।

अतः काम जीवन के वास्तविक लक्ष्य मोक्ष के मार्ग में सबसे बङा शत्रु है । अतः इसे वश में करना बहुत आवश्यक ही है ।

हे धर्मदास ! इस कराल विकराल काम को वश में करने का अब उपाय भी सुनो । जब काम शरीर में उमङता हो ।

या कामभावना बेहद प्रबल हो जाये । तो उस समय बहुत साबधानी से अपने आपको बचाना चाहिये । इसके लिए स्वयँ के विदेह रूप को या आत्मस्वरूप को विचारते हुये सुरति (एकाग्रता) वहाँ लगायें । और सोचें कि मैं ये शरीर नहीं हूँ । बल्कि मैं शुद्ध चैतन्य आत्मस्वरूप हूँ । और सत्यनाम तथा सदगुरु (यदि हों) का ध्यान करते हुये विषैले काम रस को त्यागकर सत्यनाम के अमृतरस का पान करते हुये इसके आनन्ददायी अनुभव को प्राप्त करे ।

हे धर्मदास ! काम शरीर में ही उत्पन्न होता है । और मनुष्य अज्ञानवश स्वयँ को शरीर और मन जानता हुआ ही इस भोग विलास में प्रवृत होता है । जब वह जान लेगा कि वह 5 तत्वों की बनी ये नाशवान जड देह नहीं है । बल्कि विदेह अविनाशी शाश्वत चैतन्य आत्मा है । तब ऐसा जानते ही वह इस काम शत्रु से पूरी तरह से मुक्त ही हो जायेगा ।

मनुष्य शरीर में उमडने वाला ये काम विषय अत्यन्त बलबान और बहुत भयंकर कालरूप महाकठोर और निर्दयी है । इसने देवता मनुष्य राक्षस ऋषि मुनि यक्ष गंधर्व आदि सभी को सताया हुआ है । और करोंङो जन्मों से उनको लूटकर घोर पतन में डाला है । और कठोर नरक की यातनाओं में धकेला है । इसने किसी को नहीं छोङा । सबको लूटा है ।

लेकिन जो संत साधक अपने ह्रदय रूपी भवन में ज्ञान रूपी दीपक का पुण्य प्रकाश किये रहता हो । और सदगुरु के सार शब्द उपदेश का मनन करते हुये सदा उसमें मगन रहता हो । उससे डरकर ये कामदेव रूपी चोर भाग जाता है ।

जो विषया संतन तजी मूढ ताहे लपटात । नर ज्यों डारे वमन कर श्वान स्वाद सो खात ।

कबीर साहब ने ये दोहा नीच काम के लिये ही बोला है । इस काम रूपी विष को जिसे संतों ने एकदम त्यागा है । मूरख मनुष्य इस काम से उसी तरह लिपटे रहते हैं । जैसे मनुष्यों द्वारा किये गये वमन यानी उल्टी या पल्टी को कुत्ता प्रेम से खाता है ।

आत्मस्वरूप परमात्मा का वास्तविक नाम विदेह है

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! जब तक देह से परे विदेह नाम का ध्यान होने में नहीं आता । तब तक जीव इस असार संसार में ही भटकता रहता है । विदेह ध्यान और विदेह नाम इन दोनों को अच्छी तरह से समझ लेता है । तो उसके सभी संदेह मिट जाते हैं ।

जब लग ध्यान विदेह न आवे । तब लग जिव भव भटका खावे ।

ध्यान विदेह और नाम विदेहा । दोउ लखि पावे मिटे संदेहा ।

मनुष्य का 5 तत्वों से बना यह शरीर जङ परिवर्तनशील तथा नाशवान है । यह अनित्य है । इस शरीर का एक नाम रूप होता है । परन्तु वह स्थायी नहीं रहता । राम कृष्ण ईसा लक्ष्मी दुर्गा शंकर आदि जितने भी नाम इस

संसार में बोले जाते हैं । ये सब शरीरी नाम हैं । वाणी के नाम हैं ।

लेकिन इसके विपरीत इस जड़ और नाशवान देह से परे उस अविनाशी चैतन्य शाश्वत और निज आत्मस्वरूप परमात्मा का वास्तविक नाम विदेह है । और ध्वनि रूप है । वही सत्य है । वही सर्वोपरि है । अतः मन से सत्यनाम का सुमरन करो । वहाँ दिन रात की स्थिति तथा प्रथ्वी अग्नि वायु आदि 5 तत्वों का स्थान नहीं है । वहाँ ध्यान लगाने से किसी भी योनि के जन्म मरण का दुख जीव को प्राप्त नहीं होता । वहाँ के सुख (ध्यान में मिलने वाला) आनन्द का वर्णन नहीं किया जा सकता । जैसे गूँगे को सपना दिखता है । वैसे ही जीवित जन्म को देखो । जीते जी इसी जन्म में देखो ।

हे धर्मदास ! ध्यान करते हुये जब साधक का ध्यान क्षण भर के लिये भी विदेह परमात्मा में लीन हो जाता है । तो उस क्षण की महिमा आनन्द का वर्णन करना असंभव ही है । भगवान आदि के शरीर के रूप तथा नामों को याद करके सब पुकारते हैं । परन्तु उस विदेह स्वरूप के विदेह नाम को कोई विरला ही जान पाता है ।

जो कोई चारों युगों सतयुग त्रेता द्वापर कलियुग में पवित्र कही जाने वाली काशी नगरी में निवास करे । नैमिषारण्य बद्रीनाथ आदि तीर्थों पर जाये । और गया द्वारका प्रयाग में स्नान करे । परन्तु सार शब्द (निर्वाणी नाम) का रहस्य जाने बिना वह जन्म मरण के दुख और बेहद कष्टदायी यमपुर में ही जायेगा । और वास करेगा ।

हे धर्मदास ! चाहे कोई 68 तीर्थों मथुरा काशी हरिद्वार रामेश्वर गंगासागर आदि में स्नान कर ले । चाहे सारी प्रथ्वी की परिक्रमा कर ले । परन्तु सार शब्द का ग्यान जाने बिना उसका भ्रम अग्यान नहीं मिट सकता ।

हे धर्मदास ! मैं कहाँ तक उस सार शब्द के नाम के प्रभाव का वर्णन करूँ । जो उसका हँसदीक्षा लेकर नियम से उसका सुमरन करेगा । उसका मृत्यु का भय सदा के लिये समाप्त हो जायेगा ।

सभी नामों से अदभुत सत्यपुरुष का सार नाम सिर्फ़ सदगुरु से ही प्राप्त होता है । उस सार नाम की डोर पकड़कर ही भक्त साधक सत्यलोक को जाता है । उस सार नाम का ध्यान करने से सदगुरु का वह हँस भक्त 5 तत्वों से परे परम तत्व में समा जाता है । अर्थात वैसा ही हो जाता है ।

विदेह स्वरूप सार शब्द

कबीर साहब बोले - हे धर्मदास ! मोक्ष प्रदान करने वाला सार शब्द विदेह स्वरूप वाला है । और उसका वह अनुपम रूप निःअक्षर है । 5 तत्व और 25 प्रकृति को मिलाकर सभी शरीर बने हैं । परन्तु सार शब्द इन सबसे भी परे विदेह स्वरूप वाला है ।

कहने सुनने के लिये तो भक्त संतो के पास वैसे लोकवेद आदि के कर्मकांड उपासना कांड ज्ञानकांड योग मंत्र आदि से सम्बन्धित सभी तरह के शब्द हैं । लेकिन सत्य यही है कि सार शब्द से ही जीव का उद्धार होता है । परमात्मा का अपना सत्यनाम ही मोक्ष का प्रमाण है । और सत्यपुरुष का सुमिरन ही सार है ।

बाह्य जगत से ध्यान हटाकर अंतर्मुखी होकर शांत चित्त से जो साधक इस नाम के अजपा जाप में लीन होता है । उससे काल भी मुरझा जाता है । सार शब्द का सुमरन सूक्ष्म और मोक्ष का पूरा मार्ग है । इस सहज मार्ग पर शूरवीर होकर साधक को मोक्ष यात्रा करनी चाहिये ।

हे धर्मदास ! सार शब्द न तो वाणी से बोला जाने वाला शब्द है । और न ही उसका मुँह से बोलकर जाप किया जाता है । सार शब्द का सुमरने करने वाला काल के कठिन प्रभाव से हमेशा के लिये मुक्त हो जाता है । इसलिये इस गुप्त आदि शब्द की पहचान कराकर इन वास्तविक हँस जीवों को चेताने की जिम्मेवारी तुम्हें मैंने दी है ।

हे धर्मदास ! इस मनुष्य शरीर के अंदर अनंत पंखुड़ियों वाले कमल हैं । जो अजपा जाप की इसी डोरी से जुड़े हुये हैं । तब उस बेहद सूक्ष्म द्वार द्वारा मन बुद्धि से परे इन्द्रियों से परे सत्य पद का स्पर्श होता है । यानी उसे प्राप्त किया जाता है ।

शरीर के अन्दर स्थित शून्य आकाश में अलौकिक प्रकाश हो रहा है । वहाँ आदि पुरुष का वास है । उसको पहचानता हुआ कोई सदगुरु का हँस साधक वहाँ पहुँच जाता है । और आदि सुरति (मन बुद्धि चित्त अहम का योग से एक होना) वहाँ पहुँचाती है ।

हँस जीव को सुरति जिस परमात्मा के पास ले जाती है । उसे " सोहंग " कहते हैं । अतः हे धर्मदास ! इस कल्याणकारी सार शब्द को भलीभांति समझो ।

सार शब्द के अजपा जाप की यह सहज धुनि अंतर आकाश में स्वतः ही हो रही है । अतः इसको अच्छी तरह से जान समझकर सदगुरु से ही लेना चाहिये । मन तथा प्राण को स्थिर कर मन तथा इन्द्रिय के कर्मों को उनके विषय से हटाकर सार शब्द का स्वरूप देखा जाता है । वह सहज स्वाभाविक ध्वनि बिना वाणी आदि के स्वतः ही हो रही है । इस नाम के जाप को करने के लिये हाथ में माला लेकर जाप करने की कोई आवश्यकता ही नहीं है । इस प्रकार वेदेह स्थित में इस सार शब्द का सुमरन हँस साधक को सहज ही अमरलोक सत्यलोक पहुँचा देता है । सत्यपुरुष की शोभा अगम अपार मन बुद्धि की पहुँच से परे है । उनके एक एक रोम में करोंडो सूर्य चन्द्रमा के समान प्रकाश है । सत्यलोक पहुँचने वाले एक हँस जीव का प्रकाश सोलह सूर्य के बराबर होता है ।